मासिक पत्र "संगीत" का विशेषांक
नृत्य अंक
इस अंक के सम्पादक
श्री० गणेशप्रसाद द्विवेदी एम० ए० एल० एल० बी०
री-फरवरी
वार्षिक २)
इस अंक का १)
काशक-संगीत कार्यालय हाथरस.

दर्शन

(क)

विषय-सूची

(नृत्याङ्क, जनवरी—फरवरी १९४१)

(नृत्याङ्क, जनवरी--फरवरी १९४१)

※ निराशों के साथ हमारी दिली हमदर्दी ※

तिला मस्ताना (रजिस्टर्ड)

आयुर्वेद ग्रन्थ समुद्र को भली भांति मथकर, अनेकों वर्ष के अकथ परिश्रम के बाद न जाने कितनी छानबीन कर शेर, सांड़े रीछ की चर्बी तथा सैकड़ों जंगली जड़ी बूटियों के योग से रोगग्रस्त बन्धुओं के लाभार्थ "तिला मस्ताना" का आविष्कार किया है। हमारा दावा है कि पिछले बीस वर्षों से आज तक इसके जोड़ की गुणकारी औषधि और कोई नहीं ईजाद हुई।

जो लोग बाल्यावस्था के समय कुसंगत के कारण हस्त क्रिया आदि दुर्व्यसनों में फंस जाते, अथवा युवावस्था में अधिक लोलुपता के कारण दिन रात स्त्री चिन्तन करते रहते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि गर्भाधान-क्रिया उचित रूप से करने योग्य नहीं रहते। इतना ही नहीं, इससे उनकी निरपराध स्त्रियां भी अनेकों रोगों में ग्रसित होजाती हैं। पुरुषों में ऐसे अनेक दोष हैं जो बिना लगाने वाली दवा के अच्छे नहीं होते। तिला मस्ताना के लगाने से बाल्यावस्था की कुटेव से इन्द्री कमजोर पड़ जाना, नसों की कमजोरी, सुस्ती, हस्तक्रिया से पैदा हुई खराबियां वा नसों का गर्भाधान क्रिया के योग्य न रहना आदि सारी शिकायतें एक दम दूर हो जाती हैं। इसके इस्तेमाल से एक ही हफ्ते के अन्दर नपुन्सकता, शिथिलता एवं शीघ्रपतन तमाम खराबियां छूमन्तर हो जाती हैं। कद व बल को बढ़ाकर रंग व पट्ठों में बिजली की भांति ताकत भर जाती है। हर मौसम में समान रूप से फायदा पहुँचता है। आप भी आज ही एक शीशी मंगाकर संसार का सुख लूटिये। विश्वास रखें आपका पत्र-व्यवहार एक दम गुप्त रखा जायगा। मूल्य फी शीशी २॥), दो रुपया आठ आना दो शीशी ४॥), तीन शीशी ६) डाक खर्च माफ, मनिआर्डर फीस ≠)

पता—रूपबिलास कम्पनी नं० ४१२, कानपुर।

मधुमेह (डाईबटीज) की सहस्रानुभूति

※—दवाई—※

नवरस वटी (रजिस्टर्ड)

प्रिय पाठक! मधु मेह जैसे दुसाध्य रोग को निर्मूल करने के लिये नवरस वटी अमृत के समान सिद्ध हुई हैं इनके कुछ दिन सेवन करने से नित्य के लिये रोग शान्त हो जाता है २० तरह के प्रमेहों (जरयानों) को हवा की तरह उड़ा देती हैं, ४० गोलियों की शीशी का दाम ५) डा० म० अलग।

संगीतकला विशारद एक मदरासी साधुका

—प्रेम प्रसाद—

※ स्वर सोधनी गुटिका ※

संगीत प्रेमी महानुभाव अपने कण्ठ स्वर को निर्मल एवं कोकिलानुरूप बनाने के लिए एकबार परीक्षा के तौर पर अवश्य मंगाकर सेवन करें कीमत लागत मात्र ४० गोली १।) डा० म० अलग

—खुश खबरी—

सफेद कोढ़ और श्वांस का धर्मार्थ शर्तिया इलाज होता है जरूरतमन्द भाई फाइदा उठावें।

सरजीवन आयुर्वेदिक फामसी (रजिस्टर्ड) गंगोह, (सहारनपुर) यू० पी०

बा० प्रभूलाल जी गर्ग के लिये ला० मदनलाल ख्यालीराम के अग्रवाल इलैक्ट्रिक, मशीन प्रेस हाथरस में पं० हरप्रशाद द्वारा मुद्रित ।

नृत्यअङ्क

साहित्यसङ्गीतकला विहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः ।

जनवरी, फरवरी १९४१ | सम्पादक—प्रभूलाल गर्ग | वर्ष ७ संख्या १-२ पूर्ण संख्या ७३-७४

वह नृत्य

("उमेश" चतुर्वेदी साहित्य भूषण, कविरत्न)

अब कब होगा वह नृत्य नाथ ?
जिसके प्रभाव से तीन लोक चौदहों भुवन भी नाच उठें।
खल कांपें, विश्व प्रेम फैले, हो जायँ भक्त कृतकृत्य नाथ ॥
अब कब होगा वह नृत्य, नाथ ?
जब भस्मासुर मदमत्त हुआ, शिव शंकर से यह वर पाकर।
"हो जाये भस्म वही, रखदे—वह अपना कर जिसके सर पर" ॥१॥
अपने वर दायक शिव को ही, वह दुष्ट भस्म करने धाया।
उस समय तुम्हीं ने तो शिव की, रक्षा हित नाटक दिखलाया ॥२॥
मोहिनी रूप धारण करके, जब भस्मासुर के पास गये।
मोहित उसको कर लिया, दिखाकर सुन्दर मनहर नृत्य नये ॥३॥
हो गया असुर उन्मत्त नाचने, लगा शीश पर कर रखकर।
वरदान हुआ अभिशाप उसे, हो गया भस्म वह रजनीचर ॥४॥
ऐसा अनुपम ! ऐसा अद्भुत !! अब कब होगा वह नृत्य नाथ ?

सखीरी नाचूं मैं इसबार !

नाचूं मैं इस बार !
सखीरी नाचूं मैं इस बार !!
जल, थल नाचे गिरवर नाचे,
नाचे यह संसार ॥
सखीरी नाचूं............॥ १ ॥

सुमन खिलें कलियां मृदु डोलें,
उर की नव पंखड़ियाँ खोलें।
व्याकुल भौंरे गुन गुन बोलें,
जीवन में है प्यार ॥
सखीरी नाचूं............॥ २ ॥

कल कल करता जीवन झरना,
बहना नित बहते ही रहना ।
जग के लघु-लघु सुख दुःख सहना,
आशा का आधार ॥
सखीरी नाचूं............॥ ३ ॥

जड़ चेतन नाचे स्वर भर कर,
निखिल विश्व भी नाचे पलभर।
नाचूं मैं, नाचो तुम नटवर,
मधुर ताल झंकार ॥
सखीरी नाचूं............॥ ३ ॥

नाची थी मीरा मतवारी।
नाचे उसके संग गिरधारी ॥
प्यारी प्यारी छटा निराली।
हो जाऊं बलिहार ॥
सखीरी नाचूं............॥ ५ ॥

—श्रीमती तारादेवी पाण्डेय की १ कविता के आधार पर

प्राक्कथन

पिछले कई वर्षों से 'सङ्गीत' सङ्गीतकला की सेवा कर रहा है। हिन्दी में यह पत्र अपने विषय का अकेला ही है। अपने छः वर्ष के इस छोटे से जीवन में जो काम इसने किया है, उसे हम एक प्रकार से असाधारण कह सकते हैं। सङ्गीत के संसार में अब वह समय आगया है, जब कि इस विषय पर उत्तमोत्तम प्रकाशनों की आवश्यकता है। प्रान्तीय सरकारों ने संगीत को एक ऐच्छिक विषय नियत करके अपनी प्रगतिशीलता का परिचय दिया है। हाई स्कूल तक तो सभी इस विषय को ले सकते हैं। पर इन्टरमीडिएट में यू० पी० सरकार ने सिर्फ लड़कियों ही के लिये इसे एक विषय माना है। यह खेद की बात है। ललितकलाओं, विशेषकर संगीत के लिये लड़के लड़कियां दोनों ही को समान रूप से प्रोत्साहन मिलना चाहिये। बनारस की हिन्दू यूनिवर्सिटी में तो बी० ए० तक इसकी व्यवस्था की है। परन्तु वहां भी वही बात है—सिर्फ लड़कियों के लिये। इसके सिवा आये दिन यू० पी० के कई मुख्य शहरों में संगीत-कान्फ्रेंसें होती रहती हैं। इनमें होने वाली संगीत प्रतियोगिताओं द्वारा जनता में संगीत प्रचार का अच्छा सुअवसर मिल रहा है।

फिर सब से बड़ी बात यह है कि यह जातीय जागृति के दिन हैं। देश इस समय जातीय पुनरुत्थान के पथ पर है। चिरकाल से सोया हुआ राष्ट्र अंगड़ाइयां ले रहा है।

यह सब बड़े अच्छे लक्षण हैं। पर इसके लिये उपयुक्त साधनों की आवश्यकता है। पहले जिन उपायों से संगीत साधना होती थी, उनसे वर्तमान समय की आवश्यकताएँ हल नहीं होने की। तब एक उस्ताद एक ही शागिर्द तैयार करता था। पर उसे वह अपनी पूरी तस्वीर बनाकर छोड़ता था। अब सामूहिक रूप से संगीत की शिक्षा दी जा रही है। स्कूलों में संगीत और नृत्य के 'क्लास' लगते हैं। और कुछ लोग उस्तादों से ट्यूशन लेते हैं। कुछ थोड़े ऐसे लोग अब भी हैं जो वर्षों किसी एक गुरु की शरण में पड़े रहकर प्राचीन पद्धति के अनुसार संगीत-साधना कर रहे हैं। पर ऐसे लोगों की संख्या नगण्य है। और ऐसे लोग जो हैं भी वह पुराने घरानेदार उस्तादों के होनहार पुत्र या पुत्रवत् प्रिय-शिष्य हैं; पर यह आधुनिक सुशिक्षित और प्रगतिशील जनता से बिलकुल अलग हैं। प्रश्न तो इस समय शिक्षित वर्ग के बच्चों को सामूहिक रूप से संगीत शिक्षा का है।

ऐसी स्थिति में यह स्पष्ट है कि वर्तमान परिस्थिति में संगीत की सार्वजनिक शिक्षा के लिये सबसे प्रधान आवश्यकता है—पुस्तकें। शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों के लिये संगीत विषयक उपयोगी साहित्य की जरूरत है।

कंठ सङ्गीत के लिये स्व० भातखण्डे तथा महात्मा विष्णुदिगम्बर के प्रयास फलस्वरूप अच्छे परिमाण में साहित्य उपलब्ध है। अपनी अपूर्व प्रतिभा, तथा असाधारण स्वरतान के बल से भातखण्डे जी सहस्रों पुराने ख्यालों की स्वरलिपि पुस्तकाकार देगये। इनको सिर्फ दो एक बार सुनकर ही इनकी शुद्ध स्वरलिपि कर डालना

एक कल्पनातीत बात मानी जा सकती है ! पर इन्होंने किया ऐसा ही। आज हम बहुधा पुराने उस्तादों को यह कहते हुये पाते हैं कि उक्त दोनों महापुरुषों की दी हुई स्वरलिपियां गलत हैं। और यदि इन्हें माध्यम (स्टैंडर्ड) मानकर सङ्गीत शिक्षा होती रही तो कुछ ही दिनों में सङ्गीत पद्धति ही बदल जायगी, और सभी राग बेसुरे होजांयगे। यहां इस विषय पर प्रकाश डालने का स्थान नहीं है पर तो भी कह सकते हैं कि इतना चिंतित होने का कोई कारण नहीं है।

ख़ैर अब नृत्य की ओर आइये। जब कण्ठ और तन्त्र सङ्गीत सम्बन्धी साहित्य का ही इतना अभाव है तो नृत्य के बारे में क्या कहें। सितार या हारमोनियम बजाने की कुछ किताबें बाज़ार में हैं भी। पर नृत्य सिखाने वाली किसी पुस्तक का विज्ञापन हमने अभीतक नहीं देखा।

जो हो, सारांश यह कि नृत्य के सम्बन्ध में हमारे यहां अभीतक कोई साहित्य नहीं है। यह एक कटु सत्य है।

ऐसी अवस्था में संगीत के यशस्वी संचालक श्री० गर्गजी ने 'नृत्यअङ्क' निकालने का निश्चय कर मुझे इसका सम्पादन भार सौंपा, तब मैं बड़े असमञ्जस में पड़ गया। अव्वल तो मैं इस कला का व्यवहारिक ज्ञान नहीं रखता, अर्थात् मैं स्वयं नर्तक नहीं हूं, फिर जो लोग इसका व्यवहारिक ज्ञान रखते हैं, वह लिखने पढ़ने की दुनियां से दूर हैं। ऐसी अवस्था में उचित तो यही था कि मैं अज्ञान की दुहाई देता हुआ, 'गर्ग जी' से इसके लिये माफी मांग लेता। पर ऐसा उन्होंने न करने दिया और मोहवश यह दुःस्साहस-पूर्ण काम अपने सिर लेना ही पड़ा।

मुझे अपने मित्रों का भरोसा था। सब से बड़ा भरोसा मुझे 'श्री आशा ओझा' का था। मुझे विश्वास था कि आपके जरिये मुझे इनके बहुसंख्यक ख्यातनामा उस्तादों की कुछ चीजें मिल जाँयगी। पर अदृश योग से मेरी यह आशा निराशा में परिणत हुई।

इसका प्रधान कारण यह हुआ कि सम्पादन कार्य शुरू करने के बाद से ही श्री आशा जी अस्वस्थ रहीं और फ़ुरसत पाते ही कान्फ्रेंसों की वह बाढ़ शुरू हुई कि उनको दम लेने तक की फ़ुरसत नहीं। एकबार मेरे नितान्त आग्रह करने पर कि आप अपने उस्तादों से ही कुछ चीजें लिखवाकर मँगा दीजिये। उन्होंने नैराश्य सूचक हँसी के साथ सिर्फ यही कहा कि उन लोगों के लिये तो "काला अक्षर भैंस बराबर" वह विचारे क्या लिखेंगे।

मेरा माथा ठनका ! ख़ैर, कुछ लेख आगये थे और कुछ अपरिचित लोगों ने मेरा बड़ा उत्साह बढ़ाया ! लखनऊ के एक सज्जन ने यहां तक लिखा कि मेरे पास इतना मसाला है कि एक क्या बीस 'नृत्यअङ्क' अकेला भरदूंगा, आप घबराइये नहीं ! पर उन्हीं सज्जन से जब मैंने प्रख्यात गुणी श्री अच्छन और शम्भू महाराज की कला पर लेख और उनके घराने के कुछ बोल माँगे तो वे किनारा कर गये।

पर जो कुछ भी हो इन असाधारण कठिनाइयों के होते हुये भी मुझे कुछ बोल मिल ही गये। इस सम्बन्ध में सब से बड़ी सहायता तो हमारे योग्य मित्र श्री वेणी-

प्रसाद जी (भाई) से मिली इन्होंने कल्पनातीत परिश्रम के साथ लखनऊ घराने के कुछ बोल मय परनों के चतुर्विधि नोटेशन तैयार किये।

'चतुर्विधि' से हमारा मतलब हैः—१—नाच के बोल, २—तदनुरूप तबले के बोल, ३—तदनुरूप लहरे के सरगम, ४—तदनुरूप मात्रा विभाग और 'तत्कार'। यह संगीत संबन्धी साहित्य की दुनियां में एक सर्वथा नवीन प्रयास है और भविष्य में कथक नृत्य की स्वरलिपि इसी पद्धति का अवलंबन करेगी ऐसा मेरा अनुमान है।

हां तो 'भाई' जीने तिताले का पूरा नाच स्वयं और झपताले का नृत्य अपने एक शिष्य द्वारा पूरे चतुर्विधि नोटेशन के साथ तैयार कराया।

मुश्किल यह है कि सङ्गीत के दो अङ्ग गायन और वादन सुनने सुनाने की चीजे हैं, पर तीसरा अङ्ग–नृत्य देखने की ही वस्तु है। इसको न अभीतक कोई 'रेकार्ड' कर सका और न रेडियो वाले ही इसके प्रदर्शन या तालीम की कोई पद्धति निकाल सके। यह तो प्रत्यक्ष ही संभव हैं। ऐसी अवस्था में इसका पूरा टेकनीक लिखकर व्यक्त करना और बोलों के पूरे नोटेशन लिपिवद्ध करना एक सर्वथा मौलिक प्रयास है। इनके सिवा कथक नृत्य संबंधी कुछ महत्वपूर्ण 'तत्कार' और लेख सरदार सुन्दर सिंह जी 'विश्वयात्री' तथा अन्य विद्वानों के भी आते गये। जो सब इस अङ्क में दिये जारहे हैं!

हमने जो विषय सूची इस अङ्क के लिये तैयार की थी, इस में से अधिकतर लेख नहीं आ सके। एक तो कुल दो महीने का समय भी लेख संग्रह के लिये मुश्किल से मिला। इस प्रकार के विशेषांक की तैयारी कम से कम साल भर पहले से करनी चाहिये। पर तो भी जैसा है, पाठकों के सामने है।

आधुनिक नृत्य (जिसको भ्रमवश 'ओरियंटल' कहा जाता है) पर विशेष सहायता हमें श्री प्रजेश बैनर्जी द्वारा मिली। आपके जरिये इस संबन्ध में कई लेख और नृत्य रचनायें मिलीं और इस अङ्क की सफलता के लिये हम आपके विशेष रूप से कृतज्ञ हैं। इस विषय के कई और लेख हमारे पास आये पर ये सब अङ्गरेजी में हैं और इन सबको हिंदी में अनुवाद करने में ही दो महीने लग जाते! तमाशा यह है कि कथक नृत्य के उस्तादों के लिये 'काला अक्षर भैंस बराबर' है और ओरियंटल वाले सब बहुत बड़े लोग हैं जिनके लिये हिंदी 'ग्रीक' है। ये लोग अङ्गरेजी में ही लिख सकते हैं, लिखना क्या ये सोचते भी अङ्गरेजी में ही हैं !!

ऐसी अवस्था में हमारी कठिनाइयों का सहज ही अनुमान किया जा सकता है। पर यह होते हुए भी मैंने कोई भरती का मैटर या कोई अप्रसांगिक लेख इस अङ्क में नही दिया है।

अच्छा तो फिर इस अङ्क में है क्या ?

नृत्य की ओर जनता की रुचि बढ़ने के साथ ही एक अच्छी धाँधली भी शुरू हो गई। वास्तविक भारतीय नृत्य होता कैसा है, या इसे कैसा होना चाहिये, इसको बहुत कम लोग जानते हैं। और सर्वसाधारण के इस अज्ञान से कुछ चलते लोगों ने

भरपूर लाभ उठाया। इस कलात्मक जागृति के पहले नृत्य के नाम पर हमारे देश में बाई जी नृत्य और कुछ लोक नृत्य रह गये थे। ब्याह, शादी आदि के मौकों पर वेश्याओं का कहरवा नृत्य या भांड़ों या ज़नखों के अश्लील नाच से लोग परिचित थे। अब जब असली नृत्य की तलाश हुई तो सबसे पहले इन वेश्याओं के उस्ताद-कथक लोगों का पता चला। इन लोगों के पास काफी इल्म था। वेश्याओं को ये कहरवा की दो एक चालें और कुछ भाव के काम और उनकी गतें बता देते थे, जैसे बाँसुरी की गत, तीर मारने की गत, घूँघट के ओट वाली गत, पनघट वाली गत, ग्वालिन की गत, जो दही बेचने चली थी और अचानक कान्हा से राह में छेड़ छाड़ हुई और उसकी मटकिया चूर चूर हो गई, और छीना झपटी में कलाई मसक गई या चूड़ियां करक गईं बस! यही इतना ये सिखलाते थे और चार पैसे कमाने के लिये इतने की जरूरत ही थी। और अधिकांश कथकों को भी यही मालूम है। तालों के कठिन नाच और बड़े बड़े, तोड़े, परन, मोहरे, उठान और घूंघरे से तबले या मृदंग की पूरी करामात तो बहुत थोड़े कथकों को ही मालूम है, और जिनको मालूम है भी, वह ईमानदारी से किसी को बताते नहीं। एक बार प्रख्यात शंभू महाराज ने हमारे यहां (प्रयाग यूनिवर्सिटी) की कान्फरेंस में नाचते समय दीगर कथकों के नाच की बड़ी कटु आलोचना कर डाली थी। इन्होंने साफ कह डाला कि "हमारे बाप दादों ने इन सबको असली तालीम थोड़े ही दी है। इनको तो सिर्फ कमाने खाने लायक बना दिया ग ल चीज सिर्फ हमारे पास है।" इतना कहकर उन्होंने तुलनात्मक रूप से वही गतें बताईं जो आमतौर से लोग बनाते फिरते हैं और वाहवाही भी पाते हैं, और उन्हें असल में कैसा होना चाहिये। बाँसुरी की गत सबसे ज्यादा प्रचलित हैं। शंभू महाराज ने स्पष्ट करके दिखाया कि आमतौर से लोग बाँसुरी गलत पकड़ते हैं और कोई इसको 'मार्क' नहीं करता।

इन बातों को कहते समय शम्भू महाराज ने कथकी तालीम का भण्डाफोड़ तो किया ही, साथ ही अपने घराने का भी एक भयानक रहस्योद्घाटन कर दिया जिसके लिये बाद में वे पछताये बिना रह न सके होंगे।

शम्भू महाराज के पिता स्व० कालिका महाराज और चाचा स्व० बिंदादीन महाराज इस कला के अन्यतम आचार्य होगये हैं, और उन्हीं की शिक्षा परम्परा के बहुसंख्यक कथक लोग इसकी तालीम दे रहे हैं। इनकी लयदारी आश्चर्य जनक है। लय के ये निस्संदेह बादशाह होते हैं। इन में से एक (जगन्नाथ) को मैंने देखा था कि वह नाचता जा रहा है, और बरजस्ता जिस मात्रे पर आप उंगली उठा दीजिये, वहीं से तिहाई मारकर सम पर आसकता था। तिहाइयाँ, आमतौर से बंधी हुई होती हैं। हर मात्रे से भी तिहाइयां बंध सकती हैं। पर नाच चल रहा है, और यकायक आपने उँगली उठाई और वहीं से टुकड़ा तैयार, यह लय पर असाधारण नियन्त्रण का परिचायक है।

सीताराम जयलाल, मोहनलाल, सोहनलाल, नरायन, कार्तिक, कल्यान, जगन्नाथ और गौरशङ्कर यही प्रधान और अग्रगएय कथक नर्तक हैं।

जहांतक हमें पता है यह सभी कालका, विंदा महाराज को अपना गुरुघराना मानते हैं और वर्तमान प्रतिनिधि अच्छन और शम्भू महाराज हैं जो सौभाग्य से वर्तमान हैं।

उत्तर भारत में इस नृत्यकला के तीन मुख्य केन्द्र हैं-लखनऊ, जयपुर और रामपुर दरबार। रामपुर के स्व० नवाब साहब ने असेंतक अच्छन महाराज को अपने यहां रक्खा था।

लखनऊ के स्व० नवाब वाजिदअली इस कला के प्राण थे। विंदादीन महाराज के चाचा स्व० ठाकुरप्रसाद जी इनके गुरु थे और दरबार में बराबर का आसन पाने के अधिकारी थे।

कथक नृत्य के सिवा जो दूसरे प्रकार के नृत्य का प्रचार आजकल हो रहा है वह साधारणतः 'ओरियन्टल' (प्राच्य पूर्वीय) डान्स कहलाता है। इसे आधुनिक या माडर्न डांस भी कहते हैं। पर वास्तव में यह कथक से कहीं अधिक पुराना है। इसे 'पौराणिक' कहना ज्यादा ठीक इस लिये होगा कि इनकी रचना पौराणिक कथाओं के आधार पर होती है, और इस दृष्टि से इसे आधुनिक कहना भी ठीक नहीं।

इनको 'क्लासिकल' कहना इस लिये असङ्गत होसकता है कि इनकी सेटिंग सोलहोआने पाश्चात्य टेकनीक के अनुसार होती है। मानों विलायती फ्रेम में कोई पौराणिक चित्र मढ़ दिया गया हो। ड्रेस, मेक-अप, आर्केष्ट्रा, लाइट आदि सभी बातों में पाश्चात्य मुलम्मा स्पष्ट है। केवल कथा का आधार पौराणिक होता है। जैसे उर्वशी का तालभङ्ग, कार्तिकेय, ऊषा अनिरुद्ध आदि।

इस प्रकार के नृत्यों का प्रचार डा० टैगोर और श्री उदयशङ्कर की प्रतिभा से हुआ। श्री उदयशङ्कर को आज असाधारण सफलता मिल रही है। अभी हाल में इनके 'रिदम आफ़ लाइफ़' (जीवन की लय) नामक नृत्य की अन्तराष्ट्रीय ख्याति हो रही थी, कि अभी-अभी इनकी 'लेवर एएड मेशीनरी' (श्रम और मशीन) नामक अत्याधुनिक रचना ने सांस्कृतिक क्षेत्रों में तहलका मचा दिया है। इसमें कला और राजनीति का सुखद सम्मिश्रण करने का प्रथम और सफल प्रयास हुआ है।

पर मार्के की बात यह है कि इस तथाकथित ओरियएटल-डांस को कथक नृत्य के मुकाबिले में टिकने की गुञ्जायश नहीं मिल रही है। कलकत्ता, जहां से इस कला का प्रचार शुरू हुआ, वहीं इसकी लोकप्रियता नष्ट होती जा रही है। 'ऑल बङ्गाल म्यूज़िक कांन्फ्रेंस' में इसके लिये स्थान नहीं है। वहां तो शम्भू महाराज ही की पूजा होती है।

तथ्य यह है कि वर्तमान समय में कथक और ओरियन्टल में एक प्रकार का भीषण जीवन संघर्ष उपस्थित हो गया है। एक के पक्ष में शास्त्र और शास्त्रीय राग तथा तालों का ठोस आश्रय है, और दूसरे पक्ष में केवल टैगोर और उदयशङ्कर का असाधारण व्यक्तित्व कल्पना और रस-बोध। यथासमय कोई एक दूसरे को ले मरेगा।

कुछ लोग कथक-नृत्य को 'क्लासिकल' (शास्त्रीय) कहे जाने पर आश्चर्य सा करते हैं। मैं कहता हूं कि इसका सरल उत्तर यह है कि कथक-नृत्य का आधार शास्त्रीय ताल और राग हैं। यदि तृताल, झपताल, चौताल आदि ताल तथा भैरव, भैरवी आदि राग शास्त्रीय या क्लासिकल हैं तो कथक-नृत्य निश्चय ही क्लासिकल है। हमारे क्लासिकल संगीत की जान 'लय और ताल' है, और यह ताल ही कथक-नृत्य का सर्वस्व है, जिनका अभाव ओरियन्टल में स्पष्ट है। ओरियन्टल की जान है मूर्तिकला या स्कल्पचर। यह चित्रकला या मूर्तिकला के अधिक निकट है, बनिस्बत संगीतकला के।

कुछ लोग बूढ़े भरतमुनि की दुहाई न जाने क्यों ख़ामख़ाह अपने इस आधुनिक नृत्य के लिये देते फिरते हैं। ईसा से ५०० वर्ष पूर्व भरत ने अपना नाट्यशास्त्र लिखा था। उनकी जो मुद्राएं बताईं उनको सही तौर से व्यक्त करना या समझना भी असम्भव सा है। बड़ौदा में इसका एक सटीक और सचित्र संस्करण 'खंडशः' छप रहा है।

'केरल कला मण्डलम्' के प्रवर्तक सुकवि 'वल्लथोल मेनन' से अर्सें तक विचार विनिमय का सुयोग मुझे हुआ था। कथकलि-नृत्य-पद्धति का जीर्णोद्धार इन्होंने किया है। पर इन्होंने स्पष्ट यह कहा कि भरत का आधार इस पद्धति में बहुत साधारण सा है। यह वास्तव में एक लोक नृत्य था, जो समय के फेर से लुप्त प्राय हो गया था, और जिसके पुनः प्रचार की चेष्टा ये कर रहे हैं।

इसी प्रकार गरबा (गुजरात) तथा मणिपुरी (आसाम) भी लोक-नृत्य (Folk dance) ही है, पर नितांत सुन्दर और कलापूर्ण होने ही के कारण इनका इतना आदर है।

चैती और कजली आदि की धुनें बड़ी मोहक होती हैं, पर उनका स्थान मालकोस, ललित, परज आदि चिरंतन रागों के ऊपर रखना या मुकाबिले में रखना अज्ञान का परिचायक होगा।

अन्त में मुझे देखना है कि क्या इस अङ्क से नृत्य के सम्बन्ध की वास्तविक जानकारी में कुछ सहायता मिल सकेगी? पर इसकी बहुसंख्यक त्रुटियों के लिये भी विवश होता हुआ, मैं अपने को उत्तरदायी समझता हूँ, और विशेष तौर से त्रुटि मार्जना की प्रार्थना करता हूं। उचित सुझाव के लिये मैं कृतज्ञ हूंगा।

प्रयाग न्यू-इयर्सडे १९४१ गणेशप्रसाद 'द्विवेदी'

प्राचीन हिन्दू नृत्य !

लेखक—श्री० गणेशप्रसाद द्विवेदी, एम० ए०, एल० एल० बी० सम्पादक (नृत्यअङ्क)

नृत्य का इतिहास कदाचित् उतना ही प्राचीन है जितना मनुष्य जाति का। इसमें कोई संदेह नहीं कि नृत्य मानव-जीवन का एक अंगविशेष है। आदिम मनुष्य से लेकर आज तक प्रत्येक जाति तथा प्रत्येक देश के मनुष्य के जीवन के साथ किसी न किसी रूप में नृत्य मिला हुआ है। अफ्रीका आदि देशों की बरबरतम जातियों के लोगों में तथा पक्षियों और पशुओं में भी, भिन्न-भिन्न रूपों में नृत्य का होना यह सिद्ध करता है कि यह कला नहीं प्रत्युत जीवन ही है। जहाँ जीवन की उमंग है, वहीं नृत्य है। कला के रूप में इस का सुसंस्कार सभ्य मनुष्य ने किया है। कोल, भील आदि जंगली जातियों तथा मयूर आदि पक्षियों को नाचना किसने सिखलाया था ? कौन कह सकता है कि इनके नृत्य में जीवन का आकर्षण नहीं है ? प्राणियों के अतिरिक्त जड़ प्रकृति के जीवन में भी नृत्य की कमी नहीं है। पहाड़ी झरनों और नदियों का द्रुत नृत्य, मैदानों की बड़ी नदियों की सौम्य गति में नृत्य का मादक प्रवाह कोई भी रसज्ञ अनुभव किए बिना नहीं रह सकता।

(शृंगार का भाव)

भारतीय नृत्य की प्राचीनता

कला के रूप में नृत्य का विकास मानव-समाज में सभ्यता के उदय के साथ आरंभ होता है। सब से पहले किस देश के निवासी सभ्य हुए, इस प्रश्न पर विचार करने का अवसर यह नहीं है। यहाँ पर हम केवल इतना ही कहेंगे कि भारत की सभ्यता यदि सबसे पुरानी न भी हो, तो भी बहुत पुरानी अवश्य है। ऋग्वेद के रचना-काल के कुछ पहले से ही भारतीय सभ्यता का उदय मानना पड़ेगा। ऋग्वेद का रचना-काल सभी विद्वानों द्वारा १५०० ई० पू० से पहले का ही माना जाता है। अस्तु, वेदों में भी नृत्य और नृत्य के साथ बजने वाले मृदंग, वीणा तथा वंशी आदि वाद्ययंत्रों के उल्लेख मिलते हैं। जैसे, 'नृत्यमानो अमृतः' (ऋक्, ५-३३-६) । यहाँ 'नृत्यमानो' का अर्थ भाष्यकार सायण ने 'नृत्यन्' किया है, अर्थात् 'नृत्य करते हुए देवता'। फिर एक स्थान पर 'जगाम नृत्यये' वाक्य मिलता है (ऋक्, १०-१८-३)। यहाँ पर सायण ने 'नृत्यये' का भाष्य 'नर्तनाय कर्मणि गात्रविक्षेपाय' किया है, जिसका अर्थ होता है 'नृत्यकर्म के लिए अंगविक्षेप' । इसी प्रकार एक स्थान पर 'नृतव'

(ऋक्, ८-२०-२२) शब्द आया है, जिसका पर्याय सायण ने 'नृत्यन्त' (नाचते हुए) किया है।

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि बर्बर जातियों अथवा पशु-पक्षियों के जीवन के उल्लासमूलक अंगविशेष से भिन्न कला के रूप में 'नृत्य' नाम की एक क्रिया विशेष से ईसा से २००० वर्ष पहिले आर्यगण परिचित थे।

नृत्यकला की उत्पत्ति और धर्म—

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि कलाओं का विकास धर्म के साथ-साथ हुआ। आदिम निवासी मनुष्य ने प्रकृति के नाना रूपों से डर कर उसे रिझाने के कुछ उपाय सोचे। भूकंप, ज्वालामुखी पर्वत, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मेघ, अग्नि, गर्मी, सर्दी, पाला ओले तथा तूफान आदि को उसने, अदृश्य असुरों का उत्पीड़न समझा। अब इनका प्रसन्न करने का उपाय करना आवश्यक था। फलतः मंत्र-तंत्र तथा विविध भावभंगी और हस्तपादादिक की अनेक मुद्राओं के साथ उनके उच्चारण करने वाले हुए। इनका विश्वास था कि इन क्रियाओं से उक्त असुर गण प्रसन्न होंगे और जीवों को कष्ट न देंगे। आदिकाल में इन्द्र, वरुण, मरुत आदि प्रकृति के विविध स्वरूपों की ही उपासना देवताओं के रूप में आरम्भ हुई! वेदों में अधिकतर इन्हीं की उपासना वर्णित है। धर्म का प्रारम्भिक रूप यही था। यह स्पष्ट है कि संगीत का विकास धर्म के विकास के साथ कुछ ऐसा घुला-मिला है कि दोनों की उत्पत्ति साथ ही माननी पड़ेगी। प्रारम्भिक धर्म के मूल में 'भय' था। इस भय के निवारण के लिये नाना प्रकार की मुद्राओं और गात्रविक्षेप के साथ कुछ विचित्र और दुरूह शब्दों या अक्षरों के उच्चारण की प्रथा चली। इसी प्रथा में हम गायन और नृत्य का प्रारम्भिक रूप देखते हैं। फिर क्रमशः मनुष्य के धार्मिक विचारों के विकास के साथ-साथ इन कलाओं का विकास भी हुआ। तन्त्र का विकास इतना अधिक हुआ कि उनके अलग शास्त्र रचे गये। उनके उच्चारण जिन मुद्राओं के साथ होते थे उनका भी वर्गीकरण किया गया। 'मुद्रा' शब्द फ़ारसी से आया हुआ कहा जाता है जिसका अर्थ होता है 'मुहर'। संस्कृत में 'मुद्रा' के कई अर्थ होते हैं जिन में 'मुहर' भी एक है। प्रत्येक मन्त्र का उच्चारण या गान एक विशेष मुद्रा के साथ होता है, और 'मुहर' वाला भाव भी यों चरितार्थ किया जा सकता है कि मुद्राएँ मानों अपने मन्त्रों पर मुहर या छाप लगा देती हैं। तन्त्रशास्त्र में 'मुद्रा' शब्द की व्युत्पत्ति 'मुद्' धातु से की गई है, जिसका अर्थ होता है 'प्रसन्न होना' या 'आनन्दित होना'। 'आमोद', 'प्रमोद' आदि शब्द इसी धातु से बने हैं। इसी के अनुसार 'तन्त्रसार' में मुद्रा की परिभाषा में कहा गया है कि 'मुद्रा' वह भङ्गी विशेष है जिससे देवताओं को आनन्द मिलता है, तथा जिससे उपासक पापों और काम, क्रोधादिक शत्रुओं से मुक्त होजाता है।

नृत्यकला का उत्कर्ष—

अब वेदों तथा तन्त्रों के युग के बाद जब त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) की साकार उपासना का युग आया, तथा धर्म के मूल में 'भय' के स्थान पर 'प्रेम', 'आनन्द'

तथा 'मोक्ष' आदि की स्थापना हुई, तब गायन और नृत्य में भी अनेक परिवर्तन हुये। और आगे चल कर 'शक्ति' तथा 'कृष्ण' आदि देवताओं की साकार उपासना-युग के आगमन काल तक, सङ्गीत कला भी उन्नति के शिखर पर पहुँच रही थी। इस समय तक सङ्गीत तथा नृत्य आदि के अनेक ग्रन्थ बन चुके थे। इस सम्बन्ध में भरत का 'नाट्यशास्त्र' सब से महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। 'अभिनयदर्पण' दूसरा प्रसिद्ध ग्रन्थ है। भरत का काल अभी तक बहुत संदिग्ध है। अधिकतर लोग भरत को बुद्ध के समय के कुछ पहले का मानते हैं, क्योंकि बौद्ध ग्रन्थों में भरत तथा उनके शास्त्र की चर्चा पाई गई है। आगे चल कर ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग धनञ्जय का 'दशरूपक' बहुत प्रसिद्ध हुआ। 'दशरूपक' और 'नाट्यशास्त्र' दोनों ही में नाटक तथा रस के विश्लेषण के साथ ही नृत्य की चर्चा हुई है; क्योंकि हिंदू नाटक पग-पग पर नृत्य की अपेक्षा करता है। नृत्य का विस्तृत विवरण 'नाट्यशास्त्र' में है और 'दशरूपक' में नाटक का।

नाट्य, नृत्य और नृत्त—
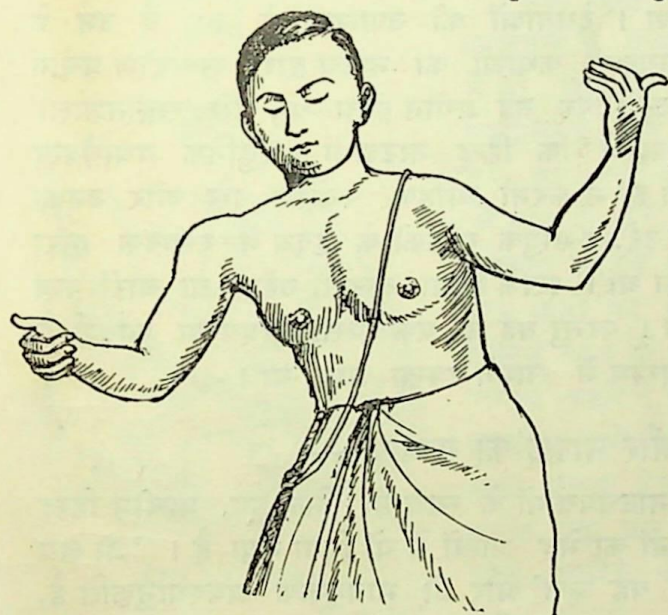
(करुणा का भाव)

अब यहाँ पर ध्यान देने की बात यह है कि हिंदू आचार्यों ने नृत्य के तीन विभाग किए हैं। नाट्य, नृत्त और नृत्य। तीनों ही नाट्य के अन्तर्गत माने गए हैं। किसी अवस्था विशेष के अनुकरण को नाट्य कहते हैं।[1] एक निर्दिष्ट समय तक अपनी वास्तविक सत्ता को सर्वथा भूलकर अपने आप को अनुकार्य की सत्ता में लीन कर देना ही नाट्य है। यह अवस्थानुकृति चारप्रकार के साधनों से कही गई है।

(१) अङ्गिक—हस्तपादादि इन्द्रियों के सञ्चालन द्वारा। इसी के अन्तर्गत मुद्राएँ आती हैं।

(२) वाचिक—स्वर, वाणी तथा भाषा का अनुकरण।

(३) आहार्य—वेश भूषा तथा स्वरूप का अनुकरण। यही आधुनिक 'मेकअप' है।

(४) सात्विक—स्तंभ, रोमांच आदि अनुकार्य के सात्विक भावों का अनुकरण। ये सात्विक भाव और कुछ नहीं, केवल अनुकार्य द्वारा अनुभूत सुख-दुख का अनुकरण

[1] अवस्थानुकृतिर्नाट्यं रूपं दृश्यतयोच्यते।
रूपकं तत्समारोपाद दशधैव रसाश्रयम्॥
दशरूपक, १-७

करना है। ये आठ माने गये हैं[१]—(१) स्तम्भ (अङ्ग सञ्चालन की शक्ति का लोप होना); (२) प्रलय (संज्ञा का लोप होना); (३) रोमांच (रोएँ खड़े होना); (४) स्वेद (पसीना); (५) वैवर्ण्य (रंग बदलना, जैसे अनुराग, क्रोध या भय आदि के कारण चेहरे का सुर्ख, सफ़ेद या पीला पड़जाना); (६) वेपथु (कंप या कँपकँपी पैदा होना); (७) अश्रु (रोना); (८) वैस्वर्य (कण्ठ स्वर में विकार या परिवर्तन हो जाना)।

सात्विक भावों के अतिरिक्त अभिनेता या अभिनेत्री को रस, भाव, विभाव, तथा अनुभावों तथा मुख्य चार प्रकार के नायक और बारह प्रकार की नायिकाओं तथा उनके समस्त शारीरिक, अयत्नज, और स्वभावज अलङ्कारों की अनुकरण क्रिया पर अधिकार प्राप्त करना आवश्यक होता था।

नृत्य का विषय—

यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि प्राचीन हिन्दू नृत्य पौराणिक कथाओं के नाट्य के साथ ही मिला हुआ था। आजकल 'नाच' से जो हम समझते हैं, वैसा उस समय कुछ नहीं था। देवताओं की उपासना के रूप में उन के सम्बन्ध की प्रसिद्ध तथा लोकाभिमहारी कथाओं का नाट्य द्वारा सर्वाङ्गीण प्रयोग रसिकों के सम्मुख होता था। जहां पर यह प्रयोग होता था, उसे 'सङ्गीतशाला' कहते थे। इस नाम से भी यह स्पष्ट है कि हिन्दू नाटक में आधुनिक यथार्थवाद के ढङ्ग की किसी वस्तु की आशा ही न करनी चाहिए, क्योंकि इस ओर उनका लक्ष्य ही न था। उनका केवल मात्र उद्देश्य भावुक रसिकों के हृदय में रसोद्रेक द्वारा लोकोत्तर आनन्द की प्राप्ति कराना था। इसके सिवा दूसरा उद्देश्य था चारों फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष,) की प्राप्ति। परन्तु यह तो एक ऐसा उद्देश्य या आदर्श है जो सदा हिन्दू के प्रत्येक कार्य के आरम्भ में सामने रक्खा जाता था।

हिन्दू नृत्य और नाटक का सम्बन्ध—

इन्हीं पौराणिक कथाओं के नाट्यप्रयोगों के साथ ही मिले हुए, प्राचीन हिन्दू 'नृत्य' और 'नृत्त' दोनों थे। इन दोनों का भेद शास्त्रों में यों दिया गया है। [२]जो लय और ताल-मूलक अवस्थानुकृति है, वह 'नृत्त' और जो भावमूलक अवस्थानुकृति है, वह 'नृत्य' है। इसी प्रकार रसमूलक अवस्थानुकृति 'नाट्य' है। स्मरण रहे कि 'अवस्थानुकृति' तीनों में साधारण है और तीनों के परस्पर पूर्ण सहयोग से ही 'नाटक' या 'रूपक' का प्रयोग सम्भव होता था। 'नाट्य' वास्तव में देखने की वस्तु है, इसीलिए

[१]सत्त्वादेव समुत्पतेस्तच्च तद्भावभावनम्।
स्तम्भप्रलयरोमाञ्चाः स्वेदो वैवर्ण्यवेपथू॥
अश्रुवैस्वर्यमित्यष्टौ स्तम्भोऽस्मिन्निष्क्रियाङ्गता।
प्रलयो नष्टसंज्ञत्वं शेषाः सुव्यक्तलक्षणाः॥

दशरूपक, ४–५, ६

[२]अन्यद्भावाश्रयं नृत्यं नृत्तं ताललयाश्रयम्।

दशरूपक, १-६

उसे 'रूप' कहा गया है। [1]और नाट्य का समारोप या प्रयोग नाटकों में होता है, इसलिए नाटक का दूसरा नाम रूपक[2] है। ऊपर जो अङ्गिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक, ये चार क्रियाएँ कही गई हैं, इन में से 'नृत्य' और 'नृत्त' में 'वाचिक' नहीं होता, अर्थात् प्रयोजक 'नृत्य' और 'नृत्त' क्रिया के समय बोलता नहीं। 'नृत्य' द्वारा वह भाव प्रदर्शन करता है और 'नृत्त' द्वारा लय, ताल का प्रदर्शन होता है।

नृत्य—

यह स्पष्ट है कि एक ही कार्य-कलाप में नाट्य, नृत्य और नृत्त तीनों के मधुर सामञ्जस्य द्वारा ही अभिनेता अपना उद्देश्य-रसिकों के हृदय में लोकोत्तर आनन्द की सृष्टि द्वारा रस का उद्रेक—पूरा करता था। अब हम आगे 'नृत्य' और 'नृत्त' पर केवल पारिभाषिक दृष्टि-कोण से ही विचार करेंगे।

रस, भाव और स्थाई—
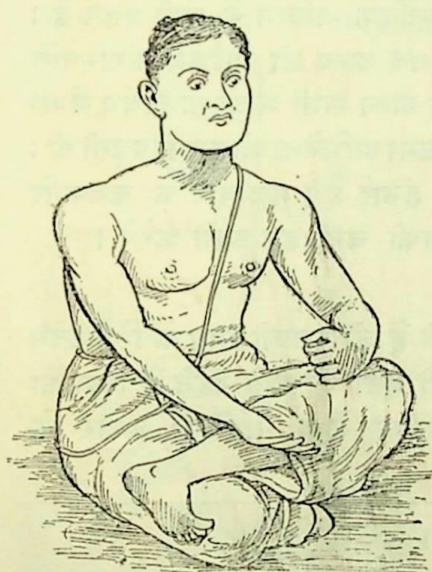
(क्रोध का भाव)

भाव सृष्टि ही नृत्य है। परन्तु 'भाव' क्या है? आजकल के प्रचलित कथक या बाई जी के नाच में जो 'भाव का काम' प्रायः जलसों में देखने में आजाता है, वह नाट्यशास्त्र के भावों की निकृष्टतम छायामात्र है। 'नृत्य' के दो भेद शास्त्रकारों ने माने हैं—(१) मधुर अथवा 'लास्य' (२) उद्धत-अथवा 'तांडव'। [3]जिस नृत्य में मधुर और सुकुमार भावों का व्यञ्जन होता है उसे 'लास्य' तथा जिसमें उद्धत या उग्र भावों का प्रदर्शन होता है उसे 'तांडव' कहते हैं। हिन्दू शास्त्रों में भाव रसों के आधीन माने गये हैं। मानवचित्त की अवस्था के आठ मुख्य भेद कहे गये हैं[4]—शृङ्गार, हास्य, करुण, रुद्र, वीर, भयानक, वीभत्स तथा अद्भुत। इनके प्रत्येक के एक-कई स्थाई भाव क्रम से

---

[1]रूपं दृश्यतयोच्यते।

दशरूपक, १-७

[2]रूपकं तत्समारोपात्।

दशरूपक, १-७

[3]मधुरोद्धतभेदेन तद्वयं द्विविधं पुनः।
लास्यतांडवरूपेण नाटकाद्युपकारकम्॥

दशरूपक, १-१०

[4]शृङ्गारवीरबीभत्सरौद्रेषु मनसः क्रमात्।
हास्याद्भुतभयोत्कर्ष करुणानां त एव हि॥

दशरूपक, ४-४४

ये हैं—रति (प्रेम या अनुराग), हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, घृणा तथा आश्चर्य। एक नवां रस 'शांत' माना गया है, जिसका स्थाई भाव 'शान्ति' है, परन्तु नाट्य में शान्ति भाव की आवश्यकता नगराय मानी गई है। [1]इन आठों भावों को स्थाई इसलिए कहा गया है कि मन पर इनका पूर्ण साम्राज्य होता है, अर्थात् जिस समय इनमें से कोई एक जो मानसपटल पर अधिकार कर लेता है, वह अन्य विरोधी या अविरोधी भावों द्वारा उखड़ता नहीं, बल्कि उनको भी अपने ही रँग में रँग लेता है। [2]अब जैसे अनुकार्य राम हैं, अभिनेता को राम की सीता-विषयिणी रति या रावण-विषयक उत्साह या क्रोध की अवस्था का अनुकरण करना है। वह अङ्गिक आदि क्रियाओं द्वारा अपनी मानसिक और शारीरिक सत्ता को स्थानापन्न रूप से राम की सत्ता में लीन कर देगा, वह रति-भाव को अक्षुण्य रक्खेगा। उत्साह या हास्य आदि रति के अनुकुल, या क्रोध और घृणा आदि जो प्रतिकूल भाव कथानक के अनुसार विशेष रूप में आवेंगे वह इस रति-भाव के सहायक या परिपोषक रूप में ही आवेंगे। वास्तविक जीवन में यही होता है। जैसे कि जब कोई आदमी क्रोध के वशीभूत होजाता है तब अन्य जो कोई भी परिस्थिति सामने आती है, वह क्रोध को बढ़ाती ही है। यही बात अन्य सभी भावों के संबंध में भी होती है। अभिनय में नृत्य द्वारा इसीप्रकार की भाव-व्यंजना अभिनेता को करनी पड़ती थी। इस समय नृत्य की यह विद्या देश से लुप्त-प्राय होगई है। मलाबार के कथकलि नर्तकों में यह बात न्यूनाधिक मात्रा में विद्यमान है। इनकी चर्चा हम आगे करेंगे।

संचारी—

स्थायी के कुछ संचारी या व्यभिचारी[3] भाव होते हैं जो स्थायी भाव के निकटतम सम्बन्धी होते हैं और बीच-बीच में प्रगट होकर अपनी छटा दिखाते रहते हैं। इनका मुख्य कार्य होता है, स्थायी भाव को पुष्ट करना। शास्त्र में ये तैंतीस[4] प्रकार के कहे गये हैं:—

---

[1]रत्युत्साह जुगप्साः क्रोधो हासःस्मयो भयं शोकः।
शममपि केचित्प्राहुः पुष्टिर्नाट्येषु नैतस्य॥

दशरूपक, ४–३५

[2]विरुद्धैरविरुद्धैर्वा भावैर्विच्छिद्यते न यः।
आत्मभावं नयत्यन्यान्स स्थाई लवणाकरः॥

दशरूपक, ४–३४

[3]विशेषादाभिमुख्येन चरन्तो व्यभिचारिणः।
स्थायिन्युमग्ननिर्मग्नाः कल्लोला इव वारिधौ॥

दशरूपक, ४–७

[4]निर्वेदग्लानिशङ्काश्रमधृतिजड़ताहर्षदैन्योग्र्यचिन्ता-
स्त्रासेर्ष्यामर्षगर्वाः स्मृतिमरणमदाः सुप्तनिद्राविबोधाः।
व्रीड़ापस्मारमोहाः समतिरलसताबेगतर्कावहित्था
व्याध्युन्मादौ विषादोत्सुकचपलयुतास्त्रिंशदेते त्रयश्च॥

—दशरुपक, ४–८

ये भाव अपने संचरणशील या परिवर्तनशील स्वभाव के कारण संचारी कहे जाते हैं। स्थायी की भांति ये सदा अविचलित रूप से हृदय और मन पर अधिकार नहीं जमा सकते। स्थायी भाव यदि एक समुद्र है तो ये संचारी भाव इसमें उटने और विलीन हो जाने वाली असंख्य कल्लोलें या बुलबुले हैं, जो उसी समुद्र की लहरों से ही उत्पन्न होते हैं और उन्हीं में विलीन होजाते हैं। इन के नाम यों हैं—निर्वेद (अपने से घृणा होना); ग्लानि (क्लांति आदि जनित निर्जीवता); शङ्का, श्रम, धृति (संतोष); जड़ता (प्रिय के अनिष्ट-श्रवण-जनित निष्प्राणता); हर्ष, दैन्य, औग्र्य, चिन्ता, त्रास असूया या ईर्ष्या (दूसरे की उन्नति देखने में असमर्थता); आमर्ष (आपे से बाहर हो जाना); गर्व, स्मृति, मरण, मद, सुप्त (शयन के समय की एक अवस्था विशेष); निद्रा (मन की वृत्तियों का संमीलन); विबोध (जागना या जगाया जाना); व्रीड़ा(लज्जा); अपस्मार (पागलपन का दौरा); मोह, मति (वस्तुओं के यथार्थ ज्ञान की शक्ति); आलस्य, आवेग, तर्क, अवहित्था (झेंप): व्याधि, उन्माद, विषाद, औत्सुक्य, चापल्य (चञ्चलता)। इनके अतिरिक्त और भी साधारण मानसिक दशाएँ हो सकती हैं, पर मुख्य जितनी हो सकती थीं, उन्हें शास्त्रकारों ने गिना दिया है।

(शान्ति का भाव)
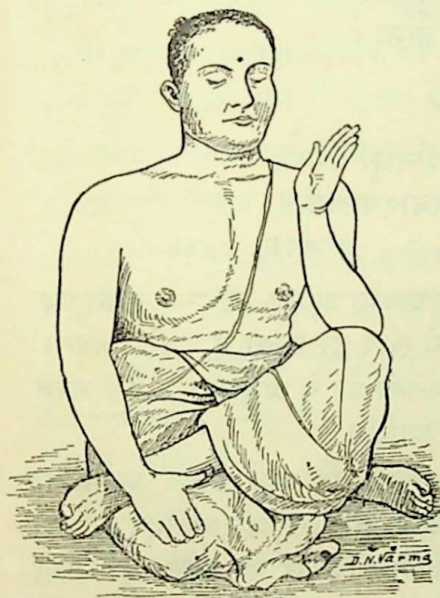
अनुभाव —

यह स्पष्ट है कि प्राचीन हिन्दू नृत्य करने वाले के लिये इन सब भावों को आंगिक क्रियाओं द्वारा व्यक्त कर सकने का अभ्यास अनिवार्य था। यह बात शास्त्र में दिये हुये 'अनुभावों' से प्रमाणित हो जाती है। किसी विशेष स्थायी या सञ्चारी भाव की सूचना मन में होने पर जो वाह्य विकार शरीर के अंग प्रत्यङ्गों पर प्रगट हो जाते हैं, उन्हें अनुभाव कहते हैं।[1] नाट्य और नृत्य में अनुभावों और मुद्राओं की सहायता से भावों की पहचान होती थी। दूसरे शब्दों में अनुभावों और मुद्राओं को हम मूक नृत्यकी भाषा कह सकते हैं। शास्त्र में प्रत्येक भाव की परिभाषा और उनके व्यक्त करने वाले अनुभाव दिए गए हैं। सब भावों की परिभाषा और उनके अनुभाव तथा मुद्राएँ लिखने से यह लेख बहुत बढ़ जायगा। उदाहरण के लिए दो-तीन भावों की परिभाषा आदि नीचे दी जाती हैं।

निर्वेद—

तत्त्वज्ञानापदीर्ष्यादे निर्वेदः स्यावमाननम्।
तत्र चिन्ताश्रुनिःश्वास वैवर्ण्य च्छ्वासदीनताः॥

दशरूपक, ४, ६

---

[1] 'अनुभावो विकारस्तु भावसंसूचनात्मकः।
दशरूपक, ४–३

तत्व-ज्ञान, विपत्ति तथा ईर्ष्या आदि कारणों से अपना ही अपमान करना या अपनी ही निगाहों में अपने को गिरा हुआ देखना 'निर्वेद' है। यह इन लक्षणों से प्रगट होता है। चिन्ता की मुद्रा, अश्रुमोचन, ठण्डी साँसें, विवर्णता (चेहरे का रंग उड़जाना) उच्छ्वास, दैन्य, या असहायता की मुद्रा। इन मुद्राओं की सूची आगे दी गई है।

शंका—

अनर्थप्रतिभाशङ्का परक्रौर्यात्स्वदुर्नयात्।
कम्पशोषाभिवीक्षादिरत्र वर्णस्वरान्यता॥

दशरूपक, ४, ११

अपने द्वारा की हुई अनीति या दूसरे द्वारा की हुई क्रूरता से किसी अज्ञात भय की जो भावना मन पर आतंक जमा लेती है, उसे 'शंका' भाव कहते हैं। शरीर पर निम्नलिखित वाह्य विकार (अनुभाव) प्रगट होने से यह भाव पहचाना जाता है—कम्प (शरीर में कंपकंपी); शोष (मुँह सूख जाना); नेत्रों में चिंता तथा हस्त में व्याकुलता की मुद्राएँ तथा चेहरे का रंग और कंठ स्वर का बदल जाना।

जड़ता—

अप्रतिपत्तिर्जड़ता स्यादिष्टानिष्टदर्शनश्रुतिभिः।
अनिमिषनयननिरीक्षण तूष्णीं भावादयस्तत्र॥

दशरूपक, ४, १३

अपने किसी प्रिय के इष्ट अथवा अनिष्ट, दर्शन अथवा श्रवण से मन में जो एक प्रकार की अप्रतिपत्ति (बेचैनी) हो जाती है और धैर्य लोप हो जाता है, उसे 'जड़ता' भाव कहते हैं। इस भाव को व्यक्त करने के लिए अभिनेता को ये अनुभाव प्रगट करने पड़ते हैं—निर्निमेष नेत्रों की मुद्रा, चुपचाप बैठे रहना आदि।

ऊपर के तीन भावों के वर्णन से स्पष्ट हो गया होगा कि एक सफल अभिनेता और नर्तक के लिए वास्तव में कितनी प्रतिभा, शिक्षा और अभ्यास की आवश्यकता हो सकती है। पाश्चात्य देशों की अभिनय कला अपने उच्चतम शिखर पर पहुँची हुई कही जाती है। पर उन में से कितने ऐसे हैं, जो इन अनुभावों को इच्छानुसार प्रदर्शित कर सकते हों? चेहरे का रंग (भाव के अनुसार सफ़ेद, सुर्ख़, पीला या काला पड़ जाना), नेत्र का स्वाभाविक रंग बदल देना, पसीना और आँसू आदि उत्पन्न करना, चेहरा सूख जाना, विविध अंगों में (नेत्र, पलक, ओठ, हस्त, पाद आदि में) कंप, फैलाव आदि प्रकट करना, शृंगार, हास, करुण, रौद्र आदि स्थायी भावों की मुद्राएँ स्पष्ट करना, आजकल बहुत लोग असंभव ही समझेंगे। पाश्चात्य श्रेष्ठ अभिनेता या नर्तक में आप आधुनिक यथार्थवाद की पराकाष्ठा तो देख सकेंगे पर यह बातें नहीं मिलेंगी।

अस्तु, जैसा कि पहले कहा गया है, नृत्य के स्थूल दो विभाग हैं—लास्य और तांडव। आम तौर से स्त्री पात्रों को लास्य और पुरुष पात्रों को तांडव का अभ्यास करना पड़ता था। कुछ भाव स्त्री पात्रों को ही शोभा देते हैं या यों कहिए कि वे स्त्रियों के लिए ही बने हैं, और कुछ पुरुषों के लिए। कुछ भाव ऐसे हैं जिनको दोनों ही

समय-समय पर अनुभव किया करते हैं। इनको अलग कर के बताना व्यर्थ होगा, थोड़े विवेचन से विज्ञ रसिक स्वयं ही उन्हें समझ सकते हैं।

स्त्रियों के भाव—

कुछ भाव ऐसे होते हैं जिन की आवश्यकता केवल लास्य में होती है और वे केवल स्त्रियों को ही शोभा दे सकते हैं। शास्त्रकारों ने इनको तीन वर्गों में बांटा है—(१) शरीरज, (२) अयत्नज, (३) स्वभावज। इन में तीन भाव जो केवल शरीर से सम्बन्ध रखते हैं शरीरज कहे गये हैं, और सात भाव अयत्न से ही स्वतः उत्पन्न होने वाले और दस स्वभाव से पैदा होते हैं। कुल मिलाकर बीस होते हैं। इनकी नामावली और संक्षिप्त परिचय क्रम से नीचे दिया जा रहा है—

शरीरज[1]

भाव—रजोगुण और तमोगुण के विकारों से रहित मन में प्रेमाकांक्षा के प्रथम उदय होने को 'भाव' कहते हैं। इसमें किसी प्रकार का वाह्य विकार नहीं देख पड़ता। परिवर्तन केवल मन में होता है।

हाव[2]—इसी पूर्व-कथित 'भाव' के मन में अधिक सजग होने के कारण जब आँख और भौं आदि अङ्गों में कुछ विकार प्रगट हो जाते हैं, तो उसे 'हाव' कहते हैं।

हेला[3]—हाव के साथ-साथ जब शृङ्गार-चेष्टा नितान्त स्पष्ट हो जाती है तो उसको 'हेला' कहते हैं।

('हाव', 'भाव', 'कटाक्ष' आदि शब्दों से 'नाच' देखने वाले सभी रसिक परिचित होंगे, परन्तु यह 'हाव', 'भाव' ऊपर के शास्त्रोक्त 'हाव', 'भाव' से कितने पतित हो गये हैं, यह ध्यान देने की बात है।)

(लास्य का भाव)

अयत्नज भाव—

शोभा[4]—सौन्दर्य, वासना, तारुण्य तथा प्रिय-मिलन की आकांक्षा के कारण अङ्ग-प्रत्यङ्ग में जो स्वतः एक विचित्र प्रकार की कमनीयता आजाती है, उसे 'शोभा' कहते हैं।

---

[1] निर्विकारात्मकात्सत्त्वाद्भावस्तत्राद्यविक्रिया।

[2] हेवाकसस्तु शृङ्गारो हावोऽक्षिभ्रू विकारकृत।

[3] स एव हेला सुव्यक्त शृङ्गाररससूचिका॥

[4] रूपोपभोगतारुण्यैः शोभाङ्गानां विभूषणम्।

कांति[१]—यही 'शोभा' का भाव जब काम-विकार से छा जाता है, तो उसे 'कांति' कहते हैं।

माधुर्य[२]—भावों में अधिक प्राबल्य न आने देना माधुर्य है।

दीप्ति[३]—'कांति' भाव के विस्तार को 'दीप्ति' कहते हैं।

प्रागल्भ्य[४]—घबराहट न दिखलाई पड़ना।

औदार्य[५]—प्रत्येक अवस्था में सौजन्य और प्रश्रय को सुरक्षित रखना औदार्य है।

धैर्य[६]—किसी क्रिया से अव्यवस्थितता या चञ्चलता का भाव न आने देना।

लीला[७]—अपनी वाणी (कंठ-स्वर) तथा शारीरिक चेष्टाओं द्वारा अपने प्रेमिक का अनुकरण करना।

स्वाभाविक भाव—

('लीला' का प्रसिद्ध उदाहरण 'रासलीला' अब भी प्रचलित है। इस नृत्य में राधा प्रेमावेश में आकर कृष्ण की भूमिका धारण करती है और उनकी बाँसुरी लेकर उन्हीं की लोक-प्रसिद्ध मुद्रा में नृत्य करती है।)

विलास[८]—प्रिय के अचानक आ मिलने पर सारे शरीर में बोली में तथा इसी प्रकार सारी चेष्टाओं में जो एक प्रकार का तात्कालिक, सुन्दर और सरस परिवर्तन हो जाता है उसे 'विलास' कहते हैं।

विच्छित्त[९]—वेशविन्यास का कोई बहुत साधारण, पर बड़ा प्रभावशाली परिवर्तन जो कान्ति को प्रदीप्त करे उसे 'विच्छित्त' कहते हैं।

विभ्रम[१०]—जल्दी में कहीं का आभूषण कहीं पहन लेने को 'विभ्रम' कहते हैं।

किलकिञ्चित[११]—क्रोध, आँसू, हर्ष तथा भय आदि को एक साथ ही प्रगट करना 'किलकिञ्चित' है।

---

[१]मन्मथामापितच्छाया सैव कान्तिरितिस्मृता।

[२]अनुल्बणत्वं माधुर्यं।

[३]दीप्तिः कान्तेस्तु विस्तरः।

[४]निस्साध्वसत्वं प्रागल्भ्यं।

[५]औदार्यं प्रश्रयः सदा।

[६]चापलाविहता धैर्यं चिद्वृत्तिरविकत्थना।

[७]प्रियानुकरणं लीला मधुराङ्गविचेष्टितै।

दशरूपक, २–३४, ३५, ३६, ३७

[८]तात्कालिको विशेषस्तु विलासोङ्ग क्रियादिषु।

दशरूपक, २–३८

[९]आकल्परचनाल्पापि विच्छित्तः कान्तिपोषकृत्।

[१०]विभ्रमस्त्वरया काले भूषा थानविपर्ययः।

[११]क्रोधाश्रुहर्षभीत्यादेः संकरः किलकिञ्चितम्।

मोट्टायित[1]—प्रिय के नाम या उससे सम्बन्ध रखने वाली वस्तु के उल्लेख मात्र से उसी के भाव में लीन हो जाना 'मोट्टायित' है।

कुट्टमित[2]—प्रिय के अधिक अग्रसर होने पर बनावटी क्रोध का प्रगट करना 'कुट्टमित' है।

बिब्बोक[3]—अभिमान के अभाव में प्रिय का अनादर करना 'बिब्बोक' है।

ललित[4]—अङ्गों को कोमलता के साथ सजाना 'ललित' भाव है।

विह्वत[5]—मिलन समय आने पर भी लाजवश चुप रहजाने का भाव 'विह्वत' है।
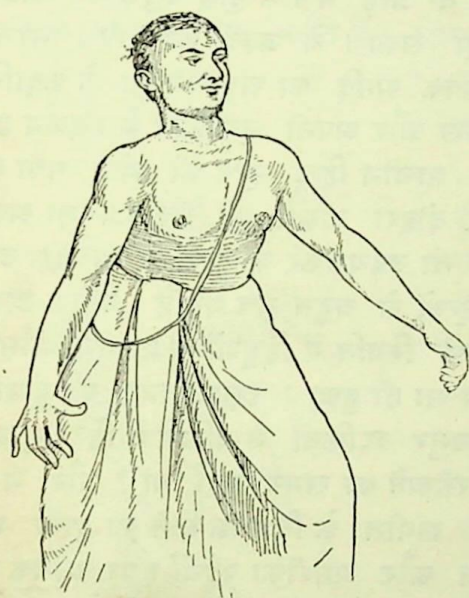
हास्य का भाव)

इन भावों के अनुभावों के उदाहरण अलग दिए हुए हैं, जिनका उल्लेख यहां विस्तार भय से असंभव है। यहां पर ध्यान देने की बात यह है कि नाट्य और नृत्य से वर्तमान काल में लोग इतना विमुख हो गये हैं कि इन रसों, भावों और अनुभावों की चर्चा केवल काव्य-साहित्य तक ही परिमित रह गई है। नृत्य और नाट्य से भी इनका कोई सम्बन्ध है कि नहीं इस प्रश्न की ओर कोई ध्यान ही नहीं देता। वास्तव में साहित्य में तो इनका (रस, भाव-आदि का) वर्णन मात्र होता है, जो कि नृत्य में व्यक्त किये हुये भावों की तुलना में निर्जीव ही कहा जायगा।

उदयशङ्कर और हिन्दू नृत्य का पुनरुत्थान।

कदाचित् लोगों को ज्ञात हो कि बङ्गाल के प्रसिद्ध नर्तक उदयशङ्कर ने पहले चित्रकार के रूप से जीवन आरम्भ किया अजन्ता, एलोरा आदि के गुफा-चित्रों से वे बहुत प्रभावित हुये। उन चित्रों को देख कर उन्हें प्रतीत हुआ कि शिल्पी ने वास्तव में नृत्य की किसी विशेष मुद्रा या गत को कल्पना-क्षेत्र में रख कर ही उन्हें गढ़ा है। इससे उन्हें विश्वास होगया कि ये सभी चित्र

---

[1]मोट्टायितं तु तद्भावभावनेष्टकचादिषु।
[2]सानन्तः कुट्टमितं कुप्येत्केशाधरग्रहे।
[3]गर्वाभिमानादिष्टेऽपि विब्बोकोऽनादरक्रिया।
[4]सुकुमाराङ्गविन्यासो मसृणो ललितं भवेत्।
[5]प्राप्तकालं न यद्ब्रूयाद्व्रीड़या विह्वतं हि तत्।

दशरूपक, २–३८–४२

नाट्य या नृत्य के किसी भाव या अनुभाव के आधार पर बने हैं। नटराज की प्रसिद्ध मूर्ति जिसमें तांडव नृत्य की पहली मुद्रा और गत का अनुकरण किया गया है, इसका लोक-विदित उदाहरण है। इसी प्रकार सरस्वती, कृष्ण, काली आदि सभी प्रसिद्ध देवी देवताओं की प्राचीन मूर्तियाँ, नृत्य की किसी न किसी गत के आधार पर ही बनी हैं। उदयशंकर ने इन मूर्तियों का विशेष अध्ययन किया और फिर नृत्य रूप से इनकी गतों को सजीव करके जनता के सम्मुख रखने का निश्चय किया। उन्होंने अपने इस संकल्प को अपने ही ढंग से कार्यरूप में परिणत भी किया, पर बाद में कलाप्रदर्शन का भाव प्रधान हो जाने के कारण इनके नृत्य में पाश्चात्य और पूर्व दोनों ही की कुछ वास्तविक और कुछ मनगढ़न्त बातों के बे जोड़ मेल से कुछ बेतुकापन आगया और फल यह हुआ कि एक भी ठीक न हो सका। ये जल्दी कर गए। भरत के 'नाट्यशास्त्र' तथा 'अभिनयदर्पण' और 'दशरूपक' आदि का अध्ययन भी ये कदाचित् नहीं कर सके हैं। पर इन के सारे देश में भ्रमण और अपनी नृत्यकला के प्रदर्शन द्वारा भारतीय कलाप्रेमियों का ध्यान बड़े वेग से प्राचीन हिन्दू नृत्य की ओर गया और लोगों में अपनी भूली हुई परंपरा फिर से दोहरा डालने की प्रबल प्रेरणा अवश्य हो गई। यूरोप तथा अमेरिका आदि देशों में तो उदयशंकर के नृत्यों ने अच्छी उथल पुथल मचा दी। वहाँ के लोग अपने जातीय नृत्यों से बहुत ऊब गये हैं। नैतिक उत्थान की आशा भी उन्हें अपने नृत्यों से नहीं है। ऐसी स्थिति में हिंदुओं के प्राचीन धर्ममूलक नृत्यों का स्वागत इन देशों में आकाश-कुसुम सा ही हुआ। इसका फल यह हुआ कि अवसर से लाभ उठाना जानने वाले कुछ चतुर व्यक्तियों ने पश्चिम में हिंदू नृत्य का अच्छा 'मार्केट' देखा। वास्तविक हिंदू नृत्य सीखने का समय कहाँ था? और न धैर्य ही था। फल यह हुआ कि हिन्दू नृत्य और संगीत के विशेषज्ञ होने का दावा करने वाली कई टोलियां एक के बाद एक विलायत और अमरीका पहुँचीं। पर अधिक दिन तक पाश्चात्य कलामर्मज्ञों और समालोचकों को कोई भी धोके में नहीं रख सकता। इनमें से कुछ भारत में आये। उन्हें केरल के कथकलि नर्तकों का नृत्य देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अब इन्हें मालूम होगया कि वास्तविक 'भारतीय नृत्य' और कुछ हिन्दू नृत्य का 'व्यवसाय' करने वालों के नृत्य में कितना अन्तर है।

कथकलि --

अब यहां पर 'कथकलि' का कुछ परिचय देना उपयुक्त होगा। लगभग १२ वर्ष हुये केरल के अन्तर्गत त्रिवांद्रम् में 'केरल-कला-मंडलम्' या केरल एकेडेमी अव् आर्ट्स नाम की संस्था स्थापित हुई। इसके संयोजक प्रसिद्ध केरल कवि वल्लथोल नारायण मेनन हैं। आप ही इस संस्था के सर्वस्व हैं। इस देश की मरणोन्मुख कला का पुनरुद्धार तथा प्रचार ही इस संस्था का उद्देश्य है। 'कथकलि' कर्नाटक में नृत्य, संगीत, कथा तथा अभिनय की संयुक्त कला को कहते हैं। भरत के 'नाट्यशास्त्र' आदि का कहांतक इस कला में अनुसरण रक्खा जाता है यह इसके संक्षिप्त वर्णन से स्पष्ट हो जायगा। कर्नाटक और मालावार प्रान्त में यह कला पुराकाल में उन्नति की चरमसीमा

पहुँच चुकी थी। वल्लथोल महाशय का विश्वास है कि कम से कम अब से १००० वर्ष पहले तक इस कला के न्यूनाधिक उन्नति अवस्था में विद्यमान रहने के प्रमाण मिलते हैं।[1]

कथकलि क्या है इसका उचित ज्ञान तो उन्हीं को हो सकता है जिन्होंने इसका प्रदर्शन देखा है पर तो भी कुछ विशेष बातों का वर्णन यहां पर करना उचित है।

एक साधारण कथकलि मंडली में लगभग ३० व्यक्ति होते हैं, जिनमें कुछ अभिनेता, कुछ संगीतज्ञ और कुछ सजाने वाले रहते हैं। ये सजाने और वेशविन्यास आदि करने वाले अपनी कला के बड़े विशेषज्ञ होते हैं। संगीतज्ञों में कुछ गायक और वादक होते हैं। कोई प्रसिद्ध पौराणिक कथा पद्य में पहले से तैयार रहती है। गायक लोग उन्हें पर्दे के पीछे से गाया करते हैं। जिस पात्र का संवाद होता है वह रंगमंच पर प्रगट होता है, जहाँ वादक लोग पहले से उपस्थित रहते हैं। वाद्य-यंत्रों में प्रधान 'मर्दल' (कर्नाटकी मृदंग) होता है। लय और ताल नृत्य का व्याकरण या 'आधार' है (नृत्तंताललयाश्रयम्) और लय की सूचना इसी बाजे से मिलती है। इसके सिवा रुद्रवीणा और बन्शी स्वर के लिए होते हैं। कथाएँ मुख्यतः रामायण या महाभारत के कुछ प्रसिद्ध उपाख्यान होते हैं। अभिनेता स्वयं कुछ नहीं बोलता। उसका काम है केवल कथा के भाव को सजीव रूप में व्यक्त या दृष्टिगोचर करना। कथा के पद्यों में, जिन्हें गायक गाता रहता है, जिस किसी भी रस, भाव, अनुभाव, हाव-भाव तथा सात्विक आदि भावों का वर्णन होता है उनको पात्रगण रङ्गमंच पर ज्यों का त्यों अभिनय करके दिखाते हैं।

(तांडव का भाव)

हमें एक प्रसिद्ध कथकलि के अभिनय देखने का अवसर प्राप्त हो चुका है। इन्हें हमने शिव, कृष्ण, तथा रामायण की भूमिका में देखा है। सब से पहले नृत्य का आधार नृत्त तो है ही, अर्थात् लय-ताल की जमीन पर ही नृत्य और नाट्य की सारी इमारत खड़ी करनी होती है। इसलिए कथा के छन्द विविध तालों में पहले से बँधे रहते हैं, और उसी ताल की मात्राओं के अनुसार मर्दल पहले से बजता रहता है। अभिनेता पैरों में घुँघरू बांधे हुए उसी ताल से थिरकता हुआ रङ्गमंच पर पहुँचता है। अब जैसे उसे कृष्ण का अभिनय करना है, तो उस की सारी गतियों में शृङ्गार रस के स्थायी भाव, रति की मुद्रा प्रधान रहेगी। और यदि रावण का अभिनय करना है तो रौद्र या भयानक की मुद्रा होगी, फिर कथा-प्रसङ्ग के अनुसार रस, भाव, विभाव, अनुभाव

[1] फ़ोर आर्ट्स ऐनुअल, 'कथकलि' लेखक-वल्लथोल नारायण मेनन, पृ० १०४

आदि बराबर बदलते रहेंगे, पर स्थायी भाव स्थिर रहेगा और जो कोई भी संचारी भाव तथा अनुकूल या प्रतिकूल जो कोई भी स्थायी भाव कथा—प्रसङ्ग के अनुसार आते रहेंगे उनका प्रदर्शन अभिनेता करावेगा। पर इस पटुता के साथ जिससे कि मौलिक स्थायी भाव के आस्वादन में रसभङ्ग न होकर वह और भी परिपुष्ट रूप में दिखाई पड़े। सारी बातें नाटक के अभिनय के रूप में होती हैं, अन्तर यही है कि अभिनेता बोलता कुछ नहीं, वह केवल नाट्य, नृत्य और नृत्त द्वारा भावों की साकार आत्मा का रूप धारण करके दर्शकों के सम्मुख उपस्थित होता है और कथा में वर्णित सारे भावों को बता कर अन्तर्धान हो जाता है। स्त्री—पात्रों का अभिनय भी अधिकतर पुरुष ही करते हैं। कथा से सम्बन्ध रखने वाले जिन पद्यों को गायकगण गाते हैं उनकी रचना विशेष कर कथकलि अभिनय के अनुरूप ही की जाती है। इन में और साधारण नाटक या कथा में कुछ उसी प्रकार का अन्तर होता है जैसा कि आधुनिक साधारण नाटक और सिनेमा के चित्रनाट्य या 'सिनेरिओ' में। ये पद्य विशेष कर प्रदर्शन को लक्ष्य कर ही रचे जाते हैं और सङ्गीत तथा भाव-प्रधान होते हैं। कथकलि अभिनेताओं का वेशविन्यास बड़ा अपूर्व और बहुत विस्तृत होता है। शरीर में एक चुस्त जाकेट तथा नीचे ढीले घाँघरे के ढंग का रंगबिरंगा वस्त्र होता है। शिरस्त्राण प्रायः बहुत बड़ा और कामदार होता है। सभी बातें ऐसी होती हैं, जिन से नाच की गतियों और तेज चक्करों में कोई अड़चन न पड़े। मुख पर कोई चेहरा या नक़ाब आदि नहीं होता। पात्र की कल्पना के अनुसार मुख रँगा जाता है। अधिकतर चावल के महीन आटे का लेप काम में लाया जाता है। कृष्ण, राम, रावण, हनुमान, दुष्यन्त, आदि जैसी भूमिका होती है उसी के अनुसार उसका विन्यास होता है।

कथकलि शिक्षा-प्रणाली—

अब यहां पर कथकलियों की शिक्षा के बारे में कुछ कहना है। केरल-कला-मण्डलम् के छात्रों के दिनभर के अभ्यास का एक नियम बना हुआ है जिसके अनुसार प्रातःकाल पाँच बजे से लेकर इन्हें एक घन्टे तक केवल आँख, पलक, भौं और तारों का व्यायाम करना पड़ता है। इससे आँखों में सब प्रकार की गति, हरकतें और भाव प्रकट करने की शक्ति आती है। शरीर में हलकापन, लोच और अङ्ग-प्रत्यङ्गों की पेशियों पर अधिकार प्राप्त करने के लिए इनकी एक विशेष व्यायाम पद्धति है जो कि यौगिक व्यायामों की ही एक शाखा मात्र है। मन पर अधिकार प्राप्त करने के लिए प्राणायाम तथा योगासनों का एक कोर्स अलग है। इन सभों के दीर्घ अभ्यास के फल से ये सब प्रकार के रस और भाव व्यक्त करने में सफल होते हैं। विशेषज्ञों के निरीक्षण में दीर्घ अभ्यास के फल से ये स्वेद, अश्रु, शरीर, मुख तथा नेत्र के स्वाभाविक रंगमें इच्छानुसार परिवर्तन, अङ्ग—प्रत्यङ्ग में कम्पन आदि किसी भी अवसर पर करने में समर्थ होते हैं। इनका खान-पान तथा रहन—सहन सभी विशेष रूप से नियमित रहता है।

एक प्रमुख कथकलि श्री गोपीनाथ से परिचित होने का अवसर हमें मिला था। अपने जलसे से अलग उसने एक बार हम लोगों के अनुरोध से शृङ्गार आदि नौ रसों का विशेष प्रदर्शन कराया था। प्रत्येक रस के भाव, अनुभाव, तथा कुछ संचारी भावों का

इतना सच्चा प्रदर्शन सचमुच आश्चर्यजनक था। हाव, भाव, हेला आदि स्त्रियों के विशेष भावों का प्रदर्शन भी उसने कराया। इच्छानुसार स्वेद, अश्रु, रोमांच, वर्ण तथा स्वर-विपर्यय आदि पर भी उसे अधिकार था।

मुद्रा—

इन बातों के अतिरिक्त सबसे अधिक ध्यान देने योग्य इनकी मुद्राएँ होती हैं। यह स्पष्ट है कि जिह्वा के बाद मनोभाव व्यक्त करने का सबसे प्रधान साधन हाथों के इंगित या इशारे हैं। इन्हीं को 'मुद्रा' या नाट्य की परिभाषा में 'हस्ते' कहते हैं। भरत के शास्त्र में ये चौंसठ गिनाये गये हैं। इनमें चौबीस मुद्राएं एक हाथ से, तेरह दोनों हाथों को जोड़ कर, और सत्ताईस नृत की मुद्राएँ हैं।

असंयुत मुद्राएँ—

(आश्चर्य)

एक हाथ से बनने वाली मुद्राओं को 'असंयुत' कहते हैं। इनके नाम यों हैं! पताका, त्रिपताका, कर्त्तरीमुख, अर्धचंद्र, अराल, शुकतुंड, मुष्टि, शिखर, कपित्थ, कटकमुख, मृगशीर्ष, सर्पशीर्ष, सूचीमुख, पद्मकोष, लांगूल, स्थलपद्म, चतुर, भ्रमर, हंसवक्र हंसपत्त, संदंश, मुकुल, उर्णनाभ तथा ताम्रचूड़।

दोनों हाथों को जोड़कर जो मुद्राएं बनती हैं उन्हें 'संयुत' कहते हैं और उनके नाम ये हैं—

संयुत मुद्राएँ—

अंजलि, कपोत, कर्कट, स्वस्तिका कटक-वर्धन, उत्संग, निषेध, दोल, पुष्पपुट, मकर, गजदंत, अवहित्थ और वर्धमान।

नृत्त मुद्राएँ—

नृत्तमुद्राओं के नाम ये हैं—चतुर, उद्वृत्त, तालमुख, स्वस्तिक, विप्रकीर्ण, अरालकटकमुख, अविधावक्र, सूची, रेचित, अर्धरेचित, उत्तानवंचित, पल्लव, नितंब केशबंध, कटिहस्त, लता, पत्तवंचित, पत्तप्रद्योत, गरुड़पत्त, हंसपत्त, अर्धमंडली, पार्श्वमंडली, उरुमंडली, नलिनी, पद्मकोश, अलपपद्म तथा वाण।

इनके सिवा प्रत्येक देवी-देवता, प्रसिद्ध नदी, समुद्र, पर्वत, प्रसिद्ध महापुरुष, ऋषि-मुनि, तथा महर्षिगण तथा प्रायः सभी जीव-जंतुओं तथा इतर पदार्थों की मुद्राएँ या चिह्न अलग हैं।

स्थानाभाव से सब के नाम या शास्त्र से मौलिक उद्धरण देना यहाँ असंभव है है प्रत्येक मुद्रा की पूरी परिभाषा और उनके प्रयोग के अवसर दिए हुए हैं। इनका उल्लेख एक साधारण लेख में असंभव है।

बाला सरस्वती—

किस भाव के प्रकाशन में किस देवता, पुरुष, स्त्री या अन्य प्राणी, तथा किस वस्तु को व्यक्त करने के लिये कौन-सी मुद्रा बनानी चाहिये, इसका विस्तृत विवरण भरत के 'नाट्यशास्त्र' तथा 'अभिनयदर्पण' में मिलता है। केरल मंडलम् के कथकलि कलावन्तों को इन सब मुद्राओं पर अधिकार रहता है। अखिल भारतीय सङ्गीत-सम्मेलन के छठवें अधिवेशन में, जो काशी में हुआ था, बाला सरस्वती नाम की नृत्यकला में निपुण एक मदरासी महिला ने प्रदर्शन में भाग लिया था। इन्होंने भरत के शास्त्र के अनुसार नृत्य, नाट्य और नृत्त के प्रायः सब अङ्गों का अभ्यास कर लिया है और सम्मेलन में उन्होंने बहुत-सी मुद्राओं और गतियों का सफल अभिनय भी दिखाया था। इससे कुछ लोगों की आंखें खुलीं। हम लोगों के प्राचीन शास्त्रों में कला की अमूल्य निधि रक्खी हुई है, इसे हम लोग भूले हुये हैं और पाश्चात्य कला के अनुकरण में पागल-से हो रहे हैं। यह स्मरण रहे कि प्रत्येक जाति की कला के उत्थान का अविच्छिन्न सम्बन्ध उस देश तथा जाति की संस्कृति से होता है। अपनी परम्परा और संस्कृति से अलग होकर कोई भी जाति अपनी कला की उन्नति नहीं कर सकती। चित्र और स्थापत्य कला के विकास का उदाहरण हमारे सामने है। इससे हमको शिक्षा लेनी चाहिये। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ही पहले भारतीय संस्कृति के आधार पर चित्रकला के उत्थान की ओर अग्रसर हुये। लोग हँसे। कुछ लोगों की धारणा है भारत के इतिहास भर में कला का सुसंस्कृत माध्यम कभी था ही नहीं और पाश्चात्य विशेष कर यूनान और रोम की कला के अनुकरण पर ही भारतीय चित्रकला की नींव पड़ी। इस धारणा के विरोध में अवनींद्रनाथ ठाकुर के नेतृत्व में जब एक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब बहुत से भारतीय विद्वानों ने ही इसकी हँसी उड़ाई। पर इसी बीच अजन्ता और एलोरा आदि की खोजों ने लोगों की आँखें खोल दीं। कला के क्षेत्र में अब सभी इस बात को मान गए हैं, कि भारत का एक अपना आत्म-प्रकाशन का आदर्श था और आधुनिक युग में कला का नये सिरे से उत्थान करते समय, उस आदर्श को भूल जाना और अन्य देशों की कला के आदर्श की चकाचौंध में पड़कर उसी को आधार या सर्वस्व मानना अपनी संस्कृति का गला घोंटना होगा।

चित्र और नृत्यकला—

जो बात चित्रकला के क्षेत्र में हुई, वही नाट्य और नृत्य के सम्बन्ध में भी होकर रहेगी, यह स्पष्ट है कि चित्र या स्थापत्यकला सजीव नाट्य और नृत्यकला को ही आधार बना कर चलती है। हम पहले जो कह आये हैं, उससे यह स्पष्ट है। सभी कलाओं के मूल में आत्मनिवेदन है। प्रत्येक जाति का आत्म प्रकाशन अपनी संस्कृति आदि के अनुसार ही होता है।

आधुनिक नृत्य

इस समय जो नृत्य उत्तर भारत में प्रायः जलसों में देखने में आते हैं वह भारतीय सभ्यता और संस्कृति का स्मरण कर लज्जास्पद ही कहे जा सकते हैं। विशेष कारणों से

इस समय भारतीय नृत्य-कला हिन्दू-जीवन का दैनिक अङ्ग नहीं रह सकी है। वह केवल दरबारों और महफ़िलों की चीज़ रह गई है। दूसरे शब्दों में यह कला हिंदू जीवन का प्रधान अंग न रह कर केवल पेशेवरों की जीविका का साधन मात्र रह गई। वारांगनाओं तथा उनके उस्ताद कथकों ने इसे अपने ही ढंग से अपने आश्रयदाताओं की रुचि के अनुसार इच्छानुसार बनाया बिगाड़ा। फ़ारसी संस्कृति का सम्पर्क भी इस के साथ हुआ। पर पाश्चात्य शासन के बाद से इस कला के जीवन में भी अनेक परिवर्तन हुये। अन्त में लखनऊ दरबार में यह मिश्रित 'नृत्त' कला अपनी चरम सीमा को पहुँची। इस को हम 'नृत्त' ही कह सकते हैं, क्योंकि इसमें नाट्य, नृत्य तथा मुद्रा आदि नहीं के बराबर हैं। इसमें ताल ही सब कुछ है। लखनऊ के कालका और बिंदा इस कला के अन्तिम प्रतिनिधि थे।

सौभाग्य से दक्षिण की भारतीय संस्कृति में राजनीतिक उलटफेर के कारण उतना परिवर्तन न हो पाया। वहाँ का नृत्य और संगीत बहुत कुछ प्राचीन पद्धति के अनुसार सुरक्षित है, जैसा कि ऊपर के कथन से स्पष्ट हो गया होगा। कर्नाटक और केरल में इस प्राचीन नृत्य-कला के जीर्णोद्धार के लिए एक प्रबल आंदोलन चल रहा है। केरल—कला-मण्डलम् के कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा देश में हो रही है। विशेष कर बंगाल ने इन के कार्य के महत्त्व को भली भांति पहचाना है। उदयशङ्कर स्वयं अब कथकलि कलावन्तों से शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। पर दुर्भाग्य से उत्तर भारत अभी तक पिछड़ा हुआ है।

नाट्यशास्त्र का अनुवाद—

लोगों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि भरत के नाट्यशास्त्र का अभी तक अंग्रेजी में भी अनुवाद नहीं है देशी भाषाओं में कौन कहे! कोई सुव्यवस्थित संस्करण भी इस ग्रन्थ का अभी तक नहीं प्राप्त है। गायकवाड़ की संस्कृति सीरीज़ में यह ग्रन्थ मुद्राओं के चित्र सहित छप रहा था। सम्भव है छपचुका हो। काशी के सरस्वती-भवन से भी एक संस्करण निकला है जो कि अपेक्षाकृत शुद्ध और सुव्यवस्थित है। इसके सुसम्पादित हिन्दी अनुवाद की कितनी आवश्यकता है और प्रकाशित होनेपर यह अनुवाद कितना महत्त्वपूर्ण होगा यह अब बताने की आवश्यकता नहीं है। इस में वर्णित भावों और मुद्राओं को किसी चतुर कथकलि कलावन्त की सहायता से सचित्र भी किया जा सकता है जिससे इसकी उपयोगिता बहुत बढ़ जायगी। पर इसका अनुवाद वही कर सकता है जो संस्कृत, हिन्दी और संगीत तथा नाट्यशास्त्र तीनों ही पर समान रूप से अधिकार रखता हो। इतना हम कह सकते हैं कि भारतीय संस्कृति और कला पर नया प्रकाश डालने और जाति को अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति, कला तथा परम्परा से परिचित कराने के लिए इससे अधिक मूल्यवान प्रकाशन की कल्पना करना कठिन है।
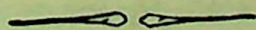
भारतीय नृत्यकला

(लेखक—श्री० करालीचरण बैनर्जी)

शिक्षित समाज में आजकल नृत्य का प्रचार घर-घर हो रहा है। पुराने समय में भी बड़े बड़े घरानों में इस कला का प्रचार रहा था। राजा महाराजों की लड़कियां और उनकी सखियां तो सीखती ही रहीं किन्तु साधारण गृहस्थों की लड़कियां भी जीविका उपार्जन के हेतु इस कला को सीखती थीं। और उनको राज अन्तःपुर में सम्मान का कार्य दिया जाता था।

लड़कियों में ललित कला की यह इच्छा प्रशंसनीय है किन्तु नृत्यकला की शिक्षा भारतीयता को लेकर ही होनी चाहिए। आजकल म्यूजिक कान्फ्रेंसों में बहुत सी लड़कियां नाच की प्रतियोगिता में आती हैं, इन कान्फ्रेंसों में नृत्य के २ विभाग किये गये हैं Classical और Oriental। इन कान्फ्रेंसों में मनिपुरी और सविन्द्रिक पद्धति के नृत्य भी दिखाये जाते हैं। कान्फ्रेंस वाले कथक नृत्य को "क्लासीकल" कहते हैं और शेष नृत्यों को ओरियन्टल। इन कान्फ्रेंसों में कथकलि या सनातन भारतीय नृत्य बहुत कम देखने को मिलते हैं। यह समझ में नहीं आता कि ये लोग किस बुनियाद पर कथक नाच को क्लासिकल कहते हैं ओरियन्टल नृत्य के बारे में मैं अपनी अनभिज्ञता बताता हूँः-एक बार हमें "स्टेट्समैन" में एक विज्ञापन देना पड़ा, जिसमें ओरियन्टल नृत्य जानने वाली लड़कियों की मांग थी। दूसरे ही दिन करीब २० यूरोपियन स्त्रियां मेरे पास आईं, सब के पास अपने-अपने नृत्य के पोज़ (तस्वीरें) भी थीं। किसी के पास मिश्री नाच की तस्वीर थी कोई तुर्कीनाच की विशेषज्ञ थी तो कोई पारस्य नाच जानने वाली थी। जब मैंने उनसे पूछा कि तुममें से कोई "भारतीय नृत्य" के विषय में भी कुछ जानती हैं? तो वे सबकी सब आश्चर्यन्वित हुईं और जबाब मिला कि विज्ञापन में तो भारतीय नृत्य का उल्लेख नहीं था, उसमें तो ओरियन्टल कहा गया है। उनकी यह बात सुन कर मैंने अपनी ग़लती महसूस की कि वास्तव में मुझे विज्ञापन में स्पष्ट यह लिखना चाहिए था कि भारतीय नृत्य जानने वाली स्त्रियों की ज़रूरत है। मुझे बहुत नीचा देखना पड़ा।

ओरियन्टल का हिन्दी अनुवाद "प्राच्य" है। अर्थात् जो कुछ पूर्व दिशा में है। योरोप के लोग ग्रीस से पूर्वी भाग को 'प्राच्य' कहते हैं। नृत्य के विषय में ग्रीस से पूर्व के देशों का नृत्य ओरियन्टल है। भारत, चीन, जापान, मलाया, रोम, मिश्र, फ़ारस, अरब, तिब्बत इत्यादि देशों में क्लासिकल नृत्य को कोई नहीं समझता। प्रत्येक देश का अपना २ निजी ढङ्ग होता है। भारतवर्ष का नृत्य "भारतीय" होना चाहिये।

अब यह देखना चाहिये कि भारतीय नृत्य के क्लासिक में किस ढङ्ग का नृत्य हो। भारतीय नृत्यकला के विषय में संस्कृत के कई प्राचीन ग्रन्थ हैंः-जैसे भरतनाट्य शास्त्र और नन्दकेश्वर का अभिनय दर्पण इत्यादि। लगभग २००० वर्ष हुये यह पुस्तकें लिखी गई थीं, इसके बाद ८०० साल तक कोई पुस्तक नहीं लिखी गई। फिर ८०० ई० से १२०० या १३०० के भीतर तक कई पुस्तकें लिखी गईं। इन पुस्तकों में कुछ विशेष भेद नहीं है।

नृत्य के २ भाग किये गये, नृत्य और नृत्त।

"अन्यद्भावाश्रयं नृत्यम्" के अनुसार नृत्य में भाव, रस और अङ्गविक्षेप इत्यादि की अधिकता रहती है। अङ्ग विक्षेप में भुजाओं का चलना, शरीर का सुन्दर परिचालन और भाव प्रदर्शन मुख्य है। इसके अलावा कोई एक या अनेक भावों को अङ्ग संचालन द्वारा, वेष भूषा द्वारा और शब्द या रस के द्वारा अभिनय करके प्रकट करते हैं।

"नृत्तं ताललयाश्रयम्" अर्थात् नृत्त में ताल और लय प्रधान हैं। नृत्त मध्य बिलम्बित लय से आरम्भ होता है फिर द्रुत होता चला जाता है। नृत्य और नृत्त दो अलग २ वस्तु हैं। नृत्य को मार्गी कहते हैं और नृत्त को देशी।

देवैर्मृगितत्वाद नृत्यस्य मार्ग इति प्रसिद्धः।

तत्तद्देशसंबद्धत्वाद नृत्तस्य देशीति प्रसिद्धिः॥

आद्यंनृत्यम् परं नृत्तम् (दशरूपक)

उच्च ललित कला के भाव के विस्तार हेतु नृत्य को प्रथम स्थान दिया गया है। कथक नाच "नृत्त" में आजाता है। इतना कहने के बाद यह न समझ लेना चाहिये कि नृत्य ताल या लय रहित होता है।

अर्थात्—नर्तक के अङ्ग प्रत्यङ्ग की भाव युक्त गति से प्रत्येक अर्थ साफ़-साफ़ प्रकट होजाता है। उसके पैरों का चालन ताल और लय में शुद्ध एवं उपरोक्त सभी रसों में पूरी तरह शुद्ध होता है। उसके हाथों का मृदु कम्पन एक भाव के बाद दूसरे भाव इतनी जल्दी प्रकट करता है, कि मानो भाव के पीछे भाव दौड़ रहा हो।

भारतीय नृत्य की विशेषता यही है कि वह उपभोग्य नहीं, बल्कि उसमें तन्मयता है। यही पाश्चात्य नृत्य से इसका अन्तर प्रतीत होजाता है। इसी कारण इसमें दिखावट बहुत कम है। जब तक तन और मन पूरी तरह से नृत्य में नहीं डाल दिये जाते, केवल दर्शकों की वाहवाही लेलेने से भारतीय दृष्टि से नर्तक को सच्ची सफलता नहीं मिलती। अधिकतर इस देश में निम्न लिखित नृत्यों का प्रचार है :—

कथक, कथकलि, मणिपुरी, शान्ति निकेतन, और मद्रास में भरतनाट्यम्। देवदासी प्रथा बन्द होने के बाद दक्षिण में इसका प्रचार लड़कियों में बहुत हुआ मद्रास और तामिल प्रांत में कलाप्रेमी मनुष्य ज्यादा हैं तैलगू अथवा आन्ध्र प्रदेश में कला ज्ञान बहुत कम है। इसी प्रकार पञ्जाब में कला की ओर जनता का आकर्षण कम है, बङ्गाल में कला ज्ञान बहुत जागृत है किन्तु उसका पड़ौसी बिहार कला ज्ञान से उतना ही दूर है उड़ीसा में नृत्य का ज्ञान काफ़ी है। गुजरात में पिछले १०० वर्ष से नृत्य की एक सी प्रगति रही। महाराष्ट्र नृत्य विषय में अधिक सचेत मालुम नहीं पड़ता, यू० पी० में कुछ दिनों से लोगों की रुचि इस ओर बढ़ रही है।

कथक नृत्य यू० पी० में बहुत दिनों से प्रचलित है इस नाच में पैर से ताल देकर बताना होता है, और ताल को द्रुत करने के लिये नृत्यकार या नर्तकी का ध्यान पैर पर ही रहता है। नृत्य के अन्य आवश्यकीय अङ्गों पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता।

इससे नृत्यकला का विस्तार नहीं हो पाता और कला पारखी इसमें प्रत्येक पद पर रसभङ्ग का अनुभव करते हैं।

एक मेरा निजी अनुभव है, उसे उदाहरण के तौर पर लिखता हूं:—एकबार एक कान्फ्रेन्स में एक लड़की अपना नाच दिखा रही थी. उसने एक गीत गाया और उसी के आधार पर वह नांची। मुझे जहांतक याद है वह कविता इस प्रकार थीः—

जल की न घट भरें, मग की न पग धरें,।
घर की न काम करें, बैठी भरें सांसुरी ॥
एक सुनि लोट गई, एक लोट पोट भई।
औरन के दृगन तें, निकस आये आंसुरी ॥
कहै रसनायक बृज, बनितान विधि।
अधिक कहाय हाय होत, कुल हांसुरी ॥
अब करिये उपाय, बांस डारिये कटाय।
नहिं उपजेंगे बांस, नहिं बाजेगी बांसुरी ॥

यह कविता सुनकर मुझे बड़ा ही आनन्द हुआ और मैंने सोचा कि आज एक उच्चकोटि का नृत्य देखने का सुयोग मिला है। स्वेद, रोमांच, स्तम्भ, स्वरभङ्ग, वेपथु, वैवर्ण्य, इन तमाम रसों का समावेश एक ही नृत्य में करदिया था। किन्तु यह आनन्द थोड़ी देर ही रह पाया हमने देखा कि उस्ताद जी एक बहुत लम्बी तबले की परन कहगये और लड़की एक जगह खड़ी होकर द्रुत से द्रुततर ताल पर पैर फेंकने लगी। नृत्य के मुताबिक ताल ठीक चल रही थी, किन्तु ऊपर लिखे कवित्त से इसका कोई सम्बन्ध नहीं था, केवल हाथों के भाव से यह दिखाया जारहा था कि यह बांसुरी बजाने का भाव बताया जारहा है।

इसमें लड़की का कोई दोष नहीं, दोष है शिक्षक का। कथक नृत्य के उस्ताद करीब २ सब अपढ़ हैं और उनमें ललित कला का ज्ञान बहुत कम है। इसीलिये इस नाच की उन्नति रुकी हुई है। यदि इस नृत्य के ताल के काम को आधार मान के उसमें मुद्रा करण, अंगहार इत्यादि का समावेश किया जाय तो एक सर्वाङ्ग सुन्दर भारतीय नृत्य की पद्धति खड़ी की जासकती है। इस विचार पर बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है, कि इनमें कितना भाग पुरुषों के लिये उपयोगी है और कितना स्त्रियों के लिये।

कथक नृत्य के तमाम बोल या तोड़े महिलाओं के लिये उपयोगी नहीं, अब पाठकों को विचार करना चाहिए कि कहांतक कथक नृत्य को "क्लासीकल" समझा जा सकता है सच पूछिये तो यह नृत्य की श्रेणी में आता ही नहीं। यह तो केवल देशी "नृत्त" है।

कथकलि

यह नाच दक्षिण भारत में बहुत प्रचिलित है। और कोल व मालयालम् में अधिक दिखाई देता है। इसमें भारतीय नृत्य की बहुत सी बातें मौजूद हैं। जैसे हस्त मुद्रा, अङ्गहार, कुण्डल इत्यादि। परन्तु इसमें ललित कला का सौन्दर्य कम रह गया है, पहिले भरत नाट्यम् की बात कहचुका हूं। देवदासी प्रथा बन्द होने के बाद इसका प्रचार बहुत बढ़ा है क्यों कि यह महिलाओं के लिये उपयोगी है और वे उसे सीख भी रही हैं। इन दोनों नृत्यों में ताल का काम है। दक्षिण में इस बात की चेष्टा की जा रही है कि कथकलि में सम्पूर्ण भारतीय कला विद्यमान रहे। फिलहाल यह लोग काफ़ी उन्नति कर रहे हैं।

मणिपुरी—

बंगाल में इस नृत्य का रिवाज़ थोड़े से दिनों में बहुत बढ़ गया है क्यों कि इसकी ताल में पदक्षेप कथक नृत्य जैसा मुश्किल नहीं है। कथक नृत्य में एक बोल या तोड़े के प्रत्येक बोल के साथ पैर ताल में फेंका जाता है, किन्तु मणिपुरी में बोल चाहे कितना ही कठिन और द्रुत हो, पदक्षेप को सरल बनाया गया है। इसी वजह से लड़कियों को यह मुशकिल नहीं होता। परन्तु इसमें एक चीज़ को बार-बार दुहराने की एक बुरी आदत भी है।

शान्ति निकेतन—

इस नृत्य में कोई विशेषता नहीं है। गाने के साथ यह नाचा जाता है और सङ्गीत का भाव हाथ पैर हिलाकर प्रकट किया जाता है। ताल और लय की इसमें कोई बन्दिश नहीं, क्योंकि जिन गायनों के साथ यह नाच होता है वह गाने ही ताल रहित होते हैं। पहिले इसका बंगाल में बहुत प्रचार हुआ था लेकिन अब इसे सीखने की कोई रुचि नहीं पायी जाती।

उदयशङ्कर—

श्री उदयशंकर ने कई वर्ष से भारत, यूरोप, अमेरिका तथा अन्य स्थानों में भारतीय नृत्यकला का विशेष प्रचार किया है, उनके प्रदर्शनों में कई एक नृत्य भारतीय पद्धति के अनुसार हैं। दूसरे नृत्य देशी या Folk Dance कहे जा सकते हैं। भूमिका में फोक डान्स न दिखलाने से पैसे की प्राप्ति नहीं होती, इसलिये उन्हें इन नाचों को भी दिखलाना पड़ता है। नाच के समय जो कपड़े और अलंकार पहिने जाते हैं उन्हें नाट्यशास्त्र में "आहार्य" कहते हैं। उदयशंकर के नृत्य में आहार्य ज्ञान की कमी बहुत कम मिलती है। श्रीकृष्ण को चूड़ीदार पाजामा और राधा को घाघरा पहिनाकर निकालना रुचि विरुद्ध मालूम होता है, यह मुसलमानी प्रभाव का फल है। कथक नृत्य में मुसलमानी प्रभाव बहुत पाया जाता है, और उदयशंकर ने कथक नृत्य की नक़ल की है। दूसरी ओर इन्द्र कार्तिकेय और नटराज का श्रृंगार ज्ञान

बहुत ऊंचा है। कथकलि में श्रृंगार ज्ञान कम दिखाई देता है। मणिपुरी नृत्य में अपने देश के अनुसार सजावट करते हैं।

नाट्यशास्त्र प्रणेता ने नृत्य या नृत्त को दो भागों में और बांट दिया है, लास्य और तांडव। दशरूपक में लिखा है:—

मधुरोद्धतभेदेन तद्वयं द्विविधं पुनः ।
लास्यताण्डव रूपेण नाटकाद्युपकारकं ॥

यहां द्विवधं और द्वयं का अर्थ नृत्य और नृत्त दोनों प्रकार के नाच को सूचित करता है। भरतनाट्यशास्त्र में नाच के लिये केवल ताण्डव शब्द का व्यवहार किया गया है, टीका में एक जगह यह समझाया गया है कि नाच में बैठकर या खड़े होकर जो काम दिखलाया जाता है वह लास्य है। परन्तु नन्दकेश्वर और परवर्त्ती सभी ग्रन्थकार उपरोक्त प्रकार से लास्य और ताण्डव का भेद मानते हैं। लास्य स्त्रियों के लिये और ताण्डव पुरुषों के लिये उपयोगी है।

स्वरलिपियों का चिन्ह परिचय

प	जिन स्वरों के ऊपर नीचे कोई चिन्ह न हो, वे मध्य सप्तक के शुद्ध स्वर हैं
ध̲	जिस स्वर के नीचे पड़ी लकीर हो वे कोमल स्वर हैं किन्तु कोमल मध्यम पर कोई चिन्ह नहीं होगा, क्योंकि कोमल म, शुद्ध माना गया है।
म॑	तीव्र मध्यम इस प्रकार होगा।
नी़	जिसके नीचे बिन्दी हो, वे मन्द्र (षाद) सप्तक के स्वर हैं।
सं	ऊपर बिन्दी वाले स्वर तार सप्तक के हैं।
प –	जिस स्वर के आगे जितनी-लकीर हों उसे उतनी ही मात्रा तक और बजाइये।
रा ऽ	जिस अक्षर के आगे ऽ चिन्ह जितने हों उसे उतनी मात्रा तक और गाइये
धप	इस प्रकार २ या तीन स्वर मिले हुये (सटेहुये) हों वे १ मात्रा में बजेंगे।
+ ।०	+ सम, । ताली, ० खाली के चिन्ह हैं।
*	ऐसा फूल जहाँ हो, वहाँ पर १ मात्रा चुप रहना होगा।
⌒	स्वरों के ऊपर यह चिन्ह मीड़ देने के लिये होता है।

कथक नृत्य का इतिहास ।

(लेखक—सरदार सुन्दरसिंह जी "विश्वयात्री" World tourist)

पुराणों के मतानुसार श्री पार्वती व भगवान शङ्कर, श्री राधाकृष्ण जी, श्रीसुभद्रा अर्जुन, श्री सावित्री सत्यवान और इन्द्र आदि नृत्यों से पता चलता है कि भारतवर्ष में आदि काल से भी इसका विशेष प्रभाव था। नाट्यशास्त्र के निर्माता भरत मुनि ने यह विज्ञान ब्रह्मा जी से सीखा और इसका सर्वत्र प्रचार किया। ब्रह्मा जी ही नाट्य, नृत्य तथा सङ्गीत के आविष्कारक थे, इन्होंने धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष का साधन भी नृत्य ही माना था।

एलोरा, अजन्ता, एलिफेन्टा, भुवनेश्वर आदि स्थानों की प्राचीन मूर्तियों के देखने से पता चलता है कि पाषाण काल और धातु काल की आर्य जाति अपने कल्पित देवताओं की मूर्तियों को प्रसन्न करने के लिये मूर्तियों के आगे नृत्य किया करती थी। उस काल में जिस प्रकार से नृत्य हुआ करता था, वैसी ही मूर्तियां पुरातत्व विभाग (Archaeological department) में पाई जाती हैं। बौद्ध और ब्राह्मण काल में जिस प्रकार से नृत्य हुआ करता था—मूर्तियों से विदित हो सकता है।

मुसलमानी काल में कथक नृत्य का इतिहास—

मोहम्मद बिन क़ासिम से लेकर महमूद ग़ज़नवी और गौरी सम्राटों के समय में भी भारतवर्ष में नर्तक और नर्तकियां थे, किन्तु उनका इतिहास कुछ अँधेरे में पड़ा हुआ है। इतना सब जानते हैं कि भारतीय सम्राटों के दरबार में नर्तकी नाच किया करती थीं। सन् १२९४ ई० में जब अलाउद्दीन खि़लजी ने ढाका पर चढ़ाई की थी और औरङ्गजेब ने १३१० ई० में, और मलिक क़ाफ़ूर ने दक्षिणी भारत पर विजय प्राप्त की थी उस समय नर्तक और नर्तकियों का नृत्य भारत के लोग देखा करते थे।

तुग़लक सम्राटों के समय में अमीर-खुसरू जिन्होंने तराना बनाया था। भारतीय संस्कृत छन्दों पर ही 'तोम दिर दिर' यललि यलल आदि बोलों पर तराने की कल्पना करके भारतीय साहित्य का सत्यानाश कर दिया था।

सन् १४८६ से १५१६ ई० तक राजा मानसिंह तोमर के दरबार में भी नृत्य की चर्चा रही है। संस्कृत के छन्दों के स्थान पर हिन्दी कविता में इसी राजा के समय में छन्द बना था और इस कविता का नाम ध्रुवपद अर्थात् हिन्दी भाषा (खड़ी बोली) की कविता रखा गया था। मुग़ल सम्राटों में से बाबर हुमायूं को लड़ाई झगड़ों से अवकाश नहीं मिला, तो भी इनके समय में नृत्य का प्रचार अवश्य था।

सम्राट अकबर के समय में जिला मुलतान पञ्जाब के रहने वाले श्री स्वामी-हरिदास जी, जो कि ललिता सखी के अवतार समझे जाते थे और सारस्वत-ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुये थे, वे बड़े त्यागी और विरक्त पुरुष थे। इनके प्रायः सभी शिष्य

महात्मा और सुकवि थे। ये टट्टी वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। संगीत में बड़े प्रवीण थे। तानसेन, बैजनाथ अर्थात् बैजू बावरा, चिन्तामणि और बैजनाथ का शिष्य गोपाल नायक अमीर-खुसरू आदि स्वामी जी के ही अनुयायी थे।

स्वामी हरिदास बृन्दावन में रहा करते थे और कृष्ण भक्त थे। श्रीकृष्ण भगवान जी की मूर्ति के आगे नृत्य किया करते थे। स्वामी जी ने जिन शिष्यों को गायन विद्या की शिक्षा दी थी, वह गायक बने और जिनको वादन की शिक्षा दी वह किन्नर बने और जिनको नृत्य सिखाया वह कत्थक बने। यह श्रीकृष्ण भगवान् की लीला है कि सम्राट जहांगीर के गायक छत्रखां प्रवेज़दाद, खुर्मदाद, माखू, हमज़ान, सम्राट शाहजहां के गायक जगन्नाथ, द्रेगखां, लालखां, गुण समुद्र, विलासखां सुपुत्र तानसेन आदि श्री स्वामी हरिदास जी के शिष्यों के ही चेले हुये। तानसेन की सुपुत्री के वंश में सदारंग जी से ही गवालियर के नत्थन पीरबख्श ने सीखा। फिर उसी वंश में हद्दू हसूखां दो भाई थे जिनसे पंडित भातखण्डे, पंडित विष्णुदिगम्बर स्वर्गवासियों ने सीखा था। राजाभैया पूछ वाले प्रिंसिपल श्रीमाधव संगीत विद्यालय ग्वालियर और कृष्णराव शंकर सङ्गीत विद्यालय लश्कर (गवालियर) भी हद्दूहसूखां और उनके शिष्य शङ्कर पण्डित के ही अनुयायी हैं। इसी प्रकार से प्रोफेसर फैयाज़खां भी रंगीले घराने के हो हैं। मेरिस कालेज आफ़ हिन्दुस्तानी म्यूज़िक लखनऊ और स्कूल आफ़ इण्डियन म्यूज़िक बड़ौदा स्टेट के प्रिन्सिपल, प्रोफेसर, उस्ताद आदि सब स्वामी जी का ही प्रताप है। इससे सिद्ध होता है कि भारतवर्ष के शत प्रतिशत आचार्य श्री स्वामी जी के ही चेले हैं। पटियाला रियासत के स्वर्गवासी ख़ां साहब फतहअली जनरेल और अलीबख़्श जिनको अलियाफत्तू कहते हैं और फतहअलीख़ां के सुपुत्र आशिकअली इसी पौधे के फल हैं।

सम्राट औरङ्गज़ेब ने देहली में सब गायकों, किन्नरों और कथकों को अपने दरबार से निकाल दिया था। औरंगजेब के पश्चात् मोहम्मद शाह रंगीले के काल में सदारंग के अतिरिक्त कथक भी नौकर थे। सम्राट अकबर के समय में श्री स्वामी हरिदास के चेलों से ही देहली पंजाब में नर्तकियों (Dancing Girls) को नृत्य की शिक्षा दी जाती थी। कालकाप्रसाद बृन्दादीन के पूर्वज पंजाब के ही रहने वाले थे। सम्राट औरंगजेब के पश्चात् जब मुगल राज्य नवाबों के हाथ आया तो यह वंश देहली से कूच करके लखनऊ में जा बसा। उस्ताद बूटेखाँ, गढ़शंकर, हुशियारपुर पंजाब और रामलोटन कत्थक (स्वर्गवासी अवस्था ६५ वर्ष) श्री अयोध्या जी से हमें पता चला है कि संयुक्त प्रान्त के बहुत से कत्थक और काश्मीरी पंडित पंजाब से ही संयुक्त प्रान्त में जा बसे थे। अब तक काश्मीर पंडितों के वंशज संयुक्त प्रान्त में रहते हैं।

नवाब आसफुद्दौला लखनऊ के दरबार में एक पंजाबी मियां शोरी भी थे जिन्होंने टप्पे का आविष्कार किया था। संयुक्त प्रान्त के सब कत्थक मियां शोरी के शिष्य हैं। कारण कि ये कत्थक आज कल सब टप्पा ही गाते हैं।

नवाबों के समय में तानसेन के वंशज देहली पंजाब से रियासत रामपुर (यू० पी०) चले गये थे। अब भी उनके वंशज बज़ीर ख़ां आदि रामपुर में ही रहते हैं। लखनऊ के

अन्तिम नवाब वाजिदअली ख़ां के समय में कालकाप्रसाद वृन्दादीन का सितारा चमका। ये दोंनों भाई बृटानीय राज्य की महारानी विक्टोरिया तथा सम्राट एडवर्ड सप्तम तक रहे। वास्तव में संयुक्त प्रान्त की सब नर्तकियां इनकी शिष्य हैं। जयपुर राजपूताना के बारेठ अर्थात् ढोलिये आदि सब इनके ही शिष्य हैं। इनके अतिरिक्त बनारस लखनऊ का तो बच्चा २ इनको मानता है। कलकत्ता, बम्बई, रंगून तक इनके शिष्य देखे हैं। आधुनिक काल में भी श्री अच्छन, शंभू और बुच्चू, कालकावृन्दा के सुपुत्र नृत्यकला में अद्वितीय हैं।

श्रीमान् महाराजा चक्रधरसिंह K. C. S I. रायगढ़ नरेश (C. P.) और उनके शिष्य कल्याण आदि अच्छे नृत्यकार हैं। श्रीमान् महाराजा बहादुर के स्वयं मैंने दर्शन किये हैं ये भी श्रीयुत अच्छन के शिष्य हैं। महाराजा बहादुर भारतीय राजों महाराजों, नवाबों में अद्वितीय नृत्यकार है।

नृत्य क्या है ?

साङ्केतिक विज्ञान Chirology प्रकृत विज्ञान Physics की ही एक शाखा है, इसके तीन प्रकार हैं:—नृत्य, नृत्त, और नाट्य

(१) नृत्यः—साङ्केतिक विज्ञान की ऐसी शाखा है, जिसमें काल मान रसानुसार सविलास हाव भाव सहित अङ्ग क्रिया की जाय। यथा कथक नृत्य का तथ्कार और संस्कृत नृत्य का तथ्कार और क्रमलय।

(२) नृत्तः—साङ्केतिक विज्ञान की दूसरी शाखा है। जिसमें अभिनय रहित आश्चर्यजनक अङ्ग विक्षेप मात्र हो। यथा कथक नृत्य का क्रमलय (त्रिमलू) संस्कृत नृत्य का वीररस और व्यायाम Gymnastics का क्रमलय और योरोपीय आदि विदेशियों का नाटकीय नृत्य Ballet Dance.

(३) नाट्य—साङ्केतिक विज्ञान की तीसरी शाखा है, जिसमें केवल नाटक Drama तथा दर्शक भाषक यंत्र film Talkies आदि में कोई खेल (नाटक)। कई लोग यह समझते हैं, कि केवल पाँव में घूंघरू बाँधकर नाचने का नाम ही नृत्य है। किन्तु यह उनकी भूल है, वास्तव में नृत्य कई विज्ञानों का मिश्रण है, जिसमें से सङ्गीत Music कविता Paetry, चित्रकारी Painting, प्रतिमा मूर्ति करणं Sculpture आदि ललित कलाएं Fine Arts लयमापक विज्ञान, Kinematics और व्यायाम Gymnastics आदि दिखाया जाता है।

नृत्य के भेद—

नृत्य के प्रायः चार भेद हैं:—

(१) पौराणिक नृत्य अर्थात् प्राचीन धार्मिक नृत्य Worship, Descriptive, Orginastic, Traditional Dance,

(२) साहित्यक नृत्य अर्थात् कविता नृत्य Poetic Dance.

(३) देशीय नृत्य अर्थात् जाति नृत्य National Dance.

(४) संस्कृत नृत्य Classical Dance.

पौराणिक नृत्य

का आदि कारण प्राचीन धर्म है, हमारे धार्मिक ग्रन्थों के आधार पर अथवा पुरातत्व विज्ञान Archaeology के शिला लेखों, हस्तलेखों (manuscript) मूर्तियों और प्राचीन काल की चित्रकारी Painting, प्राचीन लेखन विज्ञान Palaegraphy, चित्रलिपि विज्ञान Hieroglyphic आदि से प्राप्त किया गया है। यथा ताण्डव नृत्य, लास्य नृत्य, त्रिभङ्गी नृत्य प्राचीन हिन्दू नृत्य (ब्राह्मणी नृत्य) बौद्धीनृत्य, शास्त्रोक्त नृत्य, भरत नाट्य शास्त्र के रचियता भरत का भरत नृत्य (जिसमें अधिकांश संस्कृत नृत्य की स्थिति प्रस्तार The permutation of the bodily positions. के अनुसार कर मुद्राएँ दिखलाई जाती हैं)

एलोरा, अजन्ता, एलिफैंटा, भुवनेश्वर, मिश्र, ग्रीस आदि के पुरातत्व विभाग Archaelogical Department को मूर्तियों के अनुसार नृत्य, जिन्हें मार्गी नृत्य भी कहते हैं।

२—साहित्यक नृत्य Poetic Dance.

भारतीय साहित्य के अनुसार स्थायी भावों underlying motions, विभावों excitements, अनुभवों Ensuants, व्यभचारी या संचारी भावों Accessory emotions से रसों sentiments की उत्पत्ति यथा कथकों का सांकेतिक भाव (बतावा)

३—देशी नृत्य अथवा जाति नृत्य National Dance

संसार के भिन्न २ देशों में भिन्न २ प्रकार से किया जाता है। यथा मणिपुर नृत्य, टैगोर नृत्य, कथाकाली आदि दक्षणी नृत्य Oriental Dance (जिसे उदयशङ्कर, रागिनी देवी, मणिवर्धन, सिम्की, अमलानन्दी, मैनका, कमला कुमारी, कनकलता, अजूरी, लीला देसाई, नम्बूदरी, गोपीनाथ आदि नाचते हैं) विदेशी नृत्यः—योरोपीयन, जावा, ब्रह्मा, के नृत्य, बीजनं नृत्य Japanese fan dance. ग्रामीण नृत्य, Rustic Dance:—गरवा, धागर, देवदासी, मारवाड़ी, पंजाबी, बङ्गाली, कहरवा और वेश्या नृत्य इत्यादि।

४—संस्कृत नृत्य Classical Dance.

में कथक नृत्य की क्रमलय (प्रिमलू) के अनुसार साहित्य Literature, Rhetoric के गद्य Prose और पद्य Poetry को तबले (बौद्वपटः) को पर्णों के अनुसार नृत्य संयोजन अर्थात् नृत्य रचना Dance Composition को ही संस्कृत नृत्य कहते हैं। संस्कृत नृत्य में पौराणिक, साहित्यक, देशी (जाति) नृत्य और कथक नृत्य की क्रमलय (प्रिमलू) भी दिखाई जाती है। इस नृत्य के आविष्कारक इसी लेख के लेखक हैं। वास्तव में कथक नृत्य एक प्रकार का संस्कृत नृत्य है, किन्तु इसकी प्रिमलू में केवल भाव शून्य क्रमलय (प्रिमलू) का तबले की पर्णों के आधार पर होने से कथक नृत्य अर्थात् प्राकृत नृत्य होजाता है। यदि इस प्रिमलू के स्थान पर तबले की लय के अनुसार पर्णों आदि पर साहित्य की गद्य और पद्य रचना करदें तो यही संस्कृत नृत्य होजाता है।

प्राकृत और संस्कृत नृत्य—

पौराणिक, साहित्यक, देशी अर्थात जाति नृत्य वास्तव में प्राकृत नृत्य हैं, परन्तु ये किसी समय में संस्कृत नृत्य थे, जो बिगड़ते २ प्राकृत होगये। उदाहरणार्थ प्राकृत भाषा से ही संस्कृत देव भाषा बनाई गई थी, किन्तु इसी का प्राकृतिक रूप भारतवर्ष की अनेक भाषाएँ हैं। अतः हिन्दी भाषा एक ऐसी भाषा है, जिसकी देव नागरी लिपि और शब्द बहुत कुछ संस्कृत से मिलते जुलते हैं, इसकी तुलना संस्कृत भाषा के साथ इस प्रकार से है। जैसे कथक नृत्य की संस्कृत नृत्य से।

कथक अर्थात् हिन्दी नृत्य—

कथक शब्द का अर्थ नर्तक Dancer है, वास्तव में इस नृत्य का नाम हिन्दी नृत्य होना चाहिये, इसमें हाव भाव का प्रदर्शन (बतावा) किया जाता है। किन्तु इसकी तबले (बौद्धी पटः) की पर्णों के आधार पर भाव शून्य क्रमलय (जिसका अपभ्रंश शब्द प्रिमलू है) में लय Rythm के व्यायाम Gymnastics की भांति के निरर्थक अङ्ग कम्प तथा अङ्ग विक्षेप के अतिरिक्त और किसी प्रकार का साहित्यक हाव भाव नहीं दिखा सकते, परन्तु हाव भाव दिखाने के लिए किसी कविता के आधार पर ही कुछ गाकर बतावा किया जाता है। जिस प्रकार से कथक नृत्य में शृङ्गार रस दिखाया जा सकता है, संसार के किसी भी नृत्य में नहीं पाया जाता।

कथक नृत्य के दोष—

१—तथ्कार से यह पता नहीं चल सकता कि अमुक अक्षर तथा शब्द दायें पाँव से निकालना चाहिये कि बायें पाँव से।

२—क्रमलय (प्रिमलू) के बोलों के निरर्थक शब्दों से यह पता नहीं चल सकता है, कि कथक तथ्कार के पश्चात् अपने शरीर के अङ्गों से जो क्रमलय निकाल रहा है उसका क्या अर्थ है।

शृङ्गार रस में पटे बाज़ी Fencing और व्यायाम Gymnastics दिखाकर वीर रस उत्पन्न करना कहाँ की बुद्धिमानी है ?

संस्कृत नृत्य के गुण—

१—नृत्य के तथ्कार से ही पता चलजाता है, कि अमुक पाँव अथवा अङ्ग से अमुक अक्षर तथा शब्द (बोल) निकालना चाहिये।

२—क्रमलय (प्रिमलू) के सार्थक शब्दों से सुगमता से ही तथ्कार के पश्चात् सार्थक अक्षरों, शब्दों, वाक्यों, गद्यों और पद्यों में ही तबले की क्रमलय पर ही साहित्य दिखाया जा सकता है।

३—शारीरिक स्थिति प्रस्तार The Permutation of the Positions of the Human body में संसार भर के नृत्यों यथा पौराणिक, साहित्यक देशी अर्थात् जाति नृत्य की स्थितियों के अतिरिक्त कथकों के नृत्य की निम्न लिखित स्थितियां भी ाजाती हैं:—

१-अञ्चल नृत्य (बैठक की गति), २-कुच नृत्य, ३-संयुक्त कर नृत्य (अंगुली मेलनी नृत्य), ४-कटि नृत्य (कमर की गति), ५-अवगुन्ठ नृत्य (घूंघट की गति), ६-मुकुट नृत्य, ७-पत्त बंधन नृत्य, ८-बन्शी नृत्य, ९-मुकुट बन्शी नृत्य, १०-पात्र नृत्य (थाली नृत्य), ११-पात्र नृत्य (थाली कटोरा नृत्य), १२-चिवुक नृत्य १३-अङ्गुष्ठ दर्शक नृत्य, १४-पुरुष नृत्य (मरदानी गति), १५-मयूर नृत्य (मोर की गति), १६ पारावत नृत्य (लक़ा कबूतर का नृत्य),

४—पौराणिक साहित्यक और देशी तथा जाति नृत्य कथक नृत्य या संस्कृत नृत्य के आधार पर नाचे जा रहे हैं, उनमें लय Rythm का विशेष कार्य है, इसलिये ये नृत्य संस्कृत रूप की श्रेणी में होने के कारण सर्व श्रेष्ठ कहे जाते हैं।

हिन्दी नृत्य अर्थात् कथक नृत्य के आचार्य—

१—स्वर्गवासी श्री स्वामी हरिदास जी मुलतान (पंजाब)। जो कि तानसैन बैजू बावरा आदि और कालकाप्रसाद बृन्दादीन के वंशज के गुरु थे, और पंजाब से बृन्दावन में चले आये थे।

२—कालका प्रसाद, बृन्दादीन स्वर्गवासी, लखनऊ (यू० पी०)

३—खां साहिब बूटेखां गढ़शङ्कर होश्यारपुर पंजाब।

४—श्रीयुत् अच्छन, शम्भू, लुच्चू सुपुत्र बृन्दादीन लखनऊ।

५—बड़े रामदास, श्यामसुन्दर, शिवसुन्दर, उनके लड़के रामाशङ्कर, दाऊ जी बनारस (यू० पी०)

६—जयपुर राजपूताना के बारेठ, (ढोलिये) भी नृत्य का काम करते हैं, जानकीप्रसाद लखनऊ वालों के ही शिष्य थे, हनुमान स्वर्गवासी के वन्श में से गोवर्धन, चिरञ्जीलाल, जयालाल, बदरी, मोहनलाल, नारायण, कन्हैयालाल सारङ्गिया आदि बारेठों के पूर्वज़ लखनऊ वालों के ही अनुयायी होने के कारण श्री स्वामी हरिदास जी मुलतान पंजाब के ही अनुयायी कहे जाते हैं।

आधुनिक नृत्य में से जो पुरातत्व विभाग की मूर्तियों और चित्रकारी आदि को देखकर तथा पौराणिक और देशी नृत्य के आधार पर तबले की पर्णों के प्रतिकूल ही लय शून्य बनाये गये हैं, इनमें लय का नाम मात्र ही प्रयोग है। कथक नृत्य की तो इससे तुलना ही करना विद्वानों का काम नहीं हैं। इन नृत्यों से योरोप, अमेरिका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, आदि महाद्वीपों के मानव समाज को ही ठगा जा सकता है। कारण यह है के वे लोग केवल त्रैमात्रिक काल, और चार मात्रिक काल से अधिक मात्रों में नहीं नाच सकते, और न उन बेचारों को क्रमलय (प्रिमलू) का ही ज्ञान है। अतः यदि भारतवर्ष का कोई भी साधारण नर्तक विदेशों में नर्तकियों Dancing girls को लेकर चला जाता है, तो भारतवर्ष में विश्व विख्यात माना जाता है। धन कमालेना या ख्याति प्राप्त करलेना कुछ और बात है, किन्तु विद्वानों के समान

किसी रङ्ग भूमि में काम दिखाना और बात है। इस दक्षिणी नृत्य Oriental Dance के नर्तक ये हैं:—

उदयशङ्कर, मणिवर्धन, सिम्की, अमलानन्दी, मैनका, कनकलता, अजूरी, रागिनी देवी, लीला देसाई, कमलाकुमारी और कथाकाली नृत्य के नर्तक नम्बूदरी और गोपीनाथ हैं।

विदेशी नृत्य

हमने अपनी पुस्तक "नृत्य विज्ञान" में संसार भर के देशी तथा जाति नृत्यों National Dances, साहित्यक और पौराणिक नृत्यों को सिद्ध करके दिखला दिया है, कि ये सब भारतवर्ष के ही नृत्य हैं। उनमें से कतिपय नृत्यों का दिग्दर्शन किया जाता है:—यथा

योरोपीय नृत्य Europeon Dances

(1) The Valse A trois Temps or Waltz = चक्रिन नृत्य
(2) Polka = कृषक कन्या नृत्य
(3) Polka Mazurka = कृषक नृत्य
(4) The Quadrille and Lancers = वर्ग नृत्य और सैनिक नृत्य
(5) Minutes, Paranese, Gavottes = देशी नृत्य
(6) Fandango = गमन नृत्य
(7) For trot = श्रृगाल गमन् नृत्य
(8) Quick Steps = शीघ्र पद् नृत्य

जापानी नृत्य Japanese Dance.

(१) वीजनं नृत्य = Japanes fan Dance

चीनी नृत्य Chinese Dances.

(1) Shield and Axe Dance = खड़ग चर्मधर नृत्य
(2) Feather Dance = पङ्ख नृत्य
ब्रह्मा और जावा नृत्य Burma, Java Dances इत्यादि

—o—

नृत्य के भाव।

(लेखक – श्री० बैनीप्रसाद श्रीवास्तव "भाई" प्रोफ़ेसर आफ म्यूजिक)

इस लेख में विद्वान लेखक ने "नृत्य के ख़ास-ख़ास भाव कैसे दिखाने चाहिये"? यह भली प्रकार समझाया है! आशा है इस लेख से नृत्यकला के विद्यार्थियों को यथेष्ट लाभ पहुँचेगा। —सम्पादक

तैयारी—

जिस समय एक उच्च-कोटि का नृत्य किसी कलाकार को बहुसंख्यक दर्शकों के बीच में दिखाना हो तो सब से पहले उसका यह कर्तव्य होगा कि वह अपने साजिंदों से सभी साज़ एक दिल मिलवा कर तैयार रक्खे, फिर अपने नाचने के स्थान के पास ही सभी साज़िदों को अपने-अपने साज़ क़ायदे से लेकर अच्छे ढङ्ग से बैठादे, तथा एक उत्तम समय का विचार करते हुये कोई लहरा, शुद्ध राग, ताल और लय के साथ बजाना आरम्भ करादे।

दर्शकों के सामने—

आकर एकबार सबकी ओर देखे, ताकि सभी दर्शकों का ध्यान अच्छी तरह से आपकी कला-प्रदर्शन की ओर आकर्षित हो जावें। उत्तम सङ्गीत के लहरे की मधुर गूंज में सब दर्शकों की ओर देखते हुये एक—

मङ्गलाचरण—

किसी आमद वाले टुकड़े से हाव-भाव के साथ टुकड़े के बोलों को पैरों से बांधे घूंघरू की मीठी झनकार से उच्चारण करते हुये ठीक लहरे और ताल की सम पर आकर किसी भी गति का भाव, जो आप दिखाना चाहें, गंभीर नृत्य का प्रबन्ध हाथ-जोड़कर या सलाम का भाव दिखाते हुये चन्द सैकिंड के लिये ज्यों का त्यों बुत बन जाये। बाद एक या दो आवृतियां, ताल, लहरे की हो जाने पर जब आप—

गति लेना—

आरम्भ करें तो पहिले दाहिने पैर को उठाते हुये डेढ़-बालिस्त के अन्तर से पैर सीधे क्रमानुसार जमीन पर खिसकाते हुये रक्खें, तथा फिर पैर को तिरछा रखकर गति लेवें। जब ताल और लहरे का समय निकट आता दिखाई दे तो चार या आठ मात्रा पहले ही से द्रुत लय में या चौगुन (जो भी निभाया जा सके) में होकर ठीकों-ठीक सम पर दोनों हाथों को कमर पर रख, अपने को चन्द सैकिंड के लिये बुत-सा बनादें, तथा एक दो आवृति, ताल, लहरे की हो जाने के बाद ताली देकर (आवाज़ के साथ) ताल, लहरे की लय से मिलते हुये, ताल, लय से बंधे हुये और खूब याद किये हुये—

नृत्य के बोल—

दर्शकों के सम्मुख अच्छी आवाज़ के साथ पढ़कर सुनावें, उसके बाद पैरों से नृत्य करके दिखावें, तथा नृत्य करते समय यह अच्छी तरह से ध्यान रखते हुये ठीक—

कबूतर की तरह—

आहिस्ते आहिस्ते सिर को हिलाते जावें और नेत्र दर्शकों के सामने रहें, लेकिन किसी भी दर्शकों की नज़र से नज़र न मिलने की चेष्टा बनाये रक्खें, तथा ठीक समय पर आकर किसी भी मनचाही गति की एक सुन्दर कल्पित मुद्रा बनाकर थोड़े सैकिंडों के लिये ठीक बुत सा बन जाय, इसी प्रकार से जितने भी नाच के बोल पढ़कर सुनाने तथा नाचने हों, ताली से ताल और लय से मिलाते हुये, बोलों को आवाज़ के साथ पढ़-पढ़कर सिलसिलेवार अपने नृत्य को कुशल बनाते जायें, तथा हर बोल नाचने के बाद इच्छानुसार गति की मुद्राओं को बनाते जांय।

नृत्यकला का भाव प्रदर्शन—

नृत्यकला में यों तो सभी बातें बहुत कठिन हैं, लेकिन भाव का प्रदर्शन तो निहायत ही मुश्किल काम है, तथा इससे भी मुश्किल तो गीत गाकर भावों का प्रदर्शन करना है, जो सिवा लखनऊ के एक दो गुणियों को छोड़कर कहीं देखने में नहीं आसके। नृत्यकला के भाव प्रदर्शन में—

सोलह कला—

मुख, हाथ, पांव, नेत्र और भृकुटियों को सुन्दर ताल, लय और लहरे के मधुर प्रवाह के साथ ही नचाते हुये नृत्य का प्रदर्शन करना चाहिये, ताकि जो भाव आप दर्शकों को दिखाना चाहते हैं, ठीक ज्यों का त्यों बताया जा सके। जैसेः—

'दिल की परेशानी' का भाव—

आप दर्शकों को दिखाना चाहते हैं तो श्वांस को खींच लें, तथा कलेजे पर हाथ रखकर हलकी सी हरकत सीने की दिखाते हुये (जोरों से नहीं कि देखने वालों को आप बेवकूफ मालुम पड़ें) बल्कि भृकुटियों को बहुत ही धीमे नचाने से ही दिल की परेशानी का भाव अनुभव किया जा सके, अब इस दिल की परेशानी या दिल की धड़कन का भाव दिखाने के बाद आप यदि—

वीर रस का भाव

दर्शकों को दिखाना चाहते हैं, और चाहते हैं कि कुशलता पूर्वक दिखाये जा सकें तो यों वीर रस के सैकड़ों भाव प्रदर्शित किये जासकते हैं, पर मैं अपने पाठकों को केवल दो ही वीर रस के भाव प्रदर्शन की एक सूक्ष्म रूप रेखा बताने की चेष्टा करूंगा, जिससे आपको वीर रस के किसी भी भाव का प्रदर्शन करने में सहायता मिल सके। ज्ञान होजाने पर सभी प्रकार के शस्त्रों के भाव का प्रदर्शन आसानी से किया जा सकता है, मान लीजिये कि आप दर्शकों को—

धनुषवाण द्वारा वीर रस का भाव—

दिखाना चाहते हैं, तो दोनों हाथों से कल्पित धनुषवाण प्रत्यक्ष धनुषवाण ही की तरह हाथों में लेकर नृत्य करते हुये या कभी नृत्य की समाप्ति पर ठीक सम पर धनुषवाण की वीर मुद्रा बनाकर गम्भीर भाव से आकर बुतसा बन जायें, इसी तरह—

'कृपाण' द्वारा वीर रस का भाव—

भी प्रदर्शित होना चाहिये, तथा जितने भी वीर रस के हों चाहे धनुषवाण का हो या तलवार और चाहे पिस्तौल आदि के हों, सभी वीर रस के प्रदर्शनों में, जितनी भी वीरता दिखाने की चेष्टा की जायगी, उतनी ही नृत्य की कुशलता मानी जायगी, अब आगे चलकर यदि आप—
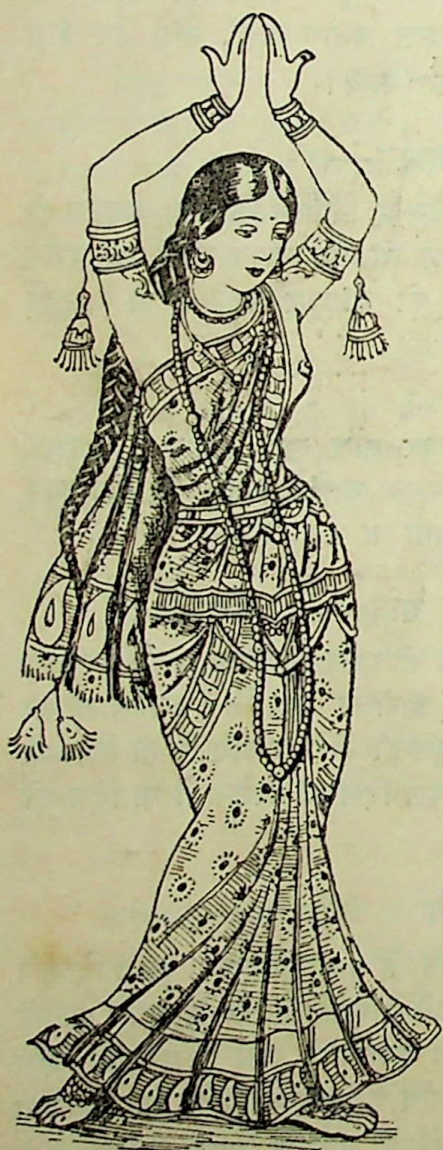
(दोनों हाथों से मुकट का भाव)

'मुकट' का भाव—

दिखाना चाहते हैं, तो आपको चाहिये कि एक हाथ के खुले बन्द पंजे को सिर पर कल्पित मुकट के सामान बनाकर रखें तथा दूसरा हाथ कमर पर रख व एक पैर दूसरे पैर से आगे होकर तिरछे पंजों के बल खड़े होकर उपर्युक्त ढंग से ही भाव प्रदर्शित किये जांय (केवल नेत्र से शान्तिप्रियता का भाव दरसावें) इसी तरह नृत्यकला से प्रेम रखने वाले नर नारियों को नृत्यकला के और अनेक भावों को जैसे 'बांसुरी' 'पनिहारी' 'घूंघट' 'ठोड़ी' 'गाल' 'वक्षस्थल' 'सीना' 'नट' 'वर्षा' 'मोर' और 'कमर' आदि के सभी भाव के प्रदर्शन में अच्छा अभ्यास पहले ही से एक बड़े आइने के सामने कर लेना चाहिये। याद रक्खें, यह सभी बातें बड़े परिश्रम से तथा रोज़ अभ्यास करने से सिद्ध होंगी।

दोनों हाथों से मुकट का भाव—

दोनों हाथों से मुकट की गति दर्शाने के लिये कलाकार को चाहिये कि दोनों हाथों के खुले बन्द दोनों पञ्जों का कल्पित मुकट बनाकर सिर के ऊपर ऐसे ढङ्ग से रक्खे कि दर्शकों के सामने ही रहे, तथा बीचों-बीच स्थान से नृत्य करता हुआ ठीक सम पर माथा और सीना को उभारते हुये बिलकुल चुपचाप खड़ा हो जाय, ठीक अदा होने पर लोग चकित हो जांयगे।

'बल'—

नृत्यकला में दोनों हाथों को कमर पर रखकर जिस तरह आगे को बढ़ना होता है, ठीक उसी तरह पीछे लौटने को 'बल' या कोई-कोई गुणीजन 'पलट' भी कहते हैं। 'बल' के प्रदर्शन में कहीं से भी पैर और कमर न मुड़ने चाहिये और न दृष्टि ही नीचे को गिरनी चाहिये।

'घूंघट' का भाव-

यों तो घूंघट के भाव कई प्रकार से दिखाये जाते हैं, परन्तु लेख बहुत लम्बा होने के ख़याल से मैं सिर्फ एक ही प्रकार के घूंघट भाव को बताने की चेष्टा करूंगा, वह इस तरह कि घूंघट के भाव में कमर पर एक हाथ रखकर दूसरे हाथ के पञ्जों को सिर से धीरे-धीरे खिसकाते हुये (नृत्य करने के साथ ही हाथ के पंजों का सिर से खिसकाना भी लय के साथ ही साथ होना चाहिये) नीचे मुख के होठों तक लाइये,

(कमर की गति का १ भाव)

(मांथे से होठों तक हाथ के पञ्जों के आने की रफ़्तार चौगुन लय से अदा होनी चाहिये, लेकिन पैर के चलने की रफ्तार पैर में नृत्य के बोलों के ही अनुसार क़ायम रहनी चाहिये) तथा ठीक सम पर घूंघट की चुटकी मारकर शीघ्र ही झटक कर घूंघट खोलने की तरह पर कल्पित घूंघट खोलकर बल खाता हुआ कमर को बल देते हुये दर्शकों की ओर नेत्रों को घुमाकर घूंघट के अन्दर से देखे, तथा एक दो सैकिंड तक चुपचाप ज्यों का त्यों खड़ा हो जाय, (यह बातें ठीक सम पर बिजली की तरह अदा होने ही में नृत्यकला की विशेषता है।) भावों का ठीक-ठीक अदा हो जाना ही उच्च-कोटि की नृत्यकला हो जाती है। इसी एक घूंघट के भाव में सभी प्रकार के रसों के भाव कुशल कलाकार दिखाया करते हैं। इसी घूंघट का भाव प्रदर्शन मैंने प्रयाग विश्वविद्यालय के सङ्गीत सम्मेलन में लखनऊ शहर के नृत्यकला के आचार्य श्री शम्भू जी महाराज का

बांसुरी तथा घूंघट और पिचकारी आदि के भाव ऐसे दिखाये थे कि उनकी झूंठी नकल करना भी बहुत कठिन है, लिख के बताना तो बहुत दूर की बात है, फिर भी नृत्यकला के प्रेमी-गण मेरे इतने ही लिख देने से बहुत कुछ समझने की चेष्टा करेंगे।

अब मैं जैसा नृत्यकला के भाव प्रदर्शन के सम्बन्ध में पाठकों को अभी तक बताता आया हूं, ठीक दूसरे भाव भी जैसे—मुरली, पनिहारी, मोर, ठोड़ी आदि के सभी भाव दरसाये जा सकते हैं।

नृत्यकला प्रेमी पाठक अब यह खूब समझ गये होंगे कि विषय कितना कठिन है, नृत्यकला की सोलह प्रकार की कलाओं की असंख्य गति हैं, इस कारण यहां पर सूक्ष्म रीति से कुछ बताई हैं।

—*—

गगरी नृत्य

(४) आमद, दून की तरकीब सहित

लहरे के बोल—	ध म रमपध प	धम रमपधप -पध मरसर	ध म -पध मरसर	ध म -पध मर सर
नृत्य के बोल—	ता थेई थेई तत	ताथेई थेईतत -थेई थेईतत	ता तत -थेई थेईतत	ता तत -थेई थेईतत
पैरों के चिन्ह—	१ २ १ २	१,२ २,१ -२ २,१	१ १ -२ २,१	१ १ -२ २,१
तबले के बोल—	ताधिन धिनता ताधिन धिनता	धाकिटतक तेरेकत -तिरकिट नगतातिरकिट	धा कत्त -तिरकिट नगतातिरकिट	धा कत्त -तिरकिट नगतातिरकिट
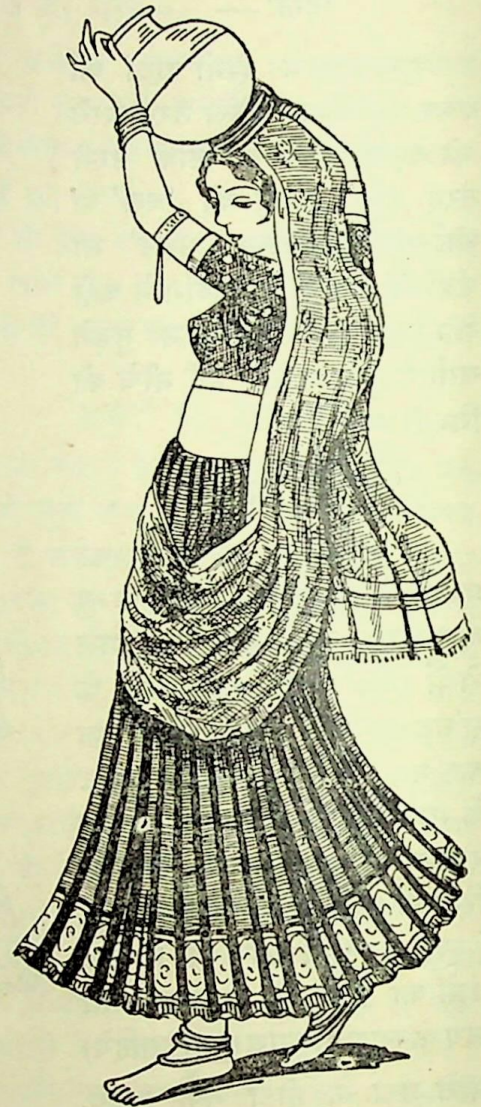
नोट—फिर नं० ३ तीन वाले ठेके पर एक दो आवृति के लिये आजाइये। इसके बाद फिर–

(५) नृत्य के बोल की पहली चलन फिरन।

लहरे के बोल—	ध म रमपध प	- पध मर सर	सर मप धसं मप	धसं धप मर सर
नृत्य के बोल—	ता थेई तत थेई	- थेई थेई तत	थेई तत तत ता	थेई थेई थेई तत
पैरों के चिन्ह—	१ २ १ २	- २ २ १	१ २ २ १	१ २ २ १
तबले के बोल—	धा तेटे तत तेटे	कत्त तेटे तेटे कत्त	तेटे कत्त ता धा	तेटे तेटे तेटे कत्त

४३-५६ तक पेज नहीं है

(६) नृत्य के बोल की पहली चलन फिरन, दून की तरकीब से

लहरे के बोल—	धम रमपधप– –पध मरसर	रमप धसंमप धसंधप मरसर	पमप धसंमप धसंधप मरसर	पमप धसंमप धसंधप मरसर
नृत्य के बोल—	ताथेई ततथेई –तेई थेईतत	थेईतत ततता थेईथेई थेईतत	तातत ततता थेईथेई थेईतत	तातत ततता थेईथेई थेईतत
पैरों के चिन्ह—	१,२ १,२ –२ २,१	१,२ २,१ १,२ २,१	१,२ २,१ २,१ २,१	१,२ २,१ २,१ २,१
तबले के बोल—	धातेटे तततेटे कत्ततेटे तेटेकत्त	तेटेकत्त ताधा तेटेतेटे तेटेकत्त	धाकत्त ताधा तेटेतेटे तेटेकत्त	धाकत्त ताधा तेटेतेटे तेटेकत्त

नोटः— फिर नं० ३ वाले बोलों पर एक दो आवृति के लिये आजाइये, इसके बाद—

(७) नृत्य के बोल की दूसरी चलन फिरन

लहरे के बोल—	सर	मर	रम	पम	मप	धसं	धप	मर	पम	धप	धसं	मप	धसं	धप	मर	सर
नृत्य के बोल—	ता	थेई	तत	थेई	थेई	थेई	तत	थेई	अ	थेई	थेई	तत	थेई	तत	ता	थेई
पैरों के चिन्ह—	१	२	१	२	२	२	१	२	–	१	२	१	१	२	१	२
तबले के बोल—	धा	तेटे	तत	तेटे	तेटे	तेटे	कत्त	तेटे	अ	तेटे	तेटे	कत्त	तेटे	कत्त	धा	कत्त

लहरे के बोल—	धसं	धप	मर	सर	सं	–	धसं	धप	मर	सर	प	–	धस	धप	मर	सर
नृत्य के बोल—	तत	थेई	थेई	तत	ता	–	तत	थेई	थेई	तत	ता	–	तत	थेई	थेई	तत
पैरों के चिन्ह—	१	२	१	२	१	–	१	२	१	२	१	–	१	२	१	२
तबले के बोल-	कत्त	तेटे	तेटे	कत्त	धा	–	कत्त	तेटे	तेटे	कत्त	धा	–	कत्त	तेटे	तेटे	कत्त

नोटः—फिर उसी प्रकार नं० ३ पर एक दो आवृति के लिये आजाइये।

८—नृत्य के बोल की दूसरी चलन फिरन का दून की तरकीब से (पांच धा)

लहरे के बोल—	सर	मर	सरमर	रमपम	मपधसं	धपमर	पमधप	धसंमप	धसंधप	पमधप	धसंमप	धसंधप	पमधप	धसमप	धसंधप	मरसर
नृत्य के बोल—	ता	थेई	ताथेई	ततथेई	थेईथेई	ततथेई	अथेई	थेईतत	थेईतत	अथेई	थेईतत	थेईतत	अथेई	थेईतत	थेईतत	ताथेई
पैरों के चिन्ह—	१	२	१,२	१,२	२,२	१,२	–२	१,२	१,२	–२	२,१	१,२	–२	१,२	२,१	१,२
तबले के बोल—	धा	तेटे	धातेटे	तततेटे	तेटेतेटे	कत्ततेटे	अतेटे	तेटेकत्त	तेटेकत्त	अतेटे	तेटेकत्त	तेटेकत्त	अतेटे	तेटेकत्त	तेटेकत्त	धाकत्त

लहरे के बोल—	धसं	धप	धसंधप	मर सर	सं-	धसंधप	मरसर	प-	धसंधप	मरसर	प-	धसंधप	मरसर	प-	धसंधप	मरसर
नृत्य के बोल—	तत	थेई	ततथेई	थेईतत	ता-	ततथेई	थेईतत	ता-	ततथेई	थेईतत	ता-	ततथेई	थेईतत	ता-	ततथेई	थेईतत
पैरों के चिन्ह—	१	२	१,२	१,२	१-	१,२	१,२	१-	१,२	१,२	१-	१,२	१,२	१-	१,२	१,२
तबले के बोल—	कत्त	तेटे	कत्ततेटे	तेटेकत्त	धा-	कत्ततेटे	तेटेकत्त	धा-	कत्ततेटे	तेटेकत्त	धा-	कत्ततेटे	तेटेकत्त	धा-	कत्ततेटे	तेटेकत्त

नोट—फिर नं० ३ पर एक दो आवृति के लिये आ जाइये, इसके बाद:—

(६) पहले मुंह से बोलों की ताल देकर पढ़ें, फिर नाचें।

लहरे के बोल—	धा	-	म	-	रम	पध	प	-	संध	-सं	ध	रस	म	रप	-म	ध
नृत्य के बोल—	ता	-	थे	ई	थे	ई	त	त	तका	अत	काआ	तक	थूऊं	गथूं	ऊंग	तत
पैरों के चिन्ह—	१	-	२	-	१	-	२	-	१,२	-१	२-	१,२	१-	२,१	-२	१
तबले के बोल—	ता	धिन	धिन	ता	ता	धिन	धिन	ता	तिधा	अति	धाआ	तेते	धागि	नधा	गिन	तत

लहरे के बोल—	सं धप मर सर	प ध सं धप	मर सर प ध	सं धप मर सर
नृत्य के बोल—	तत तक गिद गिन	थेई तत तत तक	गिद गिन थेई तत	तत तक गिद गिन
पैरों के चिन्ह—	१ १,२ १,१ १,२	१ १ १ १,२	१,२ १,२ १ १	१ १,२ १,२ १,२
तबले के बोल—	तित तक गदि गन	धा तित तित तक	गदि गन धा तित	तित तक गदि गन

(१०) अब दून की लय में नम्बर ६ को इस तरह नाचैं।

लहरे के बोल—	ध म रमपध प-	संध-सं ध-रस म-रप -मध-	सं-धप मरसर पध सं-धप	मरसर पध सं-धप मरसर
नृत्य के बोल—	ता थेई थेई तत	तकाग्रत काग्रातक थूऊंगथूंऊंगतत	तततक गदिगन थेईतत तततक	गदिगन थेईतत तततक गदिगन
पैरों के चिन्ह—	१ २ १ २	१,२-१ २-१,२ १-२,१ -२,१	१,१,२ १,२ १,२ १,१ १,१,२	१,२ १,२ १,१ १ १,२ १,२ १,२
तबले के बोल—	ताधिन धिनता ताधिन धिनता	तधाग्रत धाग्रातत धागेनधा गिनतत	तततक गदिगन धातत तततक	गदिगन धातत तततक गदिगन

नोटः— फिर नं० ३ "ठेके पर नृत्य के बोलादि" पर एक दो आवृति के लिये आजांय, बाद उसके—

(११) जन रंजन के लिये बोल, पहले मुंह से बोलों को ताल लय से पढ़ दें, फिर नाचें।

इसके बाद दून में इसीको ज्यों का त्यों नांच जायं।

लहरे के बोल—	सं	ध	पम	र	स	र	मप	ध	सं	ध	रं	संध	–प	म	र	स
मुँह के बोल—	हु	क्का	भर	ला	ता	जा	कर	ला	दो	नों	बै	ठम	ज़ें	से	पीं	यें
पैरों के चिन्ह—	१	२	१,२	१	१	२	१,२	१	१	२	१	२,१	२	१,२	२	१
तबले के बोल—	दिन	ता	तिरकिट	धा	कत्त	तिन	तिरकिट	धा	तिन	कत्त	धा	तिरकिट	तक	तिरकिट	तिन	तिन
लहरे के बोल—	धप	मर	सर	मप	धा	–	धप	मर	सर	मप	धा	–	धप	मर	सर	मप
मुँह के बोल—	गुड़	गुड़	गदि	गन	थे	ई	गुड़	गुड़	गदि	गन	थे	ई	गुड़	गुड़	गदि	गन
पैरों के चिन्ह—	१,२	१,२	१,२	१,२	१	–	१,२	१,२	१,२	१,२	१	–	१,२	१,२	१,२	१,२
तबले के बोल—	धेटे	धेटे	गदि	गन	धा	–	धेटे	धेटे	गनि	गन	धा	–	धेटे	धेटे	गदि	गन

(१२) फिर नं० ३ के ठेके पर एक दो आवृति हो जाने के बाद श्री शङ्कर जी के निम्नलिखित बोल पहले ताल लय में मुंह से पढ़कर दर्शकों को सुना दीजिये फिर नाचिये ! ठीक उसके दून में नांचा जाय।

लहरे के बोल—	स	सर	सर	मम	प	ध	धसं	-ध	-प	ध	धप	धम	-म	मर	सर	मर
नृत्य के बोल—	शं	कर	शिव	डम	रू	धर	जटा	-जू	-ट	धर	हर	त्रिशू	-ल	कर	धर	महा
पैरों के चिन्ह—	१	१,२	१,२	१,२	२	१	२,१	-२	-१	१	१,२	१,२	-१	१,२	१,२	१,२
तबले के बोल—	धा	किटतक	तातिर	किटतक	तिन	धा	किटतक	-तिर	-तक	धा	किटतक	तिरकिट	-धा	किटतक	तातिर	किटतक
लहरे के बोल—	-म	-प	धप	ध	ध	मर	-म	-प	धप	ध	ध	मर	-म	-प	धप	ध
नृत्य के बोल—	-दे	ऐव	नाम	हर	हर	महा	-दे	ऐव	नाम	हर	हर	महा	-दे	एव	नाम	हर
पैरों के चिन्ह—	-१	-२	१,२	१	१	१,२	-१	-२	१,२	१	१	१,२	-१	-२	१,२	१
तबले के बोल—	-तिर	-किट	तकता	धा	धा	किटतक	-तिर	-किट	तकता	धा	धा	किटतक	-तिर	-किट	तकता	धा
लहरे के बोल—	ध	-	म	-	रम	पध	प	-	र	म	प	ध	म	र	स	र
नृत्य के बोल—	र	-	थे	ई	थे	ई	त	त	श्र	श्र	थे	ई	थें	ई	त	त
पैर के चिन्ह—	१	-	२	-	१	-	२	-	२	-	१	-	२	-	१	-
तबले के बोल—	धा	-	धिन	ता	ता	धिन	धिम	ता	ता	तिन	तिन	ता	तो	धिन	धिन	ता

(१३) नृत्य को मन में कहकर पैरों से नाचने की गिनतियां, कहरवे की लय से नाची जायँगी ।

गिनतियां—	एकदो ओएक दोदो तीइन	पकदो ओएक दोदो तीईन	पकदो ओएक दोदो तीइन	पकदो ओएक दोदो तीन
लहरे के बोल--	सर –म रम प	रम –प मप ध	मप पध पध सं	पध –सं धसं रं
पैरों के चिन्ह—	१,२ –१ २,२ १	१,२ –१ २,२ १	१,२ –१ २,२ १	१,२ –१ २,२ १
तबले के बोल—	ताधिन –धिन ताता तिन	तातिन –धिन ताता धिन	ताधिन –धिन ताता तिन	ताधिन –धिन ताता धिन

लहरे के०	संमरं- संरसं- धसंध- पधप-	मपम- रमर- सरस- धसध-	सरस- रमर- प सरस-	रमर- प सरस- रमर-
गिन्ती	एकदो एकदो एकदो एकदो	पकदो पकदो पकदो पकदो	पकदो पकदो तीन पकदो	पकदो तीन पकदो पकदो
पैरों के०	१,२,१- १,२,१- १,२,१- १,२,१-	१,२,१- १,२,१- १,२,१- १, २,१-	१,२,१- १,२,१- १ १,२,१-	१,२,१- १ १,२,१- १,२,१-
तबले के ०	ताधिनता-ताधिनता-तातिनता-ताधिनता-	ताधिनता-ताधिगता-ताधिनता-ताधिनता-	ताधिनता-ताधिनता-धाकत्त ताधिनता	ताधिनता धाकत्त ताधिनता ताधिनता

१४—नृत्य को मन में कहकर पैरों से नाचने की गिनतियां कहरवे की लय से नाचने की दूसरी रविश ।

लहरे०-	सरस- रमर- मपम- पधप-	धसंध- संरसं- रंमरं- मंपमं-	पंधंप- मंपमं- रंमरं- संरसं-	धसंध- पधप- मपम- रमर-
नृत्यके०-	१,२,१-१,२,१-१,२,१-१,२,१-	१,२,१-१,२,१-१,२,१-१,२,१-	१,२,१-१,२,१-१,२,१-१,२,१-	१,२,१- १,२,१- १,२,१-१,२,१-
गिन्ती--	पकदो पकदो पकदो पकदो	पकदो पकदो पकदो पकदो	पकदो पकदो पकदो पकदो	पकदो पकदो पकदो पकदो
तबले०-	ताधिनता ताधिनता तातिनता ताधिनता	ताधिनता ताधिनता तातिनता ताधिनता	ताधिनता ताधिनता तातिनता ताधिनता	ताधिनता ताधिनता ताधिनता ताधिनता

लहरे के बोल—	-स	र	म	प	ध	रमर-	-स	र	म	प	ध	रमर-	-स	र	म	प
नृत्य के बोल—	ओतीन	चाअर	पाअच	छए	सात	एकदो	ओतिन	चार	पांच	छै	सात	एकदो	ओतिन	चार	पांच	छै
पैर के चिन्ह—	-२	१	२	१	१	१,२,१-	-२	१	२	१	१	१,२,१-	-२	१	२	१
तबले के बोल—	अधिन	ता	तिन	धिन	ता	ताधिनता	अधिन	ता	तिन	धिन	ता	ताधिनता	अधिन	ता	तिन	धिन

अन्त में यह कहना ज़रूरी है कि मेरा इस लेख के लिखने का अभिप्राय केवल नृत्य की सच्ची कला के जानने की रिवाज में सहायता देना है। फिर कभी याद होने पर सेवा में उपस्थित होऊंगा।

नृत्य के बोलों में आये हुये साङ्केतिक चिन्ह—

नृत्य के बोलों के नीचे ठीक उसी तरह पैर से निकालने के लिये गिनतियों के अत्तर काम में लाये गये हैं, जैसे दाहिने पैर के लिये १ तथा बांये पैर के लिये २, इसका ध्यान रख कर अभ्यास में लावें, वरना पैर के उच्चारण में गलती हो जायगी तथा पैर के घूंघरू के बोलों में सफाई न आसकेगी, पैरों की गिनतियां खूब विचार कर रक्खी गई हैं, जैसा कि नृत्यकला में प्रयोग का नियम है। इसलिये इसका ध्यान अच्छी तरह से रखकर ही चेष्टा करना लाभदायक होगा।

एक और दो, जैसे-जैसे शब्दों में नृत्य के बोलों के साथ या नृत्य के बोलों के स्थान पर पाये जाँय, वह सिर्फ अपने मन में ताल मात्रा से कहने के लिये हैं। शब्द वाले एक दो से गिनती वाले १,२ का अन्तर सिर्फ मनन और पैर से है, नकि ताल और लय से। ऊपर की लगातार १ से १६ तक की गिनतियां प्रत्येक बराबर एक-एक मात्र के होंगी, जो सभी लाइनों की मात्राओं की सूचक है। लहरे की सरगमों में जिस स्वर के ऊपर एक बिंदु हो, जैसे— 'मं' तार सप्तक का समझना तथा जिस स्वर के नीचे बिन्दु हो, जैसे— 'ऩ' मन्द्र सप्तक का समझें। मध्य सप्तक के लिये नीचे ऊपर कोई भी चिन्ह न होंगे।

"नृत्य सागर" के कुछ पृष्ठ !

(लेखक—बा० कृष्णचन्द्र 'निगम P. A. MUS नृत्याचार्य)

इस लेख के लेखक श्री "निगम" जी स्वयं एक उत्तम कलाकार हैं। आपने नृत्यकला की खोज और परिचय के लिए भारत के कई प्रान्तों की यात्रा की है। नृत्य-कला पर आप 'नृत्यसागर' नामका एक ग्रन्थ लिख रहे हैं, अभी वह प्रकाशित नहीं हुआ, किन्तु आपने कृपा करके संगीत के 'नृत्यांक' के लिये उसमें से कुछ चुना हुआ मैटर भेज दिया है आशा है संगीत प्रेमी आपके उद्योग से लाभ उठावेंगे।

—संपादक

विश्व रंगमंच के प्रथम नट, भगवान शंकर हैं, जिनके विराट नृत्य (Cosmic dance) से विश्व की पंच क्रियायों का जन्म हुआ है और सृष्टि के ताल स्वर का स्वरूप निर्दिष्ट हुआ है। Creation arises from the drum of God Shiv, Protection proceeds from the hand of hope, from fire proseeds destruction, the foot held aloft gives release अर्थात् डमरू के बजने से दुनियां की पैदायश, हस्तमुद्रा द्वारा दुनियां का रक्षण कार्य, अग्नि से संहार क्रिया और उठा हुआ पैर मोक्षदायक होता है। इस प्रकार नटराज का अभिनय, आभूषण और मुद्रा विश्व की सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव, आविर्भाव और अनुग्रह इन पांच क्रियाओं की द्योतक हैं।

—शिव तांडव का शृंगार—

इस विश्व रूपी नाटक में शिव नायक और नायिका दोनों हैं। विश्व नाट्य का उन्मेष उनके संयोग से आरंभ होता है और उनकी इच्छानुसार कालरात्री में विलीन होता है। प्राचीन काल के शैव शिल्पकारों की बनाई हुई नटराज की मूर्ति देखने से विदित होता है कि नटराज चार हाथ वाले देवता हैं, जिनके माथे पर मणियुक्त जटा है, जिनके बाल नृत्य की ताल पर घूमते हैं। जटा में गंगा अवतीर्ण होती है और इसके आस पास जटा में सर्प लिपटे हुए हैं। जटा के ऊपर दूज का बंकिम चन्द्रमा है, दाहिने कान में पुरुष का कुण्डल है और बांये में स्त्री का। इसके अतिरिक्त कंकण, माला, बाजूवन्द, कड़े आदि भी देखने में आते हैं। वस्त्रों में तंग कंचुकी और धोती है। दाहिने हाथ में डमरू और बांयां हाथ अभयद मुद्रा में है। एक बांये हाथ में अग्नि जलती है और दूसरा हाथ मायालक राक्षस के प्रति अंगुलि निर्देष कर रहा है।

आर्यों के भारत में आने से पहिले भी शिव पूजा भारत के अनार्य लोगों में थी और वह भी ताण्डव नृत्य करते हुए शिव की पूजा करते थे। शिव के स्वरूप आदि पर ध्यान दिया जाये तो यह रूप भील और अनार्य लोंगों में भी मिलता है। भगवान शिव का

ताण्डव नृत्य उनके भैरव और भीषण रूप का दर्शन है शिव श्मशान में काल रात्री के समय भूत-प्रेतादि के साथ संहार नृत्य करते हैं। इस नृत्य में मृत्यु की भीषणता, संहार की भयंकरता और क्रोध की विकालता बताने वाला अभिनय और मुद्रायें होती हैं। यह नृत्य विश्व में चल रही प्रकृति को संहार क्रिया का प्रतीक है।

इसके अतिरिक्त भगवान श्रीकृष्ण के रास नृत्य से कौन परिचित नहीं है? महाभारत एवं रामायण के अभिनायक अर्जुन तथा हनुमान जी महान् नृत्यकार थे। रामायण के रावण ने ताण्डव द्वारा ही भगवान शंकर को प्रसन्न किया था। आजतक हमारे देवताओं की प्रतिमाओं में उनकी अंगस्थिति (Pose) नृत्यकार की होती है। भक्ति के उल्लास से प्रेरित धार्मिक नृत्यों में बहुधा देवी देवता का भी प्रसंग आता है। श्री कृष्ण का कालीमर्दन, शंकर का गजासुर वध (विष्णु का भस्मासुर वध) उनके भव्य प्रसंग नृत्य का स्मरण कराते हैं। नृत्य के उल्लास में आत्म-विस्मृत होकर परब्रह्म के अनिवर्चनीय आनंद की लहर में तल्लीन होजाने तथा आंतरिक और बाह्य जगत का तादात्म्य साध कर परम सुख का अनुभव करने के ये भिन्न २ साधन हैं।

— नृत्य में प्रेम का उपयोग—

नृत्यकला का जितना उपयोग धार्मिक भावना की अभिव्यंजना में आया है, उतना ही या उससे भी अधिक प्रेम भावना को अभिव्यंजना के लिये हुआ है। प्रेम-भावना अथवा शृंगार-भावना जब अपने यथार्थ रूप में प्रकट होती है तब अद्भुत लावण्य, रसिकता, निःस्वार्थता और कलामयता को जन्म देती है। रसों में शृंगार रस प्रधान है और विश्व की सकल क्रियाओं में प्रथम उपयोगी है। इस रस की सृष्टि के लिये नृत्य एक स्वभाविक और नैसर्गिक प्रवृति बन गई है। यह प्रवृति मनुष्य में ही नहीं, कीट पतंगों से लेकर हाथी, गेंडे, कुत्ते और ह्वेल तक में देखने में आती है। समागम और संयोग से पहले की लीला वृति इसी स्वभाव का परिणाम है। मोर, तोता, कबूतर आदि तो नृत्य को शृंगार-भावना तथा संयोग-क्रिया का मुख्य अङ्ग बनाते हैं। मादा को आकर्षित करने के लिये नर स्वयं नाचता है और ज़रूरत होने पर दूसरे से कांपिटिशन भी करता है। उपरोक्त बातें Charse Darwin's Desent of men नामक पुस्तक से ली गईं हैं।

बसंत ऋतु में White throat नामक पक्षी अनेक बार हवा में उड़कर विचित्र क्रियाओं के साथ पंख फड़फड़ाता और गाता है और फिर बैठ जाता है। उत्तर अमेरिका में ग्राउज़ (Grause) नामक पक्षी संभोग के दिनों में नित्य प्रातःकाल किसी एक निश्चित जगह पर पहुँचता है और पंखों को चक्राकार बनाकर नाचता है। इस नृत्य में, जिसे शिकारी लोग तीतर नृत्य कहते हैं, पक्षी अनेक प्रकार से खेल करता है और दांये बांये पंख फड़फड़ाता है।

अभीतक अफ्रिका तथा अन्य प्रदेशों में, जङ्गली जातियों में स्त्री-प्रेम सम्पादन करने अथवा उससे वरण करने के पूर्व नृत्य उत्सव होता है, जिसमें पुरुष को नृत्य करके स्त्री को रिझाना होता है। प्रणय-पथगामी पुरुष नट, नृत्य द्वारा स्त्री को प्रेम-

दीक्षा का महामन्त्र समझाता है। पुरुष के नृत्य द्वारा आकृष्ट होने वाली स्त्री उसको मिलती है। इस प्रकार पुरुष मुख्य नृत्यकार और स्त्री उसका प्रेम-भाजन बनती है। प्रख्यात मानस शास्त्री फ्रायड Fried हैवेलक Haiwalauc Alic नृत्य को मिथुन भावना का आविष्कार मानते हैं।

जीवन नृत्य में भी तो पुरुष ही मुख्य नट होता है। शृङ्गार नृत्य में इन्द्रिय विलास मुख्य होता है और कामोद्दीपक तत्व बहुत मात्रा में रहते हैं। मनुष्य जाति में अब केवल पुरुष ही नृत्य नहीं करता, स्त्री भी नृत्यकला में खूब आगे बढ़ गई हैं। नृत्य का मुख्य रस भव्य कठोर और उद्दाम हो, तो उसके भाव को पुरुष का शरीर बहुत अच्छी तरह व्यक्त कर सकता है, किन्तु यदि रस करुण, मृदु ललित या मोहक हो, तो वह स्त्री द्वारा ही उत्तम रीति से अभिव्यक्त होता है। स्त्रियों की सहज कोमलता और सुन्दरता के कारण कलामय और ललित भावनाओं की अभिव्यञ्जना का क्षेत्र उनके लिये बहुत अनुकूल होता है, यह वे जानती हैं, और इसी लिये वे भी पुरुष हृदय को मोहित करने के लिये भांति २ के नृत्य करती हैं। योरुप की सभ्य जातियों में इसी प्रकार के आच्छादित स्वरूप के अनेक प्रेम नृत्य देखने में आते हैं और आज सामाजिक व्यवहार में पूर्व के प्रदेश में नृत्य प्रणाली योरुप में बहुत प्रचलित होरही है, जिससे उसकी संस्कारिता सिद्ध होती है।

—पौरवात्य नृत्य का उपयोग—

पूर्व में सदियों से नृत्य का विकास पवित्रता और भक्ति के निकट सम्पर्क में हुआ है। मनुष्य हृदय की दिव्यता तथा आन्तरिक सौंदर्य को व्यक्त करने के लिये नृत्य का प्रयोग पूर्व की ओर खास कर भारत की विशेषता पर ही रहा है।

—पाश्चात्य नृत्य का उपयोग—

पश्चिम में नृत्य धर्म से बिछुड़ गया, और अधिकतर सान्सारिक दृष्टि से ही उसका विकास हुआ। उसमें कला का ऊँचा आदर्श है, किंतु मुख्यतया उसमें कामोद्दीपक विलासता ही देखने में आती है। बहुधा तो केवल जीवन की व्याधियों और उपाधियों को भुलाने के लिये ही नृत्य का उपयोग होता है और नृत्य की आंतरिक मुख्य भावना की अवहेलना की जाती है। भारत में भी आजकल के नृत्यकार और नर्तकियां अधिकांश में इसी वृत्ति का पोषण करते हैं, ऐसा जान पड़ता है। परिणाम-स्वरूप नृत्य एक ओछी वृत्तियों का पोषण करने वाला तमाशा बन गया है। Graise dance of N. America & Fraudause dance of sweeden) भारतीय नृत्य से कला का ऊँचा आदर्श होते हुए भी घृणित हैं। कारण कि उनका विकास अधिकतर सांसारिक दृष्टि तथा कामोद्दीपक विलासता से हुआ है।

नृत्य और वीरता—

यदि नृत्य प्रेम भावना की अभिव्यञ्जना के साधनों में आया है तो वैसे ही वीर रस और अद्भुत रस की अभिव्यञ्जना में भी तो आया है। आज भी अफ्रीका और ब्रह्मा की अनेक जातियों में युद्ध नृत्य बहुत लोकप्रिय है। युद्ध को कला के रूप में

विकसित करने वाली रोमनजाति ने ही युद्ध का विकास किया था। रोमन प्रजा में वसन्तारम्भ के समय जगह २ युद्ध नृत्य का उत्सव होता है। बङ्गाल में ढाली, काढी, रायबंसी और किरात नृत्य अभीतक प्रचलित हैं। युद्ध के सब नृत्यों से अधिक प्रिय नृत्य, व्याधि नृत्य (Hunter's dance) है।

ज्यों २ धर्म, प्रेम और युद्ध के क्षेत्र में नृत्य बढ़ने लगा, त्यों त्यों शिष्टकला के रूप में उसकी गणना होने लगी और रस शास्त्री तथा नृत्य शास्त्री उसे सुसंस्कृत बनाने लगे। फलतः रंगभूमि, राज दरबार और लोक समूह में उसका प्रस्तार होने लगा। भारत में नृत्य विषय पर कई ग्रन्थ लिखे गये पर भरत का नाट्य शास्त्र इन सब में प्राचीन और प्रसिद्ध है।

नृत्य के प्रकार (Inflections of Dance)

Dr. L. Y. Lyrist ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ डिसेन्ट आफ म्यूजिक एण्ड डांसिंग आर्ट Desent of music & dancing art, में नृत्य तीन प्रकार का बतलाया है यथा कला पूर्ण (Artistic) भावपूर्ण (Emotional) और भावुकपूर्ण (Expressional)

नाट्य, नृत्य और नृत्त—

नाट्य (Emotional Dance) में नर्तक अपने हृदयक तरगित भावों को प्रकट करता है। इसमें नर्तक को उसी कठिनाई का सामना करना पड़ता है, जिसका कि कवि या लेखक को। इस नृत्य में नर्तक को साहित्य के नव रसों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये। नर्तक का भाव विन्यास लेखक या कवि के वाक्य विन्यास सा पूर्ण होना चाहिये। नाट्य की क्रिया तथा प्रयोग का नाम नाटक है।

नृत्तः— में केवल शारीरिक अवयवों के अङ्ग-विक्षेप द्वारा भावना को इङ्गित करना पड़ता है।

नृत्यः—(Artistic or classical dance) में चहरे के हाव भाव का समावेश नहीं होता और इसके और भी दो प्रकार हैं। जिसमें मुख के हाव-भाव सहित ताल स्वर के नियमानुसार अभिनय द्वारा रस प्रकट किया जाता है। नृत्य द्वारा उत्पन्न होने वाले रसों का वर्गीकरण भी देखने में आता है। समस्त रसों में आदि रस शृङ्गार-रस है। दूसरा करुण। इनके अतिरिक्त बीभत्स, वीर, शान्त, रौद्र, सख्य दास आदि कई रसों का प्रमाण शास्त्रों में है और जिनके व्यक्ति करण के लिये भिन्न-भिन्न अभिनय तथा मुद्राएँ प्रयुक्त होती हैं।

इनके अतिरिक्त नृत्य के चार प्रकार कर्नाटकी-पद्धति से और होते हैं। अङ्गिक, सात्विक, वाचिक और वाह्य-प्रदर्शन। आङ्गिक— (मुद्रा प्रदर्शन) हाथ, हथेली और उँगलियों के इशारे द्वारा साधारण से साधारण वस्तु भी बहुत ही सुन्दररूप में प्रदर्शित करना। उदाहरणार्थ "रुनक-झुनक मोरी पायल बाजे" यह सुनने में बहुत ही साधारण है और कानों को इसमें कोई सौन्दर्य जान नहीं पड़ता। किन्तु यही बात एक कुशल अभिनेत्री द्वारा प्रदर्शित होने पर आंखों के लिये बहुत ही सौन्दर्यमयी हो सकती है।

नर्तकी पायलिया बजाने के भाव को लेकर अपने (नायिका का भाव ले) प्रियतम से कहती है— "लोग सुनेंगे मैं तुम्हारे पास कैसे आऊं"? क्योंकि— "रुनक-झुनक मोरी पायल बाजे" रुनक झुनक कहकर जब उसे अपनी पायल सुनाई पड़ती है तब पांव के तले के एक ओर के हिस्से को अँगूठे के सहारे दाबकर ताल लेनी पड़ती है, यदि वह ऐसा नहीं करती तो उसका भाव स्पष्ट नहीं होने पाता। दूसरी आवृति में एकदम चौंक कर कमर को बाईं ओर मोड़कर, गर्दन को दाहिनी ओर झुकाकर, तथा कुछ हिलाकर, भौंहों को चढ़ाकर, दोनों हाथों से संदंश मुद्रा बनाकर हाथों की हथेली को हिलाते हुये, बांये पैर से पायल बजाकर तथा अर्ध पताका नामक उल्टी मुद्रा से पैर को बताने में प्रत्येक मनुष्य उस गाने के सौन्दर्य को भली भांति समझ जाता है।

सात्विक— (भाव प्रदर्शन) मुंह से बिना शब्द उच्चारण किये यह समझाना पड़ता है कि मेरे मन में अमुक भाव उठ रहे हैं। इसका उपयोग मणिपुरी नृत्य में काफी होता है।

वाचिक— (शब्द प्रदर्शन) में गद्य-पद्य को दुहराने की क्रिया को कहते हैं, और इसका सम्बन्ध गीत और साहित्य से अधिक है।

वाह्य-प्रदर्शन का मुख्य साधन वस्त्र परिधान और मुख सजावट (मेक-अप) है। इसका विकास कलाकार और चित्रकार की तूलिका से हुआ है। ड्रेस और मेक-अप के माने यही हैं कि कोई भी व्यक्ति अभिनेता को न पहचान सके। सिर्फ (Dry white zinc & white lead) मुंह पर पोत लेने से काम नहीं चल सकता। श्री उदयशङ्कर ने अपने (Art center) में मेक-अप के लिये दो वर्ष का कोर्स नियत किया है। इससे हम विचार कर सकते हैं कि मेक-अप करना कितना कठिन है ? श्री टैगोर का कहना है कि सफल नर्तक वही हो सकता है, जो सफल चित्रकार हो और सफल चित्रकार वही हो सकता है, जो सफल कवि हो। नृत्य, सङ्गीत, गायन, वादन, चित्रकारी, विज्ञान और कविता का चोली-दामन का सा साथ है। इनमें से थोड़ा २ सब कला का ज्ञान होना चाहिये। तभी सफल नर्तक बन सकता है।

सभ्य समाज के लिये आङ्गिक और सात्विक नृत्यकला में सम्मिलित किये जाते हैं। अश्रु, स्वर-भेद, कँपकँपी, भय, मूर्छा आदि शारीरिक अवस्थाओं का प्रदर्शन भाव-प्रदर्शन होते हुये भी उसकी मुख्य सफलता मुद्रा-प्रदर्शन पर ही निर्भर है। यदि कहा जाय कि वस्तु, विचार और भाव-अङ्ग (मुद्रा) प्रदर्शन के द्वारा ही किये जा सकते हैं तो अत्युक्ति न होगी। वस्त्र, शब्द-भाव आदि तो आङ्गिक प्रदर्शन के सहायक हैं।

मुद्रा (Gesture) मनुष्य के साथ छाया के समान रहती है। जब वह बलता है तब आंखें गर्दन आंख आदि हिलकर अपनी मुद्रा द्वारा उसके विचारों और भावनाओं का स्पष्टीकरण करती हैं। यदि वे अपना प्रदर्शन बन्द करदें या ग़लत करदें तो बात नीरस हो जायगी। भौंह का बांकापन, आंख की चितवन, कपोल की ललाई, गर्दनके घूमने और हाथ के हिलने से हम उन भावों को तुरन्त समझ लेते हैं, जिन्हें शब्द द्वारा व्यक्त करने में असमर्थता होती है।

नृत्य के मुख्य दो भेद—

ताण्डव और लास्य ।

ताण्डव पुरुषों का नृत्य है। भरताचार्य कृत, "सङ्गीत नृत्याकर" के आधार पर "वीर रसे महोत्साहो पुरुषो यत्र नृत्यति। रौद्र भाव रसो पत्तिस्त तांडव मिति स्मृतं ॥" तांडव पुरुषों के अङ्ग चापल्य, वीरत्व, क्रोध, तथा रौद्र रस की भावनाएँ दर्शाने के लिये बहुत उपयुक्त होता है। तांडव-नृत्य विश्व की पञ्च क्रियाओं—सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और आविर्भाव के अलावा आसुरी भावना पर दैवी भावना की विजय और उससे अत्यन्त आनन्द का द्योतक है। भगवान शङ्कर की मूर्ति इस भावना को स्पष्ट दिखाती है।

ताण्डव की भङ्ग (कटिमुद्रा)

जैसे कथकली नृत्य हस्त मुद्राओं द्वारा भावनाओं का स्पष्टीकरण करने में आता है ठीक वैसे ही ताण्डव में हस्त मुद्राओं के अतिरिक्त कटि मुद्राओं (कमर द्वारा भाव बताना, द्वारा भी भावों को व्यक्त किया जाता है। इसके चार भाग होते हैं। अभङ्ग, समभङ्ग, त्रिभङ्ग और अतिभङ्ग आदि भेद हैं। अभङ्ग में साधारण मरोड़ होती है। समभङ्ग में बराबर की और अतिभङ्ग में ऊँची मरोड़ होती है। इनको लिखकर समझाना बहुत कठिन है। गुरु द्वारा सीखने से ही समझ में आसकती हैं। मैं, जो भविष्य में नृत्य की पुस्तक लिख रहा हूँ उसमें चित्र द्वारा इन समस्त बातों को समझाने का प्रयत्न करूंगा। उक्त पुस्तक में नृत्य से सम्बन्ध रखने वाले समस्त वाद्य और समस्त कलाओं का वर्णन तथा सीखने का तरीका भी लिखा रहेगा।

ताण्डव नृत्य में अङ्गों की मरोड़ बड़ी आवेश पूर्ण होती है। वाद्य सङ्गीत भी वैसा ही भीषण होता है। विशेष वाद्यों में डमरू, नौबत, धौंसा, शङ्ख, घड़ियाल आदि काम में आते हैं। ताल का समुद्र उमड़ आता है। अङ्गों का जोरदार चलन, ताल के साथ पैर व हाथ का आरोहण-अवरोहण, घुंघरू और अन्य आभूषण ताण्डव नृत्य में एक भीषण नाद पैदा कर देते हैं।

—:ताण्डव का प्रभावः—

रुद्र रस का स्रोत बहने लगता है, क्रोध की अग्नि भभकती है, धरती कांपती है और गड़गड़ाहट होती है मानों समूचे विश्व में संहार क्रिया होरही है। नृत्यकार और वाद्यकार का वहां सम्पूर्ण मेल होजाता है। राग का रस, ताल की मर्यादा, अङ्ग भंग का गाम्भीर्य और अभिनय का चापल्य-ये सब एक समां सा बांध देते हैं। उद्दाम भावनाओं की पैदायश होती है। तांडव नृत्य में विराट शक्ति (Cosmic energy) के भिन्न २ रूपों का प्रदर्शन होता है। इस नृत्य में एक प्रकार की अगम्यता, गूढ़ता, अद्भुतता और भयानकता का समावेश रहता है। विराट शक्ति का अनुकरण होने से, तांडव में, अंग चापल्य और अभिनय अत्यन्त जोश भरा होता है।

—ताण्डव—

संहार	त्रिपुर	कालिका	संध्या	गौरी	उमा	आनन्द

१-संहार तांडवः—सृष्टि में जब पाप फैल जाते हैं, तब भगवान शङ्कर अपने तीसरे नेत्र द्वारा जड़ जगत एवम् चैतन्य जगत को नाश नष्ट करने के लिये या प्रलय (कयामत) के लिये करते हैं। इस नृत्य में आत्मा किस प्रकार अविद्या के बन्धनों को तोड़कर, मुक्त होकर विश्व के आनन्द का अनुभव करती है ? यह दिखाया जाता है। इसके बोलों में बहुत ही भीषणता रहती है । यथाः-अर्न्ड, धेत्, धल, धलांग, धमीक, धो, आदि २

त्रिपुर ताण्डव—भगवान शंकर का त्रिपुर राक्षस को मारते समय का दृश्य। यह नृत्य भी संहार के समान होता है. मगर इसमें यह बताना पड़ता है कि आत्मा किस तरह आसुरी सम्पत्ति पर विजय पाती है और तीनों पाप (आदि दैविक, आदि दैहिड़ी, आदि भौतिक) से किस प्रकार छुटकारा पाती है। इस नृत्य के बोल अधिकतर आड़ी लय में होते हैं। यथा—

तानधा, धानधा, धिकिट धिध, धिकिट तगन, नगन दिगन, दिगन तान, तकाथुं, थुंकिट तानता थेई।

कालिका ताण्डव—इस नृत्य में सर्व प्रथम यह दर्शाना पड़ता है कि आत्मा किस प्रकार अज्ञानता और दुष्टता के चक्कर में पड़कर दुखी होती है, पुनः पापों द्वारा ८४ लाख योनी में जाती है। बाद में किस प्रकार इन पापों से बचकर मुक्त होजाती हैं। इसके बोलः—तकड़ २ धिलांग, धीत्तक, दिंग, दिलंग, तोंग, दिलांग, तोदिंग २ गदिगिन थेई ।

संध्या ताण्डव--इससे सूर्यास्त और कालरात्री के आगमन का प्रदर्शन होता है। सर्व प्रथम, करुणा रस का प्रयोग होकर बाद में रौद्र और वीभत्स रस का प्रयोग करते हैं इसमें ता थेई, गिड़ २ आदि बोल होते हैं।

गौरी ताण्डव—गौरी के प्रति सात्विक भावना का प्रदर्शन होता है। और आनन्द ताण्डव में समस्त दुःखों से छूटकर आत्मा किस प्रकार आनन्द का अनुभव करती है, यह दिखाया जाता है। इसमें ता, तीदाम, थेइया, तत्, दिग २ आदि बोल होते हैं।

नोट—उपरोक्त सब ताण्डव की परखें शास्त्रोक्त प्रमाणों से व उनको चित्रों सहित समझना होतो "सङ्गीत" के ग्राहक बनकर समझिये।

—लास्य—

लास्यते सुकुमारिणां गमकध्वनिवर्धनि ।
इशशब्दास्यः प्रसन्नस्योमुखरागोभवेदिधा ॥

(संगीत रत्नाकर)

वो तो मुरलीधर नटवर....!

नृत्य का एक गीत (ताल दादरा)

(स्वरकार व शब्दकार—पं० नारायणदत्त जोशी ए० टी० सी०)

वो तो मुरलीधर नटवर ढरकाय गयोरी,
मोरी गागर, गिरधर बृजधर नन्द को।
मैंतो डर डर कर थर थर कर आई सजनी,
वो तो कृष्ण पिया आन के लुभाय गयोरी।
मोरी सारी अनारी भिगाय गयो री,
मोरी गागर गिरधर बृजधर नन्द को ॥ वो तो गिर......

स्थाई ताल दादरा☞											
										स	ऩ
										वो	तो
×			०			×			०		
स	ग	ग	(र)ग	ग	ग	ग	ग	ग	रग	ग	म
मु	र	ली	ऽ	ध	र	न	ट	ब	र	ढ	र
(ग)र	ग	र	स	ऩ	स	रग	म॑प	–	म॑	प	–
का	ऽ	य	ग	यो	ऽ	री	ऽ	ऽ	मो	री	ऽ
ग	–	ग	ग	ग	म	(ग)र	ग	र	स	ऩ	स
गा	ऽ	ग	र	गि	र	ध	र	बृ	ज	ध	र
रगम	-	ग	र	–	–	र	–	ग	स	ऩ	–
न	ऽ	न्द	को	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	वो	तो	–

अन्तरा☞											
										म॑	प
										मैं	तो

ध	ध	ध	ध	ध	ध	ध	न	ध	पध	प	म॑
ड	र	ड	र	क	र	थ	र	थ	र	क	र
ग	–	म॑	ग	ध	–	प	–	–	पम॑ग	म॑	प
आ	ऽ	ई	स	ज		नी	ऽ	ऽ	ऽ	मैं	तो
ध	ध	ध	[प]ध	ध	न	पध	(ध)	न	पध	प	म॑
ड	र	ड	र	क	र	थ	र	थ	र	क	र
ग	–	म॑	ग	म॑पध	–	प	–	–	–	म॑	प
आ	ऽ	ई	स	ज	ऽ	नी	ऽ	ऽ	ऽ	वो	तो
ध	–	ध	ध	ध	–	प	न	ध	प	–	म॑
कृ	ऽ	ष्ण	पि	या	ऽ	आ	ऽ	न	के	ऽ	लु
ग	–	म॑	ग	ध	–	प	–	–	पम॑ग	म॑	प
भा	ऽ	य	ग	यो	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	वो	तो
ध	–	ध	ध	ध	–	[म॑]पधन	–	ध	प	–	म॑
कृ	ऽ	ष्ण	पि	या	ऽ	आ	ऽ	न	के	ऽ	लु
ग	–	म॑	ग	म॑पध	–	(प)	–	–	–	स	ऩ
भा	ऽ	य	ग	यो	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	मो	रि
स	रग	–	ग	–	ग	[र]ग	–	–	ग	–	म
सा	ऽ	ऽ	री	ऽ	अ	ना	ऽ	ऽ	री	ऽ	भि

ग											
र	ग	र	स	ऩ	स	रगम॑	प	–	–	म॑	प
गा	ऽ	य	ग	यो	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	मो	रि
म											
ग	–	ग	ग	ग	म	गर	ग	र	स	ऩ	स
गा	ऽ	ग		गि	र	ध	र	बृ	ज	ध	र
रगम	–	ग	र	–	–	र	–	ग	स	ऩ	–
न	ऽ	न्द	को	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	वो	तो	ऽ

हास्य गल्प

पक्के गाने और कच्चा नाच

(श्री० लक्ष्मीकान्त गोस्वामी 'निर्भय')

पक्के गाने, पक्का सङ्गीत—क्लासिकल म्यूज़िक, क्लासिकल म्यूज़िक, आगे-पीछे अगल-बगल ग़रज़ यह कि जिधर देखो उधर ही यही पुकार!

आख़िर मुझे भी पक्के गाने, गाने और सुनने की धुन सवार हुई।

शुक्रवार का दिन था। शाम को टहलने जो निकला तो सोचा कि 'एलफिन्सटन' की ओर ही होते चलें, शायद कोई नई पिक्चर लगी हो। पहुंचकर देखा तो प्रभात का 'सन्त-ज्ञानेश्वर' था, देखते ही तबियत फड़क उठी।

आगे बढ़के Prints देखने लगा!

"हलो! गोस्वामी!!"

मुड़कर देखा तो रामप्रताप और वियोगी जी अपने दो-चार अन्य साथियों के साथ दृष्टिगोचर हुये।

"देखने का विचार है क्या?" वियोगी जी ने पूँछा।

मैंने सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

"मॉडल हाउस नहीं चलोगे?" उन्होंने दूसरा प्रश्न किया।

मैंने कुछ चौंक कर पूँछा-"क्यों? क्या है वहाँ?

"तुम्हें नहीं मालूम?" अजी सरकार! मालूम होता भला आपके चोंचानुरूप श्री मुख…………"

अच्छा! अच्छा! बको मत! वहां डाक्टर बैनर्जी बाबू के यहाँ ग्वालियर के सीखे एक सज्जन आये हुए हैं, नौ बजे से उनका गाना होगा।"

"भाई! मुझे तो इन लोगों के गाने में मज़ा आता नहीं, फिर कल मुझे पीलीभीत जाना है, आज वहां गया तो फिर इस Picture को देख भी न सकूँगा।"

"अमाँ! तुम भी रहे निरे…………ख़ैर! अब उसे क्या कहें? पर चलो तो बड़ा मज़ा रहेगा। ऐसे वैसे नहीं, ऊँचे दर्जे के गाने वाले हैं।"

नतीजा यह कि अर्ध इच्छा और अर्ध अनिच्छा के बीच वहां पहुंच ही गये। अब जनाब साढ़े आठ बजे के बैठे-बैठे पौने दस होने आये, और सङ्गीताचार्य तथा वादकों का कहीं पता ही नहीं। भीड़ के मारे वह बुरा हाल कि कसम अपने पड़ौसी सज्जन की तोंद की; जान चौथाई रह गई थी। मेरी दाहिनी ओर एक भीमकाय या हाथी काय समझ लीजिये; एक मोशा बाबू बैठे थे। जो बीच-बीच में रह-रह के अपने विशाल घुटने से मेरे शरीर का मर्दन करने पर तुले हुये थे। कई मर्तबा उनसे प्रार्थना भी की कि बेवक्त की इस कसरत को बन्द करदें, पर वे भला क्यों मानने लगे? आख़िर परेशान होकर मैंने उनकी पली हुई मुलायम जंगा में ज़रा कस के चुटकी ली तो आप उछल पड़े, और लड़खड़ाते हुये पास के कमरे में महिलाओं के बीच लगे साष्टाङ्ग दण्डवत करने।

अब तो वह तूफ़ान उठा कि बस कुछ न पूछिये, एक कालिजगर्ल ने बिगड़ कर एक ही झटके मोशा बाबू के सारे लम्बे-लम्बे बाल बिगाड़ दिये, चारों ओर से विचारों पर लगी बेतरह झाड़ पड़ने! हाँफते-हाँफते बिचारे समझा बुझा रहे थे- "आभार की दोषु-आमी की कौरि-आमी की कौरि।"

थोंद उनकी घिसुवा लुहार की धौंकनी की भांति उठक बैठक कर रही थी। इस समय विचारों की हालत देख हमें उन पर ठीक वैसा ही तरस आरहा था, जैसा कि गांधी जी को ब्रिटिश सरकार पर आता है।

अन्त तो गत्वा—बैनर्जी बाबू ने जैसे-तैसे उनका झगड़ा शान्त किया, इसी बीच वियोगी जी ने उनके वियोग से दुखित हो स्मृति चिन्ह स्वरूप उनका 'पासिङ्ग शो' का डिब्बा भी 'पार' कर दिया।

हम लोगों को कोसते हुये बिचारे बहुत मुश्किल से एक कोने में 'जूतों' के पास बैठ सके। अब सङ्गीताचार्य जी भी पधार चुके थे। आध घण्टे तक साज़ मिले, मिल जाने पर भी सङ्गीताचार्य जो ने तीन-चार मिनट तक तानपूरा चढ़ाया-उतारा। फिर दो-तीन बार ज़र्दा मीड़ और फांककर गाना आरम्भ किया—

बन-बन ढूंढन जाऊँ !!
कितहूं छिप गये किशन मुरारी !
बन-बन ढूंढन जाऊँ !!

यह थे ग्वालियर के सीखे सङ्गीताचार्य जी। फिर उन्होंने एक 'ध्रुपद' शुरू किया। वह ध्रुपद उन्होंने कैसा गाया? यह तो मैं नहीं बता सकता, हां! गाते समय उनका कपाल-हस्त-तथा पाद संचालन अवश्य देखने लायक था। जिसे देखकर मुझे उस देहाती की याद हो आई जो ऐसे ही एक गायक को देखकर रोपड़ा था। लोगों के बहुत पूँछने पर देहाती ने यह बताया था कि पिछले महीने मेरा बकरा मर गया। मरने से पहिले वह भी इन विचारों (गायक महोदय की ओर इशारा करके) की ही तरह सिर-पैर पटका करता था, और इसी तरह अँ-अँ-अ-अँ किया करता था।

ध्रुपद के बाद सङ्गीताचार्य जी ने और दो चार राग गाये, पर गाने से पहिले कम से कम दो बार ज़र्दा फांकना न भूलते थे।

श्रोताओं का हाल यह था कि आधे त उठ गये थे, और उन आधों में भी अधिकांश 'नासिका-बीन' बजा रहे थे। शेष लोग जमुहाइयों पर जमुहाइयां डिस्पैच करते हुये एवं अपने असहाय दिलों से सत्याग्रह करते हुये सङ्गीताचार्य जी का गाना सुन रहे थे। हां! भातखण्डे म्यूज़िक यूनिवर्सिटी के प्रिन्सपल अवश्य उन्हें दाद देरहे थे पर उनकी कला का लोहा मान कर दाद देरहे थे या उनकी लाज रखने को अथवा अपनी जानकारी की धाक जमाने को, यह एक गम्भीर विषय है।

बारह बजे वहां से छुट्टी मिल सकी। हमें अपनी भूल पर मनों पश्चाताप होरहा था, और वह भी डबल। एक तो 'सन्त ज्ञानेश्वर' न देख सकने का, दूसरे नींद ख़राब होने का।

आखिर अपनी और सङ्गीत की दुर्दशा पर आंसू पीते हुये (क्योंकि बहुत कोशिश करने पर भी निकले ही नहीं) घर चल दिये।

(२)

सुबह शेविंग करने बैठा ही था कि 'उच्च सङ्गीत सभा' के सैक्रेटरी पं० मटरूलाल जी ने कमरे में प्रवेश किया, उनके बांये हाथ में नीली-हरी टिकिट चैकर जैसी रसीद बुकें भी दबी थीं। उन्हें सम्मान पूर्वक बिठलाकर मैंने पूछा—कहिये! आज सुबह सुबह कैसे कष्ट किया ?"

"कष्ट ? आप भी कमाल करते हैं, कष्ट की इसमें क्या बात है ? आप तो आज कल दूज के चांद होरहे हैं, कभी दीखते ही नहीं । हां ! हमारी 'उच्च सङ्गीत सभा' का वार्षिक अधिवेशन बाईस अक्टूबर को 'गङ्गा मेमोरियल हाल' में होने जारहा है। आपको तो कम से कम आठ आने का टिकट अवश्य खरीदना चाहिये। यह देखिये प्रोग्राम! कहते हुये उन्होंने एक छपा हुआ पर्चा मेरी ओर बढ़ा दिया।

मैंने सरसरी निगाह से जो देखा तो दो-चार प्रोग्राम मेरे मन पसन्द मिल गये, जैसे मास्टर बरकत साहब का बरकत तरङ्ग, जोग बाबू का वायलिन, राजकुमारी शिवपुरी का Vocal गाना, मिस फ़ोकट का नाच आदि-आदि। इन लोगों की बहुत तारीफ़ सुन रक्खी थीं, किन्तु अभी तक सुनने का कोई ऐसा मौक़ा नहीं मिला था। अतएव मैंने पूँछा "क्या आठ आने से कम का टिकिट नहीं है ?"

"है क्यों नहीं ? पर सबसे पीछे बैठना होगा, फिर भला आप चार आने वाले दर्जे में क्या भले मालूम होंगे ?"

"भले आदमी होने की तो आप फिक्र न करिये। हम तो 'फ्री क्लास' में भी बहुत भले मालुम होंगे,चाहे खड़े ही क्यों न रहना पड़े। पैसे तो बचेंगे।"

इस पर पं० मटरूलाल जी ने मुस्कराने का प्रयत्न किया, किन्तु विफल होकर कत्था चूना सुवासित पीले-पीले दाँत निकालकर ही रह गये। मैंने फिर पूँछा-"अच्छा आठ आने में तो सबसे आगे बैठने को मिल सकेगा ?"

नहीं साहब! सबसे आगे की सीट का टिकिट तो एक रुपये का है।"

आख़िरकार वह एक रुपया मुझ से झपट कर ले ही गये।

ट्रेन के लिये स्टेशन पर तथा सिनेमा उत्सव आदि स्थानों पर समय से कुछ देर पहिले ही पहुँचने का मेरा सिद्धान्त रहा है। इसी कारण बाईस-अक्टूबर को भी में घर से साढ़े पांच बजे ही 'गङ्गा मेमोरियल हॉल' को चल दिया। क्योंकि छः बजे से प्रोग्राम था। हॉल के गेट पर यूनिवर्सिटी के लड़कों की भारी भीड़ थी। प्रबन्धकर्ताओं तथा उनमें खूब मुँह-चुथौवल हो रही थी। परिस्थिति नाज़ुक देखकर मैं लाइब्रेरी पार करके हॉल के अन्दर हो रहा। भाग्यवश पं० मटरूलाल जी भी गेट से निकलते ही मिल गये। उन्होंने बड़ी आवभगत के साथ मेरा स्वागत किया।

सब से आगे की एक सीट पर मुझे बैठाते हुये आप बोले— "देखिये! क्या अच्छी जगह आपको मिली है ?

मैंने क्षणभर का भी विलम्ब न करके तुरन्त ही 'थैंक्स' के दो चैक उनके नाम काट दिये, और कहा ! "यह सब आपकी और उस रुपये की कृपा है।"

आप ही धर्म से कहिये—कि इस मुफलिसी के जमाने में 'थैंक्स' को छोड़कर कौन ऐसी चीज़ बची है, जो एक सफेदपोश उपहार स्वरूप किसी को दे सके ?

अब वहां छः के बजाय सवा सात बजे के करीब कार्य आरम्भ हुआ। सर्व प्रथम पं० मटरूलाल जी ने (Ajenda) पढ़ा, तत्पश्चात् सङ्गीत प्रोग्राम प्रारम्भ हुआ।

तिवारी जी ने वन्देमातरम् गान किया, और सुना भी ख़ुद उन्होंने ही। किसी अन्य पार्थिव शरीर धारी को सुनने का सौभाग्य प्राप्त न हो सका। फिर बम्बई के एक मशहूर सरोदिये साहब का सरोद हुआ। जनता लपलप- नहीं नहीं ! अपलक नयनों से उनका मुख निहार रही थी। उनकी कला से प्रभावित होकर या कैसे ? इसके लिये मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि यह प्रश्न आप हमसे न पूछें तो ही अच्छा है।

इसके बाद सटकी जी, माताप्रसाद और राजकुमारी शिवपुरी के गाने हुये। राजकुमारी शिवपुरी का 'घूंघरवा मोरा बाजे' जनता को और मुझे भी अत्यन्त पसन्द आया। उन्होंने आलाप, बोलतानें, बढ़त की तानें आदि सब लीं, और वे सब सरस और कर्ण-प्रिय थीं। कारण यह कि उनमें उस्तादी की बू नहीं थी। फिर क्रमशः प्रेमलता पाण्डे का नृत्य, सटकी जी की वीणा, मिस मुक्ताबाई का गाना, जोग बाबू का बेला, मास्टर बरकत साहब का बरकत तरङ्ग, प्रोफेसर जोशी का गाना, सटकी जी का जलतरङ्ग, और कुमारी ओझा का नृत्य हुआ। जिनमें जोग बाबू का वायलिन और मास्टर बरकत साहब का 'बरकत तरङ्ग' बहुत पसन्द किया गया। हाँ कुमारी ओझा का नृत्य भी बहुत पसन्द किया गया, तथा मुक्ताबाई और प्रोफेसर जोशी का गाना भी साधारणतया अच्छा ही रहा।

फिर तो मिट्टी और पानी मिलाकर ऐसी कीचड़ की गई कि बराबर दलदल ही होती गई। पक्के गाने के नाम पर ऐसे-ऐसे कला मर्मज्ञ जुटे कि जिन्होंने 'आआआआ' करके अपनी और सुनने वालों—दोनों की आधी जान कर डाली। म्यूजिक यूनीवर्सिटी के एक विद्यार्थी ने हारमोनियम पर गाना चाहा, लेकिन सभापती जी ने आज्ञा नहीं दी, तब उसने Vocal में ही यह गज़ल शुरू की—

यूं दर्द भरे दिल की, आवाज़ सुनायेंगे।
बेदर्द के दिल को भी, हमदर्द बनायेंगे॥
गङ्गा से मिले जमुना, और मिलके बहें दोनों।
हाँ ! होंगे अगर आँसू, तासीर दिखायेंगे॥
वे चुपके से आँसू में, हाय दे गये याद अपनी।
अब उनको बुलायें भी, तो काहे को आयेंगे॥

इस पर भी सभापति महोदय ने आपत्ति की थी, तब तो जनता बिगड़ गई। अन्त में उन्हें आज्ञा देनी ही पड़ी। और यही एक ऐसा गाना था, जिसे सारे Vocal

प्रोग्राम में जनता ने सब से अधिक पसन्द किया। तदन्तर फिर वही पक्के गाने की बाढ़ आई, जिसे जनता ने तालियों का बांध बांधकर रोका। एक गायक उनमें "मान न मान मैं तेरा महमान" के मेल के थे, उन्होंने भी जवाब में ताली बजाना शुरू किया, और जनता जब ताली बजाना बन्द करदे, तब फिर वे 'आ आ आ आ' शुरू करदें। लेकिन कहां यूनिवर्सिटी के विद्यार्थी और कहाँ भला अकेले वे? आखिर हार मानकर विचारों को उठना ही पड़ा।

सब से अधिक गड़बड़ सभा के मन्त्री महोदय मचाये हुये थे। जो दो-दो, तीन-तीन बार प्रोग्राम ब्राडकास्ट कर रहे थे—और हिदायतें देते जाते थे कि आप ठीक तरह से नहीं सुनेंगे तो हम सब प्रोग्राम बन्द कर देंगे, यह करेंगे, वह करेंगे—वगैरह, वगैरह। एकबार आपने ब्राडकास्ट किया कि "आप लोगों को शान्त करने का हम यही एक उपाय सोच रहे हैं कि एक नाच का प्रोग्राम करदें, लेकिन नृत्य करने वाली मिस फोकट यह सोच रही हैं कि आप लोग जैसी गड़बड़ मचाये हुये हैं उसमें मैं नांचू या न नांचू! (हालांकि वे नृत्य विशारदा आध घन्टे पहिले से Dressing और Make up से युक्त होकर रङ्गमञ्च और उसके आस पास फुदक रहीं थीं)

इस पर भी खूब जोरों से तालियों की गड़गड़ाहट हुई।

अब नृत्य आरम्भ हुआ। नृत्य-कारिणी जी ने पाउडर इतना पोत रक्खा था, कि चार आने वाले भी उन पर आवाज़ कशी कर रहे थे।

उधर एक प्रबन्धकर्त्ता महोदय नर्तकी पर रङ्ग बिरङ्गी लाइट फेंक रहे थे, मैंने अपने पास के ही एक दर्शक से पूछा कि क्यों भई ये लाइट क्यों डाली जारही है, वे बड़े तपाक से बोलेः— जनाब! यह "लाइट डान्स" है। मैंने कहा लाइट म्यूज़िक तो मैंने भी सुना था चलो आज 'लाइटडान्स' भी देखकर यह आँखें धन्य होगईं।

हां तो इस 'लाइटडान्स' अर्थात् कच्चे नृत्य के बाद फिर वही पक्के गाने शुरू हुए। स्टूडैन्ट पार्टी का कोलाहल शुरू हुआ, कोई पान वाले को आवाज़ देने लगा, कोई उठकर बाहर जाने लगा, किन्तु मैं पं० मटरूलाल जी के आग्रह के कारण न उठसका, आखिर ढाई तीन बजे प्रोग्राम समाप्त हुआ, तब कहीं छुट्टी मिलसकी। रास्ते में हमलोग चले आरहे थे तो कुछ लोग गजल गाने वाले लड़के की तारीफ करने लगे, इसपर एक पक्के गायक (जिनकी सङ्गीत सभा में काफी भद्द होचुकी थी) बोलेः—अरे साहब! कलाकार तो हमेशा मैदान में मारा जाता है, वहां तो स्ट्रीटसिंगर और बाजारू गवैयों की ही जीत होती है।

सुनकर मेरी तबियत जलभुनकर "जेठ की दुपहरी" बनगई, मैं भभक पड़ा और बोला तो ऐसे कलाकारों को चाहिए कि किसी ऊजड़ मैदान में जाकर पत्थरों की "१ पक्की दुनियां" बसालें और मज़े से पक्के गाने सुनाते रहें। यहां क्यों नाहक ज़लील होते हैं और दूसरों का मज़ा किरकिरा करते हैं।

यह सुनकर सब खिलखिला कर हँसपड़े, और गायक महोदय लगे आंखें फाड़-फाड़कर मुझे देखने लगे।

——*——

श्री० प्रजेश वन्द्योपाध्याय

इस अंक में आपके सुन्दर लेख मनन करने योग्य हैं। पृष्ठ १८६ पर आपका "उत्साह नृत्य" विशेष महत्व पूर्ण है।

श्री० लच्मीकान्त गोस्वामी

पृष्ठ ६२ पर आपकी एक हास्य रचना देखिये।

श्री० रमेशचन्द्र बैनर्जी

पृष्ठ ५२ पर "बच्चों में कला का विकास" शीर्षक लेख देखिये।

श्री० तारापद बैनर्जी

पृष्ठ १५० देखिये "राग जयजयवन्ती" के स्वरकार आपही हैं।

प्रो० बेनीप्रसाद श्रीवास्तव (भाई)

आपके लेख और नोटेशन इस अंक में अन्यत्र प्रकाशित हुए हैं, देखिये पृष्ठ ३८-५५
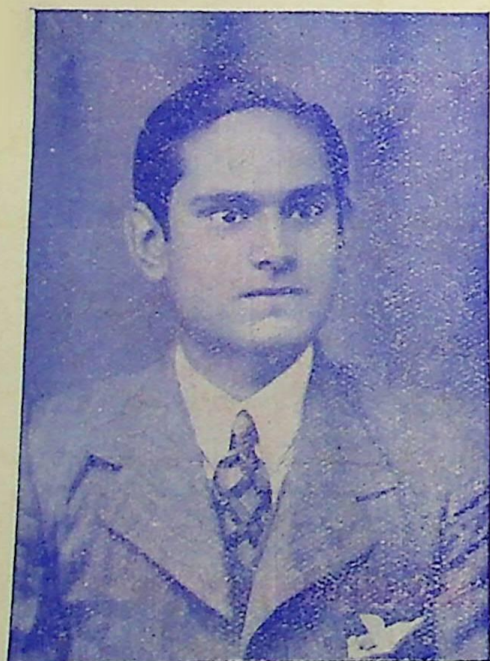
श्री० नरेन्द्रसहाय वर्मा बी० ए०

पृष्ठ १३२ पर झपताले का पूरा नाच और १६९ पर ६ लहरे प्रकाशित हुए हैं।

प्रो० सुन्दरसिंह "विश्वयात्री"

पृष्ठ ३१ और ४६ पर आपके महत्वपूर्ण लेख और तथकार देखिये।

थियेट्रिकल डान्स

के लिये कुछ सुन्दर लहरे (राग-तिलक कामोद, ताल कहरवा)

[स्वरलिपिकार—पं० नारायण झा गायन वादनाचार्य]

+	।	+	।
		स्थाई	स ऩ
स गग गग ग	ग मम गग र	गग गप मम मप	गग गर सस ऩ
प़प़ प़ऩ ऩऩ ऩस	सस सग रर रग	मम गर स –	गग गर स ऩ

—अन्तरा—

ग गप – प	पप पध धध ध	न न॒ध प –	प पध म मप
ग गम र स	र -प म मप	ग गम गर सऩ	र -प म मप
ग गम गर सऩ	प़प़ प़ऩ ऩऩ ऩस	सस सग रर रग	न॒ध पम गर सऩ

तोड़ा नं० १

ग – ग	ग मम गग र	रम पध मप संसं	पध मम गर सऩ

यहां से तीन बार घुमाइये ।

तोड़ा नं० २

संरं गंमं गंरं संन	संरं संन॒ धप मग	मप धन॒ धप मग	सर गम गर सऩ

तोड़ा नं० ३

स ग – ग	पध पम गर सऩ	स ग – ग	पध पम गर ऩस

नोटः— यह लहरे बहुत ही सुन्दर और मनोहर हैं । इनकी चाल द्रुतलय से शुरू होनी चाहिये । थियेटर स्टेज पर तैयार बजने से बहुत ही सुन्दर उतरते हैं । इनमें नाच के बोल छकरान्त के लगते हैं । अलङ्कार के छोटे-छोटे टुकड़े इनमें आसानी से लगाये जा सकते हैं । मन मुताबिक इनमें घुमाव फिराव भी हो सकता है ।

नृत्यकार श्री० उदयशङ्कर

का संक्षिप्त परिचय !

(लेखकः—रा० द० ब्रह्म)
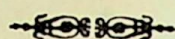
प्राचीन काल में उन्नति के शिखर पर चढ़ी हुई भारतीय कलाएँ मध्यकाल में लुप्तप्राय होगईं। उनमें नृत्यकला भी एक प्रमुख कला थी, इसकी साधना प्राचीन कला के संशोधन व अभ्यास से ही साध्य हो सकेगी, लेकिन इतनी मेहनत करने के बाद भी कोई सिद्धहस्त हो भी जाय, तो भी लोग उस कला का महत्व समझ कर नृत्य-कला का पुनरुज्जीवन करेंगे ही, इसमें शङ्का ही है। सुसंस्कृत और जिज्ञासु लोगों का दृष्टीकोण भली भांति समझ कर, और जिससे वे इस ओर आकर्षित होसकें, इस तरह कला का दिग्दर्शन कराने से लोगों की जिज्ञासा बढ़ती है व कला का पुनरुद्धार होता है। इस दृष्टी से विचार करने से, समझदार व जिज्ञासु लोगों के सामने प्राचीन कलाओं की विशेषता दिखाना यह एक महत्वपूर्ण कार्य है। यूरोप, अमेरिका के सुशिक्षित समाज के सामने नष्ट प्रायः हुई भारतीय नृत्यकला का अत्यन्त आकर्षक प्रदर्शन कर जिन्होंने इसका पुनरुद्धार किया है, उसमें श्री० उदयशङ्कर को ही सर्व प्रथम स्थान देना होगा। पाश्चात्यों की पसन्दगी, नापसन्दगी का अध्ययन करके उन्हें दीवाना बना देने वाले नृत्य उदयशङ्कर ने रङ्गभूमि पर प्रदर्शित किये। इसलिये पाश्चात्य रसिकों का ध्यान भारतीय नृत्यकला के ओर खिंचा।

उदयशङ्कर का जन्म उदयपुर में होने से उनके पिता श्री० डा० श्यामशङ्कर चौधरी ने आपका नाम उदयशङ्कर रखा, आपके पिता उस समय उदयपुर शिक्षा विभाग में थे, बालपन से ही आप ललित कला के शौकीन रहे, मकान की भीतों पर चित्रविचित्र रेखाएँ खींचने के अपराध में आप पिताजी के द्वारा कभी कभ मार भी खाया करते थे। उलटी सीधी रेखाएं खींचने में उदयशङ्कर की चित्रकला का अंकुर छिपा हुआ था, परन्तु इससे दीवालें खराब होती हैं, यह व्यवहार ज्ञान कहां था ? चित्रकला के साथ ही आप सङ्गीत के बड़े शौकीन थे, यही शौक उनकी शिक्षा में सहायता देने लगा। आपके भविष्य की चिन्ता सभी को होने लगी, पाठशाला से भागने वाला 'उदय' गाने की महफिलों में रंगजाया करता था, पाठशाला से गोता लगाकर इमली, बेर खाना कहीं से सङ्गीत की ध्वनि आते ही वहीं अड़जाना या नदी में खूब तैर कर दिन बिताया करता था। उच्चवर्णीय ब्राह्मण कुल का बालक नीची जाति के लोगों के साथ सङ्गीत के बहाने समय बितावे, यह चौधरी बाबू के कुल को शोभायमान नहीं था।

उदयशङ्कर ने प्राथमिक शिक्षण समाप्त कर द्वितीय शिक्षण प्रारम्भ किया, फिर भी चित्रकला व सङ्गीत का शौक आपका कायम रहा। कई बार उनके सनातनी कुटुम्ब द्वारा उनकी इच्छा के विरुद्ध सौम्यशब्दों में आदेश किया जाता रहा, परन्तु उसका परिणाम ठीक उलटा हुआ। समाज ने अगर इस कला को इतना त्याज्य समझ

रखा है, तो इसकला का ज्ञान ईर्षावश करके अपनी मेहनत का प्रभाव दिखाना चाहिये, यही निश्चित किया। बढ़ती आयु के साथ उदय की कला की प्रगति देखकर उनके पिता जी को यही शङ्का होने लगी कि क्या उदय का विरोध करने में मैं स्वतः ही गलती पर तो नहीं हूँ'? उन्होंने उदय के इच्छानुसार ही चलने का निश्चय किया, ऊंची तालीम से अलग कर सन् १६१७ में 'जे० जे० स्कूल आफ आर्टस्' बम्बई में चित्रकला शिक्षण के लिये भेजदिया, इसी समय उदयशङ्कर 'गान्धर्व महाविद्यालय बम्बई' में सङ्गीत शिक्षा के लिये जाया करते थे। उदयशङ्कर को चित्रकला के प्रथम पाठ देने वाले प्रसिद्ध महाराष्ट्रीय चित्रकार श्री० रा० ब० धुरन्धर और सङ्गीत का प्रथम ज्ञान कराने वाले श्री० विनायकबुआ पटवर्धन हैं। इन दो कलाकारों के विषय में आपक अभीतक आदर है और वे स्वतः वैसा कहते भी हैं।

पुत्र की इच्छानुसार उसे इच्छुक शिक्षा मिल सिकने के लिये जिस समझदारी की आवश्यकता उसके अविभावक को चाहिये, वह पं० श्यामशङ्कर में मौजूद थी, वे स्वतः प्रथम शिक्षा विभाग में थे, परन्तु अपनी कर्तव्यशक्ति के बलपर वे एम० ए० पी० एच० डी० व वैरिस्टर होने के कारण शीघ्र ही झालावाड़ राज्य के दीवान पद पर विराजमान होगये। आपकी यह इच्छा थी कि मेरा पुत्र भी मेरे जैसा उच्च शिक्षण लेकर प्रसिद्ध हो।

आर्ट स्कूल बम्बई में तीन वर्ष शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपके पिताजी ने 'रॉयल कॉलिज ऑफ आर्टस लन्दन' में शिक्षा प्राप्त करने के लिये उदयशङ्कर को विलायत भेज दिया। इस जगत प्रसिद्ध संस्था में सर विलियम रोथेन्स्टेन नामक जगत प्रसिद्ध चित्रकार से आप चित्रकला का अध्ययन करने लगे, उसी का परिणाम यह हुआ कि आपने इस संस्था की डिगरी सम्मान पूर्वक प्राप्त की। इतना ही नहीं 'स्पेन्सर' और 'जार्ज क्लॉफ्केन' यह दो पदक भी आपने प्राप्त किये। भारतीय विद्यार्थी की सफलता की यह प्रथम सीढ़ी थी। आपका चारों ओर अभिनन्दन होने लगा।

इस समय प्रसिद्ध चित्रकार होने के बजाय दूसरे ही विचार उदयशङ्कर के मन में घर कर रहे थे। आपके पिता जब लन्दन में थे उस समय आपने कुछ नाटिकाएँ लिखी थीं। गत महायुद्ध के ज़ख्मी भारतियों की मदद के लिये उनका प्रयोग करके उनकी आमदनी उन्हें दी जाने वाली थी। इन प्रयोगों के यश का श्रेय भी उदयशङ्कर के सङ्गीत को देना होगा। उनका ध्यान उस समय सङ्गीत की ओर विशेषतः नृत्यकला की ओर झुका। मित्रों के आपसी कार्यक्रम में अपनी नृत्यकला का वे प्रदर्शन भी करने लगे थे। आपका गौरव तभी से बढ़ना आरम्भ होगया था। एक दिन एक आपसी कार्यक्रम में जगतप्रसिद्ध नर्तकी अनापावलोवा भी कहीं उपस्थित थी, उदयशङ्कर के अप्रतिम कलाकौशल को देखकर उसकी श्रद्धा और रुचि इस कलाकार की ओर आकर्षित हुई। अनापावलोवा संसार श्रेष्ट नर्तिका थी, परन्तु कहीं भी कोई नवीनता दिखाई देने पर उसका प्रयोग अपनी कला में कर लेना यह गुण ग्राहकता उसमें थी। सन् १६२३ में भारतीय नृत्यकला की शिक्षा अपनी पार्टी में देने के लिये उसने उदयङ्कर को अपने साथ रख लिया। श्री० उदयशङ्कर ने राधाकृष्ण व अन्य कुछ नृत्यों के प्रकार तैयार करके उसकी पार्टी को सिखाये। वे स्वतः भी उसमें भाग लिया करते थे

इसी पार्टी के साथ आप अमेरिका गये, वहां भी इस भारतीय नृत्यकार का खूब स्वागत हुआ।

इसके बाद कई कारणों से श्री० उदयशङ्कर अनापावलोवा की पार्टी से अलग होकर लन्दन, पेरिस में स्वतन्त्र कार्य करके जीविका चलाने लगे।

वे दिन बड़े कष्ट से आपने निकाले। शायद वह आपके कला प्रेम की कसौटी थी। कला के लिये आपने अपना सर्वस्व त्यागने के बाद अपनी जन्मभूमि को वापिस आकर पिता से मदद की याचना करना उन्हें नहीं जँचा, दूसरा धन्दा किया जाय तो ध्येय की हानि होती थी।

आज भी वह दिन याद आजाने पर आपके रोंगटे खड़े होजाते हैं। किसी गली के छोटे से होटल में मस्त शराबियों पर रसिकता के बहाने, अपनी कला का प्रदर्शन उन्हें केवल उदर निर्वाह के लिये करना पड़ता था। शराब में मस्त हुए मानवी पशुओं का मनोरंजन करना, इससे अधिक कौनसी विचित्र घटना कलाकार के लिये होसकती है? थोड़ा सा वेतन मिलने से न पेट भर खाना न पूरा कपड़ा, ऐसी हालत में कैसे कोई अपनी कला का कौशल दिखाये? एक बार तो शराब के नशे में चूर एक शराबी ने होटल के मैनेजर से कहा—"जिसे ठीक पैर पटकना तक नहीं आता है, वह क्या नाचेगा और हमारा मनोरंजन करेगा" शायद उस शराबी को उदयशङ्कर के नृत्य में अपनी 'लय बद्धता' की नकल देखने की इच्छा हुई होगी! परन्तु एक के पैर शराब के कारण उलटे सीधे पड़ते थे तो दूसरे के दरिद्रता के कारण उलटे सीधे गिर रहे थे इस अन्तर को कौनसा विद्वान उन्हें वहां समझाता?

आख़िरकार, उदयशङ्कर को वह मार्ग भी छोड़ना पड़ा। बेकार होकर भटका जाय तो सरकारी खर्च से स्वदेश को रवानगी होजाने का भय था। पास पैसा नहीं, किसी का सहारा नहीं, परन्तु कला प्रेम की इच्छा बलवती थी। उसी समय आशा को एक किरण दिखाई दी। पैरिस में श्री० विष्णुपन्त शिराली नामक एक महाराष्ट्रीय युवक था, इसने भी गांधर्व महाविद्यालय से सङ्गीत का अध्ययन किया था। बस फिर क्या था, आपस में पत्र व्यवहार होकर एक दिन पैरिस शहर में भारतीय नृत्य कला का कार्यक्रम करने का निश्चिय हुआ। श्री० उदयशङ्कर के कार्यक्रम में सङ्गीत की बागडोर विष्णुपन्त शिराली संभाला करते थे। पैरिस के प्रसिद्ध नाटक गृह में एक दिन आपका कार्य क्रम हुआ।

पहिला ही प्रयोग इतना सफल हुआ कि चारों ओर से आपकी तारीफ़ हुई। आपके नृत्य को देखने के लिये काफ़ी जन समुदाय उमड़ पड़ता था। आपको व आपके कार्यक्रम के ठेकेदारों को इससे काफी पैसा मिला।

पैरिस में स्थित बहुत से ठेकेदारों ने अपने-अपने देश में आने के लिये उदयशङ्कर को निमन्त्रित किया। पाश्चात्य देशों में कलाकार को केवल अपना ही कार्य करना पड़ता है, अन्य सब कार्य ठेकेदार किया करते हैं। प्राप्त हुई रक़म में से हिस्सा बांट ठेकेदार व कलाकार में हो जाता है। इससे कार्य क्रम भी यशस्वी होते हैं और कलाकार को नुकसान की जोखम भी नहीं उठानी पड़ती।

पैरिस के कार्यक्रम के पश्चात् उदयशङ्कर यूरोप के दौरे पर निकले। इस प्रकार आप यश का संचय करते हुये अमेरिका पहुँचे। वहां के लोगों ने भी आपकी कला को अपनाया। सन् १९२९ में आप भारत वापिस आये। विदेशों से मान-सम्मान और धन की प्राप्ति कर लौटे हुये उदयशङ्कर का भारत ने दिल खोलकर स्वागत किया। भारत में आपका पहिला कार्यक्रम कलकत्ते में हुआ। इस प्रकार भारतीय नृत्यकला की पताका फहराने वाले इस वीर पर प्रशंसा पुष्पों की वर्षा होने लगी।

पाश्चात्य देश में इन्होंने भारतीय व पाश्चात्य नृत्य-साहित्य का खूब अभ्यास किया व उसी के आधार पर अपनी कल्पनानुसार कुछ नृत्य प्रकार तैयार किये। काम, क्रोध इत्यादि मनोविकार दर्शाने के भाव मानवजाति में सब ओर एकसे हैं, मानव-स्वभाव का सूक्ष्म से सूक्ष्म अभ्यास कर, उसके आधार पर तैयार किये नृत्य-प्रकार, यहां आने पर जब मिलान कर देखे तब वे बिलकुल सही निकले। यह देखकर उनका मन आनन्द से भर गया। वास्तविक गायक अपने स्वर अलापों से जो परिणाम दिखा सकता है, या चित्रकार अपने रङ्ग व तूलिका के बल पर जो भाव दिखा सकता है, अथवा नट अपनी वाणी द्वारा इच्छित परिणाम कर दिखाता है, ठीक वही परिणाम एक सफल नर्तक अपने शारीरिक हाव-भाव से कर दिखाता है। इसी सत्य आनन्द से आप में एक प्रकार का आत्मविश्वास उत्पन्न हुआ, और नृत्य के नये-नये प्रकार तैयार करके अपने भावी जीवन में उसका उपयोग किया।

आपने आजतक अमेरिका का चार बार दौरा किया है, उतनी ही बार यूरोप का भी दौरा किया है। आपको इसमें काफी धन मिला, फिर भी जिस कला के द्वारा धन, मान, सम्मान की प्राप्ति हुई, उस कला के लिये अपना सर्वस्व अर्पण करना आवश्यक है, इसी उच्च भावना से प्रेरित होकर आपने "उदयशङ्कर इण्डिया कल्चर" यह संस्था संगीत व नृत्यकला की उन्नति के लिये 'अलमोड़ा' में स्थापित की है। आशा है इस संस्था के द्वारा वे अपने धैर्य की पूर्ति करेंगे।

भारतीय नृत्यकला की वृद्धि के लिये ऐसी संस्था की बड़ी आवश्यकता थी, भारतीय कला-प्रेमी स्त्री-पुरुषों को योग्य मार्ग दर्शक मिलने पर इस कला की अवश्य ही उन्नति होगी। उसी प्रकार भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में प्रचलित नृत्य या संशोधन करके नये-नये नृत्य प्रकारों का सङ्गठन इस संस्था का कार्य रहेगा। कथकलि नृत्य के अधिकारी कलाकार श्री गुरुशङ्करन् नंबुद्री व उस्ताद अल्लाउद्दीन खां यह भी इस संस्था में शामिल हो रहे हैं।

श्री उदयशङ्कर स्वभाव से गर्व रहित व सादा रहन-सहन के हैं। जाति के बङ्गाली ब्राह्मण, उदयपुर का जन्म, बनारस में प्राथमिक शिक्षण, उसके बाद बम्बई में शिक्षण, विदेश में बहुत काल तक रहना, इन सब का परिणाम उनके बोल चाल पर बड़ा अच्छा पड़ा है। आप से बोलते हुए एक प्रकार के आनन्द का अनुभव होता है। आपको बङ्गाली, हिन्दी, गुजराती, अँग्रेजी, फ्रेंच इत्यादि अनेक भाषाओं का ज्ञान है। नृत्य में सौन्दर्य, तालबद्धता व एक प्रकार की ठोसता का मधुर मिश्रण होना चाहिए, इस ओर आपका अधिक ध्यान रहता है। नृत्य के समय उनके अङ्ग, उपाङ्ग, प्रत्यङ्ग

बोल उठते हैं, मानो मूक भाव दर्शन करते हैं, ऐसा ही मालूम होता है। प्रचलित भारतीय नृत्य-प्रकार में केवल पैरों की ही कसरत होती है, उसे योग्य प्रमाण में रख कर उसमें भाव दर्शन को वृद्धि करके, नृत्य-प्रकार बढ़ाने की ओर आपका अधिक ध्यान रहता है। "ह्विदम श्राफ लाइफ" वगैरह आपके नये नृत्य-प्रकार देखने योग्य हैं।

नृत्यकला की ओर आप एक विशेष दृष्टि से देखते हैं। नृत्यकला का व्यवहारिक जीवन में उपयोग भी ध्यान में रखने योग्य है। शरीर की चपलता व सुन्दर हाव-भाव दिखाना, यह नृत्य का प्रधान हेतु है, फिर भी इससे शरीर-सौन्दर्य की वृद्धि होती है, पौराणिक व ऐतिहासिक कवियों को भाव विषयक स्मृति नृत्य-प्रकारों से उत्पन्न कर दिखाई जा सकती है, सच्चे कलाकार को नक्काशी की हुई कामदार वीणा की जरूरत तो नहीं होती, उसे तो सुरीली वीणा चाहिये।

आपकी पार्टी में आपके तीन भाई भी कार्य करते हैं। एक भाई श्री राजेन्द्रशङ्कर कार्यक्रम इत्यादि की व्यवस्था देखते हैं, पार्टी में करीब २० कलाकार हैं। इन सब के साथ इतना प्रेम-पूर्वक व्यवहार होता है कि मानों यह सब एक ही कुटुम्ब के हैं। इस तरह का समव्यवहार होने से ही प्रत्येक कलाकार उत्साह से अपना कार्य करता है सङ्गीत दिग्दर्शन का कार्य श्री० विष्णुपन्त 'शिराली' देखते हैं। आपकी पार्टी में चार श्रेष्ठ नर्तकियों का भी समावेश हुआ है, इनमें 'सिम्की' यह फ्रेंच युवती विशेषतः अधिक नृत्यों में भाग लेती है। नृत्य कार्यक्रम में वृन्दवादन (ऑर्केस्ट्रा) भी बड़ा मनोरंजक होता है।

भारतीय नृत्यकला के भविष्य पर बोलते हुए उन्होंने मुझ से कहा कि भारतीय नृत्यकला का अब उज्ज्वल भविष्यकाल है। हमारे विश्व विद्यालयों में अब सङ्गीत का प्रवेश होचुका है, उत्तम कलाकारों ने सङ्गठित होकर अगर दौरे पर निकलना शुरू कर दिया तो सामान्य जनता में भी कला प्रेम बढ़ेगा। हमारे यहां ही नहीं, विदेश भी उन्हें काफी धन तथा मान सम्मान मिलेगा।

आपने कहा कि "विदेश में अगर कार्यक्रम करना है तो एक बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिये, वह यह कि हमारे यहां के उच्च कलाकार ही वहां जाकर सफलता प्राप्त कर सकेंगे क्योंकि हमारी कलाओं का विदेशियों ने कसकर अभ्यास किया है। उनके सामने भारतीय कला के नाम पर चाहें जैसी धांधली नहीं चलेगी। कुछ सामान्य कलाकारों की यही समझ होगई है कि हमारी कला को वे क्या समझेंगे।"

कुछ लोग यह आक्षेप करते हैं कि उदयशङ्कर की तारीफ भारतीय कला से अनभिज्ञ लोग ही करते हैं, और ऐसे ही लोगों ने की है। कुछ लोगों की यह भी धारणा है कि विदेश में भारत के नाम पर सब कुछ खप जाता है, इन आक्षेपों का उत्तर देते हुये उदयशङ्कर ने कहाः—

"इन आक्षेपों को मैं आज नवीन ही सुन रहा हूँ ऐसा नहीं है। मैं केवल इतना ही कहता हूँ कि विदेशियों ने जिन्हें विशेषज्ञ माना है, ऐसे व्यक्तियों ने मुझसे स्वतः मिलकर मेरा गुण गौरव किया है। उधर के श्रेष्ठ कलाकार मेरी तारीफ़ 'केवल एक भारतीय नृत्य' है इसलिये करते हों तो उस कला के सभी इच्छुकों को दोषी कहना

होगा। उधर की सामान्य जनता के विषय में कहा जाय तो मेरे पास मेरे २० कलाकार एक हरा परदा, और वाद्यों के अलावा उन्हें आकर्षित करने के लिये क्या रखा था? जब कि इसके विपरीत उनकी बड़ी-बड़ी नृत्य पार्टियां, उनकी आकर्षक वेशभूषा, जगत विख्यात कलाकारों का सङ्गठन, सुन्दर युवतियों के अर्धनग्न नृत्य, इत्यादि से सुसज्जित कार्य क्रम पेरिस में होते रहते थे, फिर भी मैंने वहां हजारों रुपये कई महिनों तक लगातार कमाये। इससे सिद्ध होता है कि मेरे सादेपन में अवश्य कोई आकर्षण था, जिससे वहां जन समुदाय इकट्ठा हुआ करता था, यह सब तो मेरे टीकाकार भी स्वीकार करेंगे।"

इसमें शङ्का नहीं कि श्री० उदयशङ्कर के हाथों से उनकी संस्था के द्वारा भारतीय नृत्यकला लयबद्ध होकर उन्नति करेगी। परन्तु उसके साथ ही एक विचार मनमें उठता है कि अपनी भारतीय कला का भाग्य हम स्वप्रयत्न से ही उज्ज्वल करते हैं, तब विदेशी कलाओं का अभ्यास कर उसमें भी हम अपना नाम क्यों न अमर करें? मैं अपने विचार अधिक स्पष्ट करता हूं:—

पाश्चात्यों का क्रिकेट खेल हमारे खिलाड़ियों ने सफल खेलकर दिखादिया। हॉकी में भी हमारा संघ संसार श्रेष्ठ सिद्ध हुआ। साहित्य में श्री० रवीन्द्रनाथ टैगोर, शास्त्रीय संशोधन में सर जगदीशचन्द्र बोस, सी० बी० रमन् ने उनकी मति कुंठित करदी, फिर पाश्चात्य नृत्यकला का भी सशास्त्र अभ्यास कर इस क्षेत्र में भी हमारे कलाकार क्यों न ऊँचा स्थान प्राप्त करें? कुछ भी हो हमारे कलाकारों को भी पाश्चात्य कलाओं पर तुलतात्मक दृष्टि रखकर अभ्यास करना चाहिये, और संसार का मान सन्मान प्राप्त करना चाहिये, यह महत्वाकांक्षा बुरी तो नहीं है?

यह महत्वाकांक्षा पूरी करने का कार्य श्री० उदयशङ्कर व उनके सहकारी कर रहे हैं। आशा है इस कार्य में आवश्यक मदद, सहानुभूति और प्रचार करने के लिये भारतीय कभी पीछे नहीं हटेंगे।

(किर्लोस्कर मराठी से पं० रविनाथ द्वारा अनुवादित)

———

तांडव और लास्य नृत्य की परनें

(ले०—बा० कृष्णचन्द्र 'निगम' पायोनियर आफ़ म्यूजिक आर्ट्‌स)

आनन्द तांडव (तीनताल मात्रा १६)

+ २ ० ३

तादी दाम थेई या थेई या थेई या दिगदिग तत्थेई तत्थेई तत्थेई तत्थेई तत्थेई थेई तत

—लय बढ़ाकर—

ता दी दी तक थो धिंग ना म धुम किट तो ऽ तिदाम किट तिदाम किट

ता थेई तक तक धिधि तक धिलां ऽग धिधि तक धिलां ऽग धिधि तक धिलां ऽग

थेई थेई थेई तित ता थेई थेई थेई थेई थेई तित तित थेई तित ता तित

तादि ध्धे तात तात तादि था तादि धेता तादि धेता तादि था तादि था धेत्तात ता

तथुन तक थुन तक तक धिकि तक तक धिकि तक धिलां तक धदि गिन धदि गिन

अधिकतर ताण्डव नृत्य की परन चौताले में ही मिलती हैं, और अच्छी भी मालूम देती हैं, क्योंकि यह ध्रुपद का ठेका है और बड़ा गम्भीर है। अतः कुछ परनें चौताले में भी लिखता हूँः—

मृदङ्ग के साथ—चौताला मात्रा १२

+		०		२		०		३		४	
ताधि	लांग	तक	धिलां	गत	कत	कधि	लांग	धिलां	गध्धे	धिलां	गध्धे
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

दुगुन में मुखड़ा तिहैया—

+ ० २ ० ३ ४

ता थेईथेई तत्ता तिगदिग थेई थेई तत्ता तिगदिग थेई थेई तत्ता तिगदिग

सवा दुगुनी लय में—

\+　　　　　　　　० 　　　　　　　　२
तकिट　धिकिट　　धुमकिट　तकतकधदिगिन　　तकिट　धिकिट
० 　　　　　　　　३ 　　　　　　　　४
धुमकिट　तकतकधदिगिन　　तकिट　धकिट　　धूमकिट　तकतकधदिगिन

ढाई गुनी लय की परन—

\+　　　　　　　　० 　　　　　　　　२
तकतक　थेईतकतक　　थेईतक　तकगदिगिन　　तकतक　थेईतकतक
० 　　　　　　　　३ 　　　　　　　　४
थेईतक　तकगदिगिन　　तकतक　थेईतकतक　　थेईतकतक　गदिगिन

पौने तिगुनी लय के बोल—

\+　　　　　　　　०
ता　थेईथेई　　तकथेईथेई　तातकतक　　तिगदिग　थेईतकतक
　　　　　　　　३ 　　　　　　　　४
थेईतकथेई थेईतिगदिग　　थेईतकतक　थेईतकथेई　　थेईतिगदिग　थेईथेईतक

—तिगुनी लय—

\+　　　　　　　　० 　　　　　　　　२
तातकतक कड़ानतकतक　　तत्तातिगतिग दिगदिगथेई　　तकतक कड़ानतकतक
० 　　　　३ 　　　　४ 　　　　　　　　+
धेत्ता तत्तातिग　दिगथेई तकतक　कड़ानतकतक　तिगदिग　　थेई

—छैगुनी लय की मसीतख़ानी परन—

\+　　　　　　　　०
थेईतकतकथेई　कड़ानताताकड़ानधा　थेईताथेईतकतककड़ान　तरांगथेईतरांगतरांग
२ 　　　　　　　　०
थेईतकतकथेई　कड़ानधानताताकड़धान　थेईताथेईतकतककड़ान　तरांगथेईतरांगथेईतरांग
३ 　　　　　　　　४
थेईतकतकथेई　कड़ानताताकड़ान　थेईताथेईतकतककड़ान　तरांगथेईतरांगथेईतरांग

संहार ताण्डव नृत्य के बोल

(विलम्बितलय, वाद्यसङ्गीत भयंकर व गम्भीर)

पहिले यह तीया लीजिये

घिड़ धेत्त घ्धे　तगिन्न　यही बोल तीनबार लेकर समपर "धा" कहकर आइजाइये १२ मात्रा में ठीक बैठेंगे।

—आगे के बोल संहार ताण्डव—

+		०		२		०	
किड़द्धे	त्धेत्धे	धड़न्न	किटतक	गणपति	तिटकिट	दगनक	दगनक
३		४		+		०	
तद्दीत	किटतक	धेत्तकिट	ताऽड़	धेतागिन्न	धाता	धा	तिरकिट
२		०		३		४	
धिरकिट	तकतिट	धकधेत	किटताऽ	ड़ताऽऽ	थेईऽऽ	ताऽऽ	थेईऽऽ

त्रिपुर तांडव (चौताला)

+		०		२		०	
खिर्रर्र	किट	धेत्	धलांग	धलधल	धलथलांग	थुंगथुंगा	थुमाकथुङ्गा
३		४		+		०	
तोधमिक	धमिकतक	धमिकधमिक	तकतकतक	थौग्रार्ड	धेतघ्धे	तगिन्नथुङ्ग	थुङ्गाथुङ्गा
२		०		३		४	
धलधलांग	धलधलांग	धलधलधल	धिलांधिलांधिलां	कड़धेत्	थेईधड़	धेतथेई	कड़धेत्

लास्य नृत्य की परन (तिताला)

+				२				०				३			
ता	थेई	तत	थेई	तिधे	तित	थेई		ताधा	थेई	ता	थेई	ताधा	थेई	ता	थेई
तिधे	तिधा	ता	थेई	तिधे	तिधा	ता	थेई	ताता	थेई	ताता	थेई	तिधे	तिधा	ता	थेई

रास परन (तिहैया समेत)

+	२	०	३
लकड़ लकड़ धिलांग धित्तक	तो दिंग दिलङ्ग तोंग	ता धिलांग ता धिलांग	तो दिंग तो दिंग

+	२	०
लकड़ लकड़ धिलांग धिलांग	ता गदिगिन थेई धिलांग	धिलांग ता गदिगिन थेई
३	+	
धिलांग धिलांग ता गदिगिन	थेई	

—अप्रकाशित "नृत्यसागर" से (Copy right)

देश विदेश के नृत्य

(ले० श्री० देवकीनन्दन जी बन्सल)
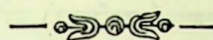
नृत्य, मनुष्य के आनन्द के समय पर स्वयं ही उत्पन्न होने वाली स्वाभाविक भावाभिव्यक्ति है। हम जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जीवन नृत्य के लम्बे समय में प्रत्येक पल पर नाचते रहते हैं। आखिर जीवन भी तो एक नृत्य ही है। अगर जीवन नृत्य न होता और मानव अनुभूतियों के विभिन्न स्थलों पर अगर हम अपने आप न नाचते होते, तो क्यों नर्तकों को (Naturality) प्राकृतिकता लाने के लिये दिन रात एक करना पड़ता।

मनुष्य दिन रात नाचता है, और उसी स्वाभाविक अखण्ड नृत्य की नकल करने के लिये नृत्यकार को कठिन परिश्रम करना पड़ता है। तभी तो हम प्रत्येक प्रदर्शन की आलोचना करते समय (Naturality) की खोज किया करते हैं।

संसार के हर एक देश और हर एक जाति में किसी न किसी रूप में नृत्य प्रथा प्रचलित है। क्योंकि नृत्य का सम्बन्ध मनुष्य के आनन्द और उल्लास से है। खुशी में जिस समय मानव हृदय झूमने लगता है तो उस आनन्द की असह्य धारा में बहकर वह नृत्य करने के लिये विवश होजाता है।

मनुष्य ही नहीं पशु, पक्षी, जलचर, थलचर और नभचर भी नृत्य करते हैं। देवता नृत्य करते हैं। सूर्य और चन्द्रमा नृत्य करते हैं। विष्णु, शिव और ब्रह्मा नृत्य करते हैं। पापी, दुर्व्यसनी, भक्त और भगवान् नृत्य करते हैं। प्रत्येक स्थान पर नृत्य होता है। 'प्रेम पात्र' के हृदय को लुभाने के लिये और अपने हृदय को मूर्च्छित करने के लिये हम, आप, वह और ये सभी नृत्य करते हैं। ऐसा कौनसा है जो नाचता न हो और ऐसा कौनसा है जो गाता न हो।

अच्छा तो अब देश विदेश के अलग-अलग नृत्यों के विषय में कुछ लिखता हूं। भारतीय नृत्यों की सभ्य समाज में प्रचलित पद्धति तो आप अन्य विद्वानों के द्वारा जान सकेंगे।

भील नृत्य— बर्मा और बङ्गाल के मध्य में व पश्चिमी पहाड़ों की घाटियों में बसने वाली भील जाति अपने अद्भुत नृत्यों के लिये प्रसिद्ध है। धनुष, बाण, चिड़ियों के पङ्ख और जानवरों की खाल के बने हुये अनेकों तरह के अलङ्कारों से सजकर वे नाचते हैं।

स्त्री और पुरुष सभी एक समुदाय में इकट्ठे होकर अपने शरीर को खड़िया व गेरू से पोतकर उलटी सीधी भयानक शक्लें बनाकर भीलों का नृत्य होता है। नाचते-नाचते ये लोग इतने मस्त होजाते हैं, कि अपने शरीर तक की सुधि नहीं रहती। खूंखार जाति होने के कारण भीलों के नृत्य कभी-कभी झगड़ा होजाने पर भयङ्कर रण संग्राम का रूप धारण कर लेते हैं। परन्तु ताल और लय का साधारण ज्ञान भी इनको इतना काफी होता है, जिससे कि इनके नृत्य में रौनक कम नहीं होपाती।

मांस, मदिरा और हिंसा की ओर इन असभ्य जातियों की विशेष प्रवृत्ति रहने के कारण इनके नृत्यों में भी पाशविकता और हिंसक सामानों का बाहुल्य रहता है।

फ़िजी—आस्ट्रेलिया, सहारा (अफ्रीका) और अन्य समस्त जङ्गली प्रदेशों की जातियों में भी कुछ ऐसे ही नृत्य प्रचलित हैं ! जानवरों के सींगों के बने मुकुट और उनकी हड्डियों के आभूषण व खालों के वस्त्र पहिन कर ये लोग नृत्य करते हैं। बहुधा नृत्य मण्डलाकार घेरा बनाकर बहुत से साथियों के साथ होता है, बीच में आग जलती रहती है और उसमें जानवरों का मांस भुनता रहता है।

अगर मनुष्य की, या किसी बड़े जानवर की शिकार की जाती है तो अवश्य नृत्य उत्सव मनाया जाता है। नृत्य के बाद सब शिकार के मांस को भून-भून कर खाते हैं। नृत्य में स्त्रियाँ कम भाग लेती हैं। इन लोगों के वाद्य यन्त्रों में ढपली और ढोलक की तरह के साज होते हैं। बहुत से नर्तक लकड़ी और भाले हाथ में लेकर नाचते हैं। इन लोंगों के नृत्य के समय अगर कोई दूसरा आदमी जो इनके झुण्ड से अलग हो, पहुँच जाय तो उसकी जान बचना मुश्किल होजाता है।

यह तो रहे जङ्गली जातियों और वर्तमान सभ्यता से परे के निवासियों के नृत्य अब आपको विभिन्न प्रान्तों और देशों के कुछ खास-खास नृत्यों के बारे में बतलाता हूं-

मैमनसिंह (बिहार)— में हिन्दू ग्रामीण जनता के नृत्य देवी देवताओं का शृङ्गार करके बनावटी रूप धारण करके होते हैं। बङ्गाल और बिहार की दोनों संस्कृति ने मिलकर शक्ति उपासना का विशेष महत्व रक्खा है। इसी वजह से वहां काली, महादेव और शक्ति नृत्य ज्यादा होते हैं। यहां का 'बूढ़ा बूढ़ी' नृत्य भी बहुत दिलचस्प होता है।

नृत्यकार लहँगा, सलूका और माला इत्यादि पहनकर चहरे पर काली का चेहरा बाँध लेता है। काली की जीभ बाहर लटकती रहती है, उसके हाथ में तलवार और खप्पर होता है। साथ में ढोलकी वाला ढोलकी बजाता रहता है और नृत्यकार तब मस्त होकर नाचता है। महादेव के नृत्य में त्रिशूल और प्याला व सिर पर सर्पों का मुकुट व मुख पर तीन नेत्र वाला चहरा बांध लिया जाता है। पीछे काली-काली जटाएँ लटकती रहती हैं। बदन पर एक सादा कपड़ा पहिन लिया जाता है।

ये नृत्य सादा और बहुत मामूली खर्च होते हैं। 'बूढ़ा बूढ़ी' नृत्य में एक बूढ़ी स्त्री और एक बूढ़ा बन जाता है, तब वे कमर झुका कर चलते हैं।

आसाम नृत्य—आसाम की पहाड़ी जातियां, जो पहाड़ों की चोटियों पर अपने अस्थिर गांव बनाकर रहते हैं नृत्य के बड़े घनिष्ट प्रेमी हैं। चावल की फसल होजाने पर जब तमाम किसानों के घरों में धानों का ढेर लगजाता है तब उनका आनन्दोत्सव शुरू होता है। फसल की खुशी में वे लोग पागल होजाते हैं। खूब मदिरा पीते हैं, मांस खाते हैं, तब खूब गाते और नाचते हैं। नृत्य में गायन, वादन और डटकर दौड़ लगती है। मदिरा के तीव्र नशे में ये लोग गिर पड़ते हैं और फिर पीते हैं। फिर नाचते हैं और फिर पीते हैं। इस तरह इनको रात-रात भर नाचते बीत जाती है। बूढ़े, जवान, स्त्री और लड़कियां सब नृत्य में शामिल होते हैं। कमर में पट्टीदार तहमद

बाँधकर बदन पर दुपट्टा लपेट लेते हैं। आपस में सबका कदम इकसार और एक साथ ताल में उठता है। परन्तु धीरे-धीरे नशे में डूब कर ये लोग मूर्च्छित होजाते हैं।

शिमला प्रदेश के नृत्य

प्रकृति की सुहावनी गोद में पला हुआ शिमला प्रदेश अपने स्वतन्त्र रिवाजों के लिये जितना प्रिय है, उतने ही यहां के नृत्य भी बड़े सुन्दर हैं। फसल तय्यार होजाने पर शिमला वासी देहातियों का नृत्य शुरू होता है। पहाड़ों की बर्फीली और ठण्डी घाटियों में बसी हुई ये स्वस्थ और सुन्दर जातियां रूप और रस दोनों पर अधिकार किये हुये हैं।

यहां के गायन, घरेलू जीवन और प्रेम से अधिक सम्बन्ध रखते हैं। 'करिआला' नामक नृत्य जो अग्नि के चारों ओर नाचकर किया जाता है हर्ष सूचक गाने और लय में होता है। नर्तकों को "कैरालची" कहते हैं और वे केवल पुरुष होते हैं, स्त्रियां केवल देखती हैं। इसी तरह पुरुषों का एक दूसरा नृत्य है जिसे "छ्री" कहते हैं। भारुआ नाम का खास नृत्य केवल स्त्रियों का होता है, जो शादी के ख़ास अवसरों पर होता है। इस नृत्य में उन सुन्दरियों के कोमल हाथ व पैरों का सञ्चालन अत्यन्त मनोहर होता है। ये नृत्य चांदनी रात्रि में होता है, पूरे ज़ेवर और वज़नी चूड़ियों की झङ्कार जब नर्तकियों के अङ्ग हिलाते समय बिल्कुल एक लय में होती है और पहाड़ी प्रदेश की ठण्डी-ठण्डी मन्द पवन के झोंके जब उनके कोमल शरीर को स्पर्श करते हुए निकलते हैं, तो वह दृश्य उनकी आत्मा को आह्लादित कर देता है।

पुरुषों के नृत्य की स्वाफा, अँगरखा, पायजामा और कमर बन्ध ही पोशाक हैं। ड्रम, तुरही व नक्कारों की आवाज के साथ मन्द्र व द्रुत लय में उनके हाथ पैर चलते हैं।

तिब्बत के नृत्य—

तिब्बत प्रदेश पहाड़ी और अत्यन्त प्राचीन ढकोसलों का मानने वाला होने के कारण अभी तक काफी पिछड़ा हुआ है। जादू, मन्त्र और भूत प्रेत पूजा तिब्बत में बहुत मानी जाती है। यहाँ के निवासियों का मन्त्रों में अटल विश्वास है। अतएव किसी विशेष आनन्दोत्सव के अलावा ज्यादातर यहाँ भूत, प्रेत की शकल बनाकर चेहरे व अजीब-अजीब कपड़े पहिनकर देवता को प्रसन्न करने के लिए नृत्य किये जाते हैं।

ये जातियाँ 'तलाक' प्रथा को मानने वाली व तनिक से विरोध में दाम्पत्य जीवन की ग्रन्थि को तोड़ देने वाली होने के कारण परस्पर प्रेम और आनन्द के लिये नृत्य जैसी ललित कला का उपयोग नहीं कर पातीं।

यहां के नृत्य वही बेढंगे और जङ्गलीपन लिये हुए होते हैं।

बर्मा के नृत्य—

भारत की तरह बर्मा की नारियां केवल घर के काम-काज और चूल्हा झोंकने में ही अपना जीवन बर्बाद नहीं करतीं। वे स्वतन्त्र पुरुष की तरह बाजार में जाती हैं और तमाम क्षेत्रों में हस्तक्षेप रखती हैं।

परन्तु इतनी कार्य व्यस्तता होते हुये भी बर्मा की स्त्रियों में नृत्य व सङ्गीत प्रेम अत्यन्त दृढ़ मूल से जमा हुआ है। छोटी ३ वर्ष की कन्या भी इतनी नृत्य पटु होती हैं कि देखकर आश्चर्य होता है। वहां की नृत्य व सङ्गीत पार्टियाँ प्रातः-काल से लेकर पूरे दिन और रात-रात तक चलती हैं। हाथ में जापानी पङ्खा, पूरी बांहों का छींटेदार कुरता, ऊँचे जूड़े में बँधे हुये बाल और कमर में तहमद लपेट कर, बर्मा की सुन्दरी नाचती हैं। समस्त बर्मा प्रदेश नृत्य और सङ्गीत का घर है।

कम्बोदिया के नृत्य—

अपने सुन्दर परन्तु भारतीय दृष्टि में अजब व अनोखे नृत्यों में कम्बोदिया के नृत्य एक ही हैं। यहां नर्तक भूमिका अभिनय के लिये बड़े बड़े शृङ्गार करता है। एक, दो, चार और दस-दस, बारह-बारह के झुण्ड में ये लोग नृत्य करते हैं। विस्तृत सुन्दर चौक में जहां कीमती कालीन और रोशनी का इन्तजाम होता है। नृत्य बालाएँ सात-सात की संख्या में नाचती हैं। परी नृत्य, मत्स्य नृत्य और रास नृत्य इनके नाचों का भारतीय नामकरण हो सकता है। घूमना, बैठना, हाथ, पैर; कलाई, उँगली और आंख इत्यादि के भाव पूर्ण सञ्चालन से सुन्दर भाव प्रदर्शन करना यहाँ की नर्तिकाओं की योग्यता का परिचय देता है।

इनके अलावा 'किन्नरी-नृत्य' और 'हनूमान-नृत्य' भी यहां के खास नृत्य हैं। जिनमें चहरे व कपड़े पहिन कर वे भाव और दृश्य बनाये जाते हैं। परन्तु वह होते सब उन्हीं की वेश भूषा में हैं, न कि हमारी कल्पना के अनुसार।

रूस के नृत्य—

साम्यवादी रूस में संसार के दूसरे देशों की तरह पूँजी-वादी नृत्य नहीं होते। वहां केवल मनोरञ्जन के लिये ही स्त्री पुरुष नाचते हैं, और उनका ढङ्ग भी ऐसा ही है, जैसा कि और यूरोपियन देशों का है। नृत्य व खेलकूद के, सुन्दर व आरामप्रद क्लब बने हुये हैं, जिनमें प्रत्येक मनुष्य जा सकता है। उनमें अलग-अलग स्थान हैं, बगीचे हैं और हर प्रकार का प्रसन्नता प्रदान करने वाला साधन है।

इटली के नृत्य—

सब्जी, अंगूर और प्राकृतिक वायु-मण्डल की उत्तमता के कारण, इटली के ग्राम्य निवासियों का स्वास्थ्य अत्यन्त श्रेष्ठ है। वहां की ४० वर्ष की नारी भी इतनी तन्दुरुस्त और सुन्दर है जो भारत में १ फीसदी जनता में भी हरगिज नहीं मिल सकती।

इटली में अंगूरों की फसल पर एक विशाल नृत्य उत्सव होता है, जिसमें फलों की रानी तमाम भवन का शृङ्गार केवल फलों से सजाकर कराती है। उस समय अंगूरों की लूट मचती है और समस्त ग्राम्य-वासी परस्पर स्त्री पुरुष के जोड़े में नाचते हैं। बीच में हवा को दाबकर बजने वाला बाजा हाथों में लिये एक आदमी स्वर निकालता है। स्त्रियां बालों में फूल लगाती हैं, गुलदस्ते लाती हैं और इस तरह से एक फूलों का नृत्य भी होता है।

हर हिटलर जब रोम् पधारे थे, तब उनके स्वागत में इटली निवासियों ने एक विशाल नृत्य प्रदर्शन किया था।

इटली में कई तरह के नृत्य प्रचलित हैं। 'तारनतला' 'सालतारेलो' और 'त्रल्लेरा' यहां के मुख्य-मुख्य नृत्य हैं।

चैकोस्लावाकिया के नृत्य—

चैकोस्लावाकिया में नर्तक खूब तबियत से श्रृङ्गार करके नृत्य करते हैं। पुरुष तो कुरता; पैन्ट, मोजे, जूते और कामदार बास्कट पहिन कर मालाएँ डाल लेते हैं। उनके सिर पर टोप में लगे हुये फूल बड़े अच्छे लगते हैं। उधर स्त्रियाँ आधी बाहों का कढ़ाव-दार कुर्ती और उसके ऊपर घुटनों तक का झगला पहिनती हैं। रानों तक के मोजे व जूते उनका आम श्रृंगार हैं। सिर पर टोपा सा पहिनकर ये लोग नृत्य करते हैं।

पोलैण्ड के नृत्य—

पोलैण्ड के नृत्य को देखकर मेरे ख़याल से आपको जरूर हँसी आजायगी। स्त्री और पुरुषों के सम्मिलित (Folk Dance) नृत्य तो वहां और देशों जैसे ही होते हैं, लेकिन उनमें नारी के केश खुले रहने से कुछ अजब श्रृङ्गार बनजाता है। पुरुषों के नृत्य तो ऐसे मटक-मटक कर लचक-लचक कर किये जाते हैं कि बरबस हँसी आजाती है। त्रांजक, ड्रोबनी, वोनिकी, रैकोविआक और सादेका, पोलेण्ड के मुख्य-मुख्य नृत्य हैं।

वायोलिन और बैग पाइप बैण्ड, नृत्य के खास साज़ हैं।

इसके अतिरिक्त समस्त संसार के नृत्यों का वर्णन करना और जानना कठिन होने के अलावा पूरे ग्रन्थ का रूप धारण करलेगा। अतएव अब और स्थान न लेकर यहीं समाप्त करता हूं।

अपने भैया को नाच नचाऊँगी

बौम्बे टाकीज़	✠✠	ताल	✠✠	गायक
फिलम "बन्धन"	✠✠	कहरवा	✠✠	'लीला चिटनिस और सुरेश'

स्वरलिपिकार—पं० निरंजनप्रसाद "कौशल"

अपने भैया को नाच नचाऊँगी।
सारी दुनियां में धूम मचाऊँगी, नाच नचाऊँगी।
देखो मान जावो जीजी न छेड़ो मुझे,
मैं जरूर सिंगार सजाऊँगी, नाच नचाऊँगी॥
तुम से न बोलूं क्यूं मेरे भैया,
हरगिज न बोलूं, सुनो तो भैया।
नाचते थे कृष्ण कन्हैया, तुम भी नाचो घूंघट को काढ़,
मैं डिम डिम डिम डमरू बजाऊंगी, नाच नचाऊंगी॥
लहंगा पहनाऊंगी चुनरी ओढ़ाऊँगी, जीजी बुरी मेरी जीजी बुरी,
झूमर पहनाऊंगी कंगन पहनाऊँगी, जीजी बुरी मेरी जीजी बुरी।
झुनन झुनन झुन झांझन पहनाऊंगी,
माथे पै बिंदिया लगाउंगी, नाच नचाऊंगी॥
जीजी तुम शैतानी करो ना, अपनी ही मन मानी करो ना,
तुम भी आना कानी करो ना, भैया आना कानी।
वरना कान उमेंठूंगी मैं तेरे, वरना कान उमेंठूंगी मैं और,
हलकी सी चपत जमाऊँगी, नाच नचाऊंगी॥

— ❧ —

स		स
अप		ने

+				+				+				+			
प़	ऩ	-	ऩ	स	र	र	र	र	ध	ध	प	मग	रग	ग	र
भै	या	ऽ	को	ना	ऽ	च	न	चा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न
स	ग	र	-	स	-	म	ग	म	ध	-	ध	ध	-	प	म
चा	ऊँ	गी	ऽ	ऽ	ऽ	सा	री	दुनि	याँ	ऽ	में	धू	ऽ	म	म

म	ध	प	–	*	*	म	ग	म	ध	–	ध	ध	–	प	म
चा	ऊँ	गी	ऽ	*	*	सा	री	दुनि	याँ	ऽ	में	धू	ऽ	म	म
म	ध	प	–	मग	रग	ग	र	स	ग	र	–	स	–	स	स
चा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न	चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ	अप	ने
प़	ऩ	–	ऩ	स	र	र	र	र	ध	ध	प	मग	रग	ग	र
भै	या	ऽ	को	ना	ऽ	च	न	चा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न
स	ग	र	–	स	–	ग	म	प	–प	प	ध	सं	सं	–	सं
चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ	दे	खो	मा	ऽन	जा	वो	जी	जो	ऽ	न
न	न	–	ध	प	–	ग	ग	ग	ध	–ध	ध	ध	–	प	म
छे	ड़ो	ऽ	मु	झे	ऽ	मैं	ज़	रू	ऽ	ऽर	सिं	गा	ऽ	र	स
म	ध	प	–	मग	रग	ग	र	स	ग	र	–	स	–	–	–
जा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न	चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ	*	*
ग	म	–	म	प	ध	प	ध	*	सं	न	ध	प	ध	प	–
तुम	से	ऽ	न	बो	ऽ	लूं	ऽ	*	क्यूं	मे	रे	भै	ऽ	या	ऽ
ग	म	–म	म	प	ध	प	ध	सं	न	–	ध	प	ध	प	–
हर	गि	ऽज़	न	बो	ऽ	लूं	ऽ	सु	नो	ऽ	तो	भै	ऽ	या	ऽ
*	सं	–	गं	रं	गं	सं	रं	*	न	न	सं	न	ध	ध	प
*	ना	ऽ	च	ते	ऽ	थे	ऽ	*	कृ	ष्ण	क	न्है	ऽ	या	ऽ

*	न	-	न	न	-	न	-	ध	ध	-ध	ध	ध	ध	प	म
*	तुम	ऽ	भी	ना	ऽ	चो	ऽ	घूं	घ	ऽट	को	का	ढ़	मैं	ऽ
म	म	ध	ध	ध	प	-	म	म	ध	प	-	मग	रग	ग	र
डिम	डि	ऽम	डिम	डम	रू	ऽ	ब	जा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न
स	ग	र	-	स	-	स	स	प़	ऩ	-	ऩ	स	र	र	र
चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ	(बाजाबजेगा)		*	*	*	*	*	*	*	*
र	ध	ध	प	मग	रग	ग	र	स	ग	र	-	स	-	-	-
स	ग	-	म	प	म	प	-	ध	ध	-	न	ध	न	प	-
लहं	गा	ऽ	पह	ना	ऊं	गी	ऽ	चुन	री	ऽ	ओं	ढ़ा	ऊं	गी	ऽ
ध	ध	-	ध	ध	-	प		म	म	-	प	ग	-	-	-
जो	जी	ऽ	बु	री	ऽ	मे	री	जी	जी	ऽ	बु	री	ऽ	ऽ	ऽ
स	ग	-	म	प	म	प	-	*	न	न	सं	न	ध	प	-
भू	मर	ऽ	पह	ना	ऊं	गी	ऽ	*	कं	गन	पह	ना	ऊँ	गी	ऽ
न	न	-	न	न	-	ध	न	ध	ध	-	न	ध	प	-	-
जी	जी	ऽ	बु	री	ऽ	मे	री	जी	जी	ऽ	बु	री	ऽ	ऽ	ऽ
प	ध	सं	सं	सं	-सं	सं	सं	न	न	-	सं	न	ध	ध	प
झु	नु	ऽन	झु	नु	ऽन	झु	न	झां	झन्	ऽ	पह	ना	ऊं	गी	ऽ

म	ध	-	ध	ध	प	-	म	म	ध	प	-	मग	रग	ग	र
मा	थे	ऽ	पै	बिंदि	या	ऽ	ल	गा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न
स	ग	र	-	स	-	ग	म	म	ध	-	ध	ध	प	-	म
चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ (बाजा बजेगा)			*	*	*	*	*	*	*	*
म	ध	प	-	मग	रग	ग	र	स	ग	र	-	स	-	स	स
*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	अप	ने
प़	ऩ	-	ऩ	स	र	र	र	र	ध	ध	प	मग	रग	ग	र
भै	या	ऽ	को	ना	ऽ	च	न	चा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न
स	ग	र	-	स	-	*	*	*	ग	-	म	प	-	प	ध
चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ	*	*	*	जी	ऽ	जी	तुम्	ऽ	शै	ऽ
न	न	-	ध	प	ध	प	-	*	ग	-ग	म	प	-	प	ध
ता	नी	ऽ	क	रो	ऽ	ना	ऽ	*	अ	ऽप	नी	ही	ऽ	म	न
न	न	-	ध	प	ध	प	-	*	सं	-	सं	सं	-	सं	न
मा	नी	ऽ	क	रो	ऽ	ना	ऽ	*	तुम्	ऽ	भा	आ	ऽ	ना	ऽ
ध	न	--	सं	न	-	ध	प	*	ग	-	म	प	-	ध	न
का	नी	ऽ	क	रो	ऽ	ना	ऽ	*	भै	ऽ	या	आ	ऽ	ना	ऽ
ध	-	प	-	गप	पध	न॒	-	*	न॒	-	न॒	न॒	-	न॒	न॒
का	ऽ	नी	ऽ	*	*	*	*	*	व	ऽ	र्ना	का	ऽ	न	उ

ध	ध	-	न̲	ध	-	प	म	*	न̲	-	न̲	न̲	-	न̲	न̲
में	हूं	ऽ	गी	मैं	ऽ	ते	रे	*	व	ऽ	र्ना	का	ऽ	न	उ
ध	ध	-	न̲	ध	-	प	म	म	ध	-	ध	ध	प	-प	म
में	हूं	ऽ	गी	मैं	ऽ	औ	र	ह	ल्की	ऽ	सी	च	प	ऽत्	ज
म	ध	प	-	मग	रग	ग	र	स	ग	र	-	स	-	स	स
मा	ऊं	गी	ऽ	नाऽ	ऽऽ	च	न	चा	ऊं	गी	ऽ	ऽ	ऽ	अप	ने

भैया को.....................

—o—

—राग और समय—

प्रातकाल में प्रभाति, ललित, विभास, तोड़ी,
आसावरी, बिलावल, औ, भैरवी सुनाये जात।
होत मध्यकाल पुनि सारङ्ग, सारङ्ग-गौड़,
गौड़ औ मल्हार राग गाय के गिनाये जात॥
सन्ध्याकाल में मल्हार, पीलू, मुलतानी पूर्वी,
पूरिया, धनाश्री, गौरी, श्री समेत गाये जात।
रात्रिकाल गाओ मिश्र! हम्मीर, केदार, देस,
कामोद, कल्यान, काफी, शङ्करा सुनाये जात॥
भूपाली, विहाग-राग, मालकंस, दरबारी,
जयजयवन्ती राग, और तिलङ्ग बताये जात।
कानड़ा, तिलक राग, बड़वा और बड़हंस,
आधी रात बाद राग आगे समझाये जात॥
सोहनी, बसन्त, पुनि परज, हिन्डोल-राग,
कलिङ्गड़ा, बागेश्री, बहार राग गाये जात।
एते राग काल क्रम कथिक "द्विजेन्द्र" कवि,
कविता 'संगीत' प्रेमी जन को सुनाये जात॥

—श्री सरयूप्रसाद पाण्डेय "द्विजेन्द्र"

—o—

नृत्यकला और शिक्षा केन्द्र !

(लेखक - श्री० उदयशङ्कर)

इस लेख के लेखक विश्व-विख्यात, प्रसिद्ध नर्तक श्री उदयशंकर हैं। अल्मोड़ा में आपने "उदयशङ्कर इण्डिया कल्चर सैन्टर" (नृत्यकला-शिक्षालय) स्थापित करके एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति की हैं। सङ्गीत पर आपकी विशेष कृपा रहती हैं! 'नृत्यांक' के लिये खास तौर पर आपने यह लेख भेजा हैं। आशा है कला-प्रेमी आपके सुझाव और विचारों से लाभ उठायेंगे।

कला-आत्मा की सच्ची पुकार है। कला, संसार में प्रेम और सौन्दर्य की सृष्टि करती है, और कला में एक ऐसी विलक्षण शक्ति है जो हृदय को छूकर उसे हिला देती है। किसी देश की कला उस जगह के मानव विकास और सभ्यता का चित्र होता है। भारत कला, धर्म, और दर्शन शास्त्र में सदैव महान रहा है, और ये तीनों इस देश में एक दूसरे के द्वारा उन्नति की ओर बढ़ते चले गये हैं। पिछले काल से, जब कि भारतवर्ष विदेशियों के शासन में पड़ा, तभी से उसकी निजी महान कला दिन पर दिन मुर्झाती चली गई और आज उसका बहुत अंश नष्ट प्रायः हो चुका है। उसके लिये सच्चे वातावरण और खोज करने वाले पक्के पुजारियों की आवश्यकता प्रतीत होती आरही है। कला के उस भाग को जिसमें कि आनन्द और भावाभिव्यक्ति का स्थान है, अच्छे-अच्छे प्रतिष्ठित पुरुषों ने ठुकरा दिया। जिसके फल-स्वरूप नृत्य और संगीत वेश्याओं की धरोहर बन गया, जैसा कि अच्छे घर की लड़कियां नृत्य सीखना बुरा समझने लगीं और अब भी बहुत से समझते हैं।

आज हम एक मनोरञ्जक पुकार सुन रहे हैं, परन्तु अब भी कुछ पढ़े लिखे आदमी कला की आवश्यकता महसूस नहीं करते। हम अपनी कला, रहन-सहन, विचार और सभ्यता में निराश्रय प्राणी की तरह, औरों की नकल कर रहे हैं, और वह भी उन लोगों के सद्गुण और अनुकरणीय अंश को निकालकर। इससे प्रकट होता है कि हमने अपनी कर्तव्य शीलता को छोड़ दिया है।

यह एक सबसे बड़ी कठिनता है, जो हमारे सामने है, और जिसको हमें दूर करना है। बहुत से नर्तक तो अभी तक यह नहीं जानते कि उनके नृत्य का कितना भाग भारतीय है, और कितना नकली। वे स्वयं भी इसका अनुभव या विचार नहीं करते। इसलिये पहिला काम जो कि हर एक को करना है वह यही है कि पहिले इस जड़ को मजबूत बनाया जाय। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम पहिली बातों और रिवाजों पर अन्धे होकर चलने लग जांय, बल्कि यह खोज करें कि उनमें क्या परिवर्तन किया जाय, जिससे कि और अधिक उन्नति और प्रकाश की प्राप्ति हो।

आप में से बहुत से यह स्वीकार करेंगे कि अभी बहुत कुछ कार्य करना बाकी है, और जो कुछ अब तक हो रहा है वही काफी नहीं है। हमने ऐसे कितने ही योग्य और उन्नति द्योतक नृत्यकारों को देखा है, जिन्हें सच्चे अध्ययन और योग्य शिक्षण की आवश्यकता है, जिससे वे उन्नति कर सकते हैं।

मैं इस बात में सदैव से भाग्यशाली रहा हूं कि लोगों ने मेरे काम को देखा है और उसकी प्रशंसा की है। मेरे जैसे हजारों ऐसे और हो सकते हैं, और हैं, जो बहुत अच्छा काम करके दिखा सकते हैं, अगर उनको पूरी शिक्षा और प्रोत्साहन दिया जाय। परन्तु इसके लिये हमें खुद तत्पर होना पड़ेगा, हम अपनी कला का तिरस्कार नहीं कर सकते, हमें उसको जीवित करना चाहिये, यही काम सबसे बड़ा है, जो हमें करना है।

इसका यही प्राकृतिक सीधा सा हल है कि हम सभी कला प्रिय विद्यार्थी और आचार्य, जिहोंने विद्या को साक्षात् करके देख लिया है, और जिहोंने पढ़ लिया है, वे सब एक जगह इकट्ठे हों। वे गुणीजन मिलकर समस्त भारत के कलाकारों को, जो चतुरविद्यार्थी की तरह सीखना चाहते हों, सही-सही बातें बतावें और उन्हें उन्नति का मार्ग दिखावें। लेकिन यह काम कुछ दिन के लिये उन्हें बुलाने और कान्फ्रेंस करने से नहीं होगा। आप लोगों में बहुत से जानते होंगे कि इन कान्फ्रेंसों में किन्हीं दो चार को छोड़कर अन्त में क्या रहता है?

इस तरह नहीं, बल्कि उनके लिये एक मुस्तकिल स्थान होना चाहिये, जहां बैठ कर वे कुछ सोच सकें। वे इसलिये इकट्ठे न हों कि परस्पर में अपनी-अपनी जानकारी का प्रदर्शन करें, बल्कि वे देखें कि किससे क्या सीखा जा सकता है, और वे कलाकार अपनी योग्यता किन सद्गुणों के समावेश से बढ़ा सकते हैं। उन्हें एक ऐसी जगह चुननी चाहिये जहां वे चारों ओर प्राकृतिक कला और जलवायु का आनन्द ले सकें। उस स्थान पर शान्ति और प्रेम का वातावरण होना चाहिये, अशान्ति और बेकली वहां से दूर रहनी चाहिये। भारत में ऐसे स्थानों की कमी नहीं है, जहां कि कला-प्रिय विद्यार्थी और गुरुजन इकट्ठे हो सकें।

ऐसे शिक्षणालय में सबसे पहिले विद्यार्थी को आन्तरिक शिक्षा दी जानी चाहिये। उसे खूब गहरे में उतर कर अपने को समझने की चेष्टा करनी होगी, अपने गुण और अवगुणों को पहिचानना होगा। शिक्षक उसको बतलायगा। विद्यार्थी को रास्ते पर लाने के लिये शिक्षक उसे हर समय जागृत रक्खेगा।

मालाबार के कथकलि अभिनेताओं को इतनी पक्की जानकारी है कि वे तमाम कथा और पौराणिक दृष्टान्त को भावों में बताकर दिखा सकते हैं। लेकिन उनमें भी ऐसे थोड़े ही हैं, जिन्होंने अपनी आत्मा और दिल को पूरी तरह अपने कार्य में लीन कर रक्खा है और वे अभिनय करते समय स्वयं भी वही बनजाते हैं। इस प्राकृतिकता के बिना यह असम्भव होगा कि नर्तक जनता की रुचि खींच सके या स्टेज पर सफलता से काम कर सके। यह याद रखना चाहिये कि 'टैकनीक' तो केवल सहायक मात्र है

और सफलता अपने तजुर्बे से पैदा किये गये विशेष आकर्षक भावों द्वारा मिलती है। इसी कारण से आन्तरिक अध्ययन और शिक्षा की आवश्यकता है और यही मुख्य शिक्षा उस विद्यालय की होनी चाहिये, जोकि भारत में स्थापित हो।

इस विद्यालय में जाति या सम्प्रदाय भेद को कोई स्थान नहीं होना चाहिये। इसमें केवल चतुर विद्यार्थी ही स्थान पासकें। एक बार ऐसे विद्यालय के साधारणतया चालू होजाने पर भी इसमें प्रत्येक कला के अङ्ग की तरक्की होगी। चित्रकारी, नृत्य और अभिनय सभी कलामय विभाग उन्नति कर सकेंगे। यह संस्था समस्त प्रदर्शनों का सञ्चालन करेगी और उनको, जो अहितकर हैं निकाल देगी। उन कलाकारों के द्वारा जो विद्यालय की शिक्षा से मजकर पूर्ण योग्य बनजायँगे, लाभप्रद और कलापूर्ण प्रदर्शनों का प्रबन्ध किया जायगा।

अब तक शायद आपने स्वीकार किया होगा कि हां! यह सब ठीक है। परन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि इस विद्यालय को चालू कैसे किया जाय और यहां सीखने वाले विद्यार्थी ऐसे गुरुओं के पास रहकर पढ़ाई के खर्च का क्या इन्तज़ाम करें। मेरा ख्याल है कि यह एक दूसरी विकट समस्या है, जो उन लोगों और विद्यार्थियों के सामने है जो ऐसे विद्यालय की आवश्यकता महसूस करते हैं। लेकिन इसी जगह मुझको विश्वास हो जाता है कि भारत अपनी विशाल जनसंख्या के कारण ऐसे विद्यालय का निर्माण कर सकता है। ग़रीब और चैतन्य विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा दीजानी चाहिये, ताकि वे अपनी तरक्की कर सकें।

अपने समस्त भारत के भ्रमण में मैंने यह अनुभव किया है कि हर तरफ गरीबी और तङ्गी भरी हुई है। एक बड़े भारी धनवान् के लिये भी यह असम्भव है कि वह संसार के तमाम भूखों को भोजन दे सके। किंतु उनके लिये सङ्गीत, गायन और नृत्य के जानकार कुछ ऐसे आदमी देदेना, जो उनको आनन्द हँसी और मुस्कराहट प्रदान कर सकें, सम्भव होसकता है।

जब मैं बालक था, अपने बाबा के गांव में गया। रात्रि को रोज़ाना गांव वाले भक्ति युक्त आदर भाव से इकट्ठे होते, उनमें से एक जिसको पढ़ना आता था, बीच में बैठ जाता और तैल की टिमटिमाती बत्ती की रोशनी में गाकर रामायण सुनाता था। शादी, जन्मोत्सव या दूसरे खास मौकों पर गांव के नर्तक आकर गाते और नाचते थे। उनके अजब-अजब मिले जुले बेढंगे भाव प्रदर्शन मुझे अभी तक याद हैं।

यह तो मेरी पिछली मृदु स्मृतियां हैं, परन्तु अभी हाल में जबकि मैं गाँव गया था तो देखा कि पूरे मजमे के साथ नृत्य होरहा था, गाने भी पुराने थियेटरों की तर्ज के थे और बेचारा बेसुरा हारमोनियम उनके साथ-साथ चीख़ रहा था।

समस्त भारत में ही यह होरहा है कि हरएक आदमी नवीनता और विलक्षणता पसन्द करता है। मैंने यह समझने की धृष्टता की थी, जबकि प्रारम्भ में जनता मेरे प्रदर्शन में तालियां बजाती थीं। लेकिन भारत में अभी बहुत कुछ सीखने के लिये बाकी है। यहां अब भी ऐसे बहुत से महान् पुरुष मौजूद हैं जिन्हें साथ लेकर हम दुनियां

का बहुत कुछ भला कर सकते हैं। एक समय ऐसा आयगा जब हम आश्चर्य करेंगे कि हमने कितनी बड़ी भूल की थी।

मुझे यह महान् आशा है और मुझे प्रत्येक जगह ऐसे आदमी मिले हैं जो कला की उन्नति में बहुत सहायता करते हैं और करेंगे। हमारे लिये वह दिन महान् होगा जब भारत संसार को अपनी सर्वोच्च कला का दर्शन करा सकेगा। हम संसार में कला के निर्मल प्रपातों को पुनः प्रवाहित कर सकेंगे। मुझे विश्वास है कि जो कुछ हम कर सके हैं, उससे ज़्यादा देखने के आप इच्छुक हैं।

दादरा में १ गीत नृत्य के साथ

(शब्दकार—श्री० तानसेन जी, स्वरकार श्री० मदनलाल जी वायोलिन मास्टर)

रागिनी-भैरवी, ताल दादरा, मात्रा ६

इसकी सम्पूर्ण जाति है इसकी स्वरमाला में रे ग ध नी कोमल और बाकी स्वर शुद्ध हैं। ध वादी और ग संवादी है।

इसको पूर्व दिन के १० बजे तक गाते हैं।

आरोह—स रे ग म प ध नी सं अवरोह—सं नी ध प म ग रे स

स्थायी—बेर-बेर बांसुरी की टेर तो सुनाये कान्ह।
मोहिं को रिझाये कान्ह ॥ बेर बेर० ॥

अन्तरा—(१) कित्ते मैंने राग गाये, कित्ते मैंने भेद पाये।
ललित, टोड़ि, मालकोश, भैरवी, विभास गाये ॥ बेर बेर० ॥

अन्तरा—(२) कहत मियां तानसेन, सुनो हो गोपाललाल।
बैजू के गाये से छन्द अंछरे मन भाये भाये ॥ बेर बेर० ॥

स्थायी

+			o			+			o		
धा	धीं	ना	ता	तीं	ना	धा	धीं	ना	ता	तीं	ना
प	–	प	प	–	प	प	ध	प	(म)ग	–	म
बे	ऽ	र	बे	ऽ	र	बां	ऽ	सु	री	ऽ	की
प	ध	प	(म)ग	–	म	ग	–	र	स	–	स
टे	ऽ	र	तो	ऽ	सु	ना	ऽ	ये	का	ऽ	न्ह
म	–	प	ग	–	म	ग	–	र	स	–	स
मो	ऽ	हि	को	ऽ	रि	झा	ऽ	ये	का	ऽ	न्ह

अन्तरा (१)

ध	–	म	ध	–	न	सं	–	सं	सं	–	सं
कि	ऽ	त्ते	मैं	ऽ	ने	रा	ऽ	ग	गा	ऽ	ये
न	–	न		–	गं	रं	सं	न	ध	प	प
कि	ऽ	ते	मैं	ऽ	ने	भे	ऽ	द	पा	ऽ	ये
स	प	प	प	–	प	प	ध	प	(म)ग	–	म
ल	लि	त	टो	ऽ	ड़ि	मा	ऽ	ल	को	ऽ	श
प	ध	प	(म)ग	–	म	(म)ग	–	र	स	–	स
भै	ऽ	र	वी	ऽ	वि	भा	ऽ	स	गा	ऽ	ये

अन्तरा (२)

ध	म	म	ध	–	न	सं	–	सं	सं	–	सं
क	ह	त		ऽ	यां	ता	ऽ	न	से	ऽ	न
न	न	–	सं	–	गं	रं	सं	न	ध	प	प
सु	नो	ऽ	हो	ऽ	गो	पा	ऽ	ल	ला	ऽ	ल
प	–	प	प	–	प	प	ध	प	(म)ग	–	म
वै	ऽ	जू	के	ऽ	गा	ये	ऽ	से	छं	ऽ	द
प	ध	प	(म)ग	(म)ग	म	(म)ग	–	र	स	–	स
अं	ऽ	छ	रे	म	न	भा	ऽ	ये	भा	ऽ	ये

गोपी-नृत्य की एक झलक !

वह देखिये ! यमुना तट पर कन्हैया सखियों से छेड़ छाड़ करके उन्हें चिढ़ाने में ही आनन्द लेरहा है। सखी कह रही हैं "कान्हा ! मानजाओ !! नहीं मानोगे ? लीजिये वह तुनक कर चली यशोदा मैया के पास शिकायत करने। इसी भाव को लेकर (शिकायत की मुद्रा बनाकर कुछ बनावटी क्रोध के साथ भौं में बल डालकर यह गीत नृत्य के साथ गाया और बताया जायगा)

बागेश्वरी ———— ताल दादरा

(शब्दकार और स्वरकार पं० शिवशङ्कर रावल बी० ए०)

स्थायी—सांवरो बन्शी वालो. कान्ह, मानत नहीं मोरी।
मानत नहीं मोरी कान्ह, करत बरजोरी ॥
अन्तरा—जमुना के तीर कान्ह, ठाड़ो चलावे नैना बान।
निठुर कान्ह मोरी मान, करत क्यों ठिठोरी ॥ १ ॥
परी यशोदा माई, तेरो कान्ह मानत नाहीं।
ये कन्हाई बड़ो ढिठाई, करत है झकझोरी ॥ २ ॥

—**—

+			०			+			०		
१	२	३	४	५	६	१	२	३	४	५	६
स	ग॒	र	न॒	ध	न॒	स	ग	ग	म	ध	ध
सां	व	रो	ब	ऽ	न्शी	वा	ऽ	लो	का	ऽ	न्ह
न॒	न॒	ध	म	म	प	र	ग॒	र	स	–	–
मा	ऽ	न	त	न	हीं	मो	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
न	–	न	सं	सं	रं	धन॒	संन॒	ध	न॒ध	पध	ध
मा	ऽ	न	त	न	हीं	मोऽ	ऽऽ	री	काऽ	काऽऽ	न्ह

ध	न	न	ध	म	प	र	ग	र	ऩ	स	-
क	र	त	ब	ऽ	र	जो	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ

—अन्तरा—

म	म	ग	म	ध	न	धन	सं	न	सं	-	सं
ज	मु	ना	ऽ	के	ऽ	तीऽ	ऽ	र	का	ऽ	न्ह
ध	ध	न	धन	संरं	सं	ध	न	ध	ध	-	ध
ठा	ड़ो	च	लाऽ	ऽऽ	वे	नै	ऽ	ना	बा	ऽ	न
न	न	न	सं	-	रं	धन	संन	ध	नध	प	ध
नि	ठु	र	का	ऽ	न्ह	मोऽ	ऽऽ	रो	माऽ	ऽ	न
न	न	न	ध	म	प	र	ग	र	ऩ	स	-
क	र	त	क्यों	ऽ	ठि	ठो	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ

रागिनी विवरण—बागेश्वरी काफ़ी ठाठ की एक सरस रागिनी है। इसका वर्ग औढ़व-सम्पूर्ण है, आरोह-अवरोह स्वरूप यह है—

स ग म ध न सं । सं न ध प म ग र स

अवरोही में "प" का अल्प प्रयोग होता है। खूबसूरती के लिये कहीं-कहीं शुद्ध गंधार तथा शुद्ध निषाद प्रयुक्त कर लिये जाते हैं। गाने का समय रात्रि का द्वितीय प्रहर है।

पाश्चात्य नृत्यकला

(लेखक—श्री० परमेश्वरीलाल गुप्त)

नृत्य और सङ्गीत विश्व की आदिम कलायें हैं। इनमें से किसका विकास पहले हुआ, यह हमारे लिखित इतिहास से परे है। केवल इतना ही कहा जा सकता है कि दोनों कलाओं का विकास मानव-विकास की उन्नति के साथ-साथ हुआ होगा। जब मनुष्य में अपनी भावनायें व्यक्त करने की चेतना आई, उसने अपने आन्तरिक भावों को अपनी शारीरिक चेष्टाओं द्वारा उसी प्रकार व्यक्त करना आरम्भ किया, जिस प्रकार एक गूंगा अपने भाव व्यक्त किया करता है। उसने अपने इन्हीं आङ्गिक संकेतों द्वारा अपना आह्लाद, अपना शोक और अपनी इच्छायें व्यक्त कीं। इसी प्रकार उसके विचारों एवं अनुभूतियों ने सामूहिक रूप धारण किया और फिर उसकी धार्मिक एवं सामाजिक भावनाओं को व्यक्त करने के लिये किन्हीं चेष्टाओं का आविर्भाव हुआ। उसमें मनुष्य ने किसी चेष्टा द्वारा प्रार्थना व्यक्त की, किसी के द्वारा कृतज्ञता ज्ञापन किया, इस तरह मनुष्य की आदिम चेष्टाओं ने नृत्य का रूप धारण किया और अनेकानेक उत्सव नृत्यों का विकास हुआ, जिसका अविकल रूप आज भी जङ्गली जातियों के नृत्य में बहुत-कुछ सुरक्षित है।

इन्हीं नृत्यों से ग्रामीण नृत्य और उनसे परिष्कृत आज के नागरिक नृत्य हैं।

आज के नृत्य मनुष्य के हर्ष और शोक से उद्वेलित भावों के प्रकाशन समझे जाते हैं। मनुष्य, नृत्यों में उन वस्तुओं और घटनाओं को व्यक्त करने की चेष्टा करता है जिसे वह किसी प्रकार व्यक्त करने में असमर्थ पाता है, जिसे व्यक्त करनेकी उसकी जिह्वा में शक्ति नहीं होती। कहने का तात्पर्य यह है कि वह अपनी रहस्यमयी एवं प्रकृतोपरि अनुभूतियों को नृत्य द्वारा प्रगट करता है। अपने अङ्ग परिचालन द्वारा अपने आह्लाद को दूसरों तक पहुंचाने की चेष्टा करता है। योरोप और अमेरिका की नृत्यकला जिसे हम पाश्चात्य कला के नाम से पुकारते हैं, इसी भावना से ओत प्रोत होकर विकसित हुई है। इसके विपरीत प्राच्य नृत्य कला अथवा अपनी भारतीय नृत्यकला में नर्तक केवल अपनी अनुभूतियों को व्यक्त न कर दर्शक में भी अनुभूति और रस उत्पन्न करता है। इसी मुख्य भेद के कारण भारतीय नेत्रों को पाश्चात्य नृत्य नीरस एवं उछल-कूद मात्र से लगते हैं। अस्तु—

आधुनिक पाश्चात्य नृत्यकला, भारतीय नृत्यकला की भांति हजारों वर्ष पुरानी न होकर केवल ४०० वर्ष की है। उससे पूर्व उसका अस्तित्व केवल ग्रामीण नृत्य के रूप में ही वर्तमान था। १५ वीं शताब्दी में इसका आरम्भ इटली में हुआ किन्तु उसे कला का रूप फ्रांस में मिला। फ्रांस को आधुनिक पाश्चात्य नृत्य की जननी कहा जाता है, किन्तु सच पूछा जाय तो उसकी मौलिक एवं निजी देन के रूप में इने-गिने ही नृत्य हैं। अन्य देशों के राष्ट्रीय एवं ग्रामीण नृत्यों को फ्रांस लाकर, क्रमिक अध्ययन किया गया, फिर उन्हें कला के रूप में साज सवांर कर एक नवीन रूप दिया गया और

वे स्वदेश ऐसा रूप लेकर लौटे कि लोग उसके मूल रूप को खो बैठे। अधिकांश रूप में इङ्गलैंड और बोहोमिया के ग्रामीण-नृत्य फ्रांस से उसी प्रकार वापिस आये, जिस प्रकार भारत की रुई मेंचेस्टर से कपड़ा बन कर आती है। इस कथन की सत्यता नाट्य कला के पारिभाषिक (टेकनिकल) शब्दों को देखकर ही प्रगट हो जाती है, ये सारे के सारे फ्रेंच हैं। योरोप में स्पेन ही एक ऐसा देश है, जहां नृत्य आज भी अपने मूल रूप में बहुत कुछ वर्तमान है। अस्तु—

आधुनिक पाश्चात्य के दो रूप हैं। (१) बाल रूम डांसेज़ और (२) बैलेट। इन दोनों प्रकार के नृत्यों के अनेक रूप हैं, जो वहां की रुचि के अनुकूल व्यक्त किये जाते हैं। उनका उल्लेख इस लेख में करना इसलिये व्यर्थ होगा कि प्रायः सभी पाठक उनके टेकनीक से अनभिज्ञ हैं। अस्तु हम उन दोनों प्रकार के नृत्यों का मोटे रूप में परिचय देना पर्याप्त समझते हैं।

१—बाल रूम डान्सेज़

बाल रूम डांसेज की तुलना हम भारतीय नृत्त से कर सकते हैं, किन्तु वह इतना सूक्ष्म साम्य है कि उसे एक कहना साधारण बुद्धि के लिये कठिन है, और भारतीय संस्कृति में तो उसके लिये स्थान ही नहीं है। इसमें नृत्य के रूपों के अनुसार एक, दो वा अनेक जोड़े नृत्य-प्रांगण में उतरते हैं। जोड़े से तात्पर्य एक स्त्री और एक पुरुष से है।

नृत्य प्रांगण अत्यधिक चिकना फर्श होता है, जिस पर जूते आसानी से फिसल जांय। जूतों में उसी ढङ्ग का फिसलने वाला कड़ा तल्ला रहता है। प्रत्येक जोड़ा प्रांगण में एक दूसरे के आमने सामने आलिङ्गन सदृश मुद्रा में अवतरित होता है। स्त्री का बांया हाथ पुरुष के दाहिने कन्धे पर टिका रहता है और पुरुष का दाहिना हाथ स्त्री की कटि पर सधा हुआ। पुरुष का बांया और स्त्री का दाहिना हाथ आगे को खिला, किन्तु सीधा न होकर कुछ झुके हुए वर्गाकार बनाते हैं। इस नृत्य में शरीर का निम्नांश ही परिचालित होता है अर्थात् पैर द्वारा ही भाव व्यक्त किये जाते हैं। इसमें कोई वस्तु (थीम) नहीं होता। इसमें नर्तक में स्वयं रस का सञ्चार होता है, दर्शक पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसे हम भारत की कतिपय जङ्गली जातियों में प्रचलित प्रेम-नृत्य (कोर्टशिप डान्स) का परिष्कृत रूप कहें तो कोई अनुचित न होगा। इस नृत्य में ताल का कार्य जूतों के तल्ले से प्रगट होने वाली ध्वनि करती है। इस नृत्य में फाक्स-ट्राट, वन-ट्राट और वाल्ज़ नामक रूप विशेष प्रसिद्ध हैं।

२—बैलेट

'बैलेट' हमारे भारतीय नृत्य का ठीक अनुरूप है। इसमें एक कथा वास्तु (थीम) होता है। उस कथा वास्तु के भाव को सारे अङ्ग परिचलित करके व्यक्त किया जाता है। भारतीय नृत्य में नयन, ग्रीवा, हस्त और मुख मुद्रा द्वारा विशेष भाव व्यक्त किये जाते हैं, किन्तु बैलेट में नयन, मुख मुद्रा और ग्रीवा का विशेष महत्व न होकर अङ्ग प्रत्यङ्ग का महत्व है। सारे शरीर की लचक विशेष स्थान रखती है।

पाश्चात्य नृत्य में बैलेट का प्रवेश गत शताब्दी के नवम दशक में विशेष रूप में हुआ और महायुद्ध से पूर्व उसका विकास हुआ। इसका विकास मुख्य रूप से रूस, तत्पश्चात् फ्रांस में हुआ। इस शताब्दी में उसने अमेरिका में विशेष उन्नति की और 'रूथ सेन्ट डेनिस' नामक नर्तकी ने अपने बैलेट के कथा वास्तु में एक नवीन परिवर्तन करके पाश्चात्य बैलेट की रूप रेखा को बदल दिया। उसने अपने भावों को पूर्वी, मिश्री और भारतीय नृत्यकला के रूप में प्रगट करके व्यक्त किया। उसके इस परिवर्तन का आज के बैलेट पर पूर्ण प्रभाव पड़ा। इसी बीच भारत के अनेक नर्तकों ने भारतीय नृत्य का प्रदर्शन कर उसकी छाप उस पर डाल दी। इस प्रकार धीरे-धीरे बैलेट का रूप भारतीय नृत्य की ओर झुकता जारहा है। अब ईश्वर की भावना, सृष्टि और प्रलय, जीवन की निस्सारता आदि बैलेट द्वारा प्रगट किये जारहे हैं। बहुत सम्भव है कि इस क्षेत्र में पूर्व और पश्चिम मिलकर एक हो जावें।

——

झपताले का नाच

लेखकः—श्री० नरेन्द्रसहाय जी वर्मा बी० ऐ० (फ़ाइनल) इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के सुयोग्य विद्यार्थी हैं, आपने अखिल भारतवर्षीय सङ्गीत सम्मेलन के दसवें अधिवेशन में सङ्गीत कला में अच्छी ख्याति प्राप्त की है, आपने बहुत से गोल्ड मैडिल्स और (Cups) प्राप्त किये हैं। बाबू देवीप्रशाद जी वर्मा रिटायर्ड डि० कलेक्टर के आप सब से छोटे होनहार पुत्र हैं।

नोट—पहिले सरगम दिये हैं जो कि लहरे के स्वर हैं, उससे नीचे नाच के बोल हैं फिर १—२ अङ्क दिये हैं १ दांया पैर २ बांया पैर समझना। सबके नीचे तबले के बोल हैं।

(१) स्थाई

+		३			०		१		
सं	–	ध	–	न	ध	म	ग	म	स
ता	थेई	ता	थेई	तत	आ	थेई	ता	थेई	तत
१	२	१	२	१	१	२	१	२	१
धिन	ना	धिन	धिन	ना	तिन	ना	धिन	धिन	ना

(२) अन्तरा

म	–	ग	–	स	ऩ	स	ध़	–	ऩ
ता	थेई	ता	थेई	तत	आ	थेई	ता	थेई	तत
१	२	१	२	१	१	२	१	२	१
धिन	ना	धिन	धिन	ना	तिन	ना	धिन	धिन	ना

स	–	म	–	म	गमध-·	नसं--	ध	–	म
ता	थेई	ता	थेई	तत	एकदोतिन	एकदो	थेई	थेई	तत
१	२	१	२	१	१	२	१	२	१
धिन	ना	धिन	धिन	ना	तेटेकततिन	तेटे	धिन	धिन	ना

(३) तोड़ा आमद

सं	-	ध	-	न	धम	गम	मग	मस	गम
ता	थेई	ता	थेई	तत	ताथेई	ताथेई	ततआ	थेईता	थेईतत
१	२	१	२	१	१,२	१,२	१,१	२,१	२,१
धिन	ना	धिन	धिन	ना	किट	तक	तेटे	तेटे	कत

(४) टुकड़ा तिहाई दार

सं	-	ध	-	सम	-म	मग	-ग	गम	-म
ता	थेई	थेई	तत	टेता	-ता	टेता	-ता	टेता	-ता
१	२	१	२	१,२	-१	१,२	-१	१,२	-१
धिन	ना	धिन	धिन	किटतक	-ता	किटतक	-तिर	तातिर	-किट

मध	-ध	धन	-न	सं	धन	-न	सं	धन	-न
टेता	-ता	टेता	-ता	धा	टेता	-ता	धा	टेता	-ता
१,२	-१	१,२	-१	१	१,२	-१	१	१,२	-१
तिटकिट	-तक	तिटकिट	-तक	धा	तिरकिट	-तक	धा	तिरकिट	-तक

(५) टुकड़ा दुन स्थाई का

सं	ध	नध	मग	मस	सं	ध	नध	मग	मस
ताथेई	ताथेई	ततआ	थेईता	थेईतत	ताथेई	ताथेई	ततआ	थेइता	थेईतत
१,२	१,२	१,१	२,१	२,१	१,२	१,२	१,१	२,१	२,१
धिनता	धिनधिन	नातिन	नाधिन	धिनना	धिनना	धिनधिन	नातिन	नाधिन	धिनना

(६) टुकड़ा दून, अन्तरे का

सं	-	ध	-	न	सं	ध	नध	मग	मस
ता	थेई	ता	थेई	तत	ताथेई	ताथेई	तत-	थेईता	थेईतत
१	२	१	२	१	१।२	१,२	१,१	२,१	२,१
धिन	ना	धिन	धिन	ना	धिनना	धिनधिन	नातिन	नाधिन	धिनना

म	ग	सन्	सध्	-न्	स	म	मगमध	नसं-ध	-म
ताथेई	ताथेई	ततआ	थेईता	-तत	ता	धा	ततआ	थेई-ता	तत
१,२	१,२	१,१	२,१	-१	१	१	१,१	२,१	२,१
तिन	धिन	किटतक	तिरकिट	-ता	तिन	धिन	किटतक	-ता	-ता

(७) टुकड़ा साथ तिहाईदार

सं-	ध-	नध	मग	मस	धम	गम	सध	मग	मस
ताथेई	ताथेई	ततआ	थेईता	थेईतत	आथेई	ताथेई	ततआ	थेईता	थेईतत
१,२	१,२	१,१	२,१	२,१	१,२	१,२	१,१	२,१	२,१
धिनना	धिनधिन	नातिन	नाधिन	धिनना	तिनना	धिनधिन	तातिन	नाधिन	धिनना

(८) टुकड़ा नाच के टेता का

सं-	ध-	नध	मध	-न	धम	ध-	नध	मग	मस
टेता	ता-	नति	टेता	-ना	तिटे	ता-	नाति	टेता	-ता
२,१	२-	१,२	१,२	-१	२,१	२-	१,२	१,२	-१
किटतक	नाती	टेधिन	नाती	तीटे	धिनना	नाती	टेधिन	नाटे	धिनना

(९) टुकड़ा नाच थकारांत ताथेई का

सं –	सं– ध– नध	मग मस	गम सध मस
ता थेई	ताथेई ताथेई ततश्रा	थेईता थेईतत	ताथेई ततता थेईतत
१ २	१,२ १,२ १,१	२,१ २,१	१,२ १,१ २,१
धिन ना	कत्ततेटे धिनधिन नाकत्त	तेटेतिन कत्तता	तिनकत्त तातिन कत्तता

(१०) टुकड़ा थेईतत का

मम गस	मग सन गस	गम धन	संध नसं धन
ताथेई ताथेई	ततश्रा थेइता थेइतत	ताथेई ताथेई	ततश्रा थेइता थेइतत
१,२ १,२	१,१ २,१ २,१	१,२ १,२	१,१ २,१ २,१
धागेधिन धिनधागे	धिनधागेकिनकिनतागेतिन	कत्ततिन धिनधागे	धागेधिन धिनधागे धिनकत्त

(११) टुकड़ा ताथेई किटतक का

मंगं संमं	गंसं नसं धन	संन धम	गम गम गस
ताथेई ततथेई	थेईथेई थेईथेई ततथेई	ताथेई ततथेई	थेईथेई थेईथेई ततथेई
१,२ १,२	१,१ २,१ २,१	१,२ १,२	१,१ २,१ २,१
धातिर किटतक	तिरकिट तकतिर किटतक	तुना किटतक	तिरकिट तकतिर किटतक

नस धन	सग मध	नध –न	म गस गस
ताथेई ततथेई	थेइथेइ थेइथेइ ततथेई	नातीटेता –ता	धा तकतिर किटतक
१,२ १,२	१,१ २,२ १,२	१,२१,१ –२	१ १,२,१,१ २,१,१,२
धिरधिर किटतक	तिरकिट तकतिर किटतक	तटेकत्त –ता	धा तकतिर किटतक

(१२) तोड़ा नाच ताथेईतत का तिहाईदार

धन	संगं	मं	गंसं	-नी	धन	सं	नध	-म	गस
ता-	थेई	तत्त	टेता	-त	थेई	तत्त	टेता	-त	कत
१,२	१,२	१	१,२	-१	१,२	१	१,२	-१	१,२
सं	सं	नध	-म	गस	सं	सं	नध	-म	गस
धा	तत्त	टेता	-त	कत	धा	तत्त	टेता	-त	कत
१	१	१,२	-१	१,२	१	१	१,२	-१	१,२

(१३) तोड़ा नाच, दूसरा

सग	मग	सन्	धन्	सम	मसं	नध	नध	मग	-स
ताऽ	थेई	थेई	थेई	तत	थेई	तत	नाती	टेता	-त
१,२	२,१	२,१	२,१	१,२	२,१	२,१	१,२	१,२	-१
किट	तक	तिर	किट	तक	तिर	किट	तक	गदि	गन
सं	नध	नध	मग	-स	सं	नध	नध	मग	-स
धा	तत	नाती	टेता	-त	धा	तत	नाती	टेता	-त
१	२,१	१,२	१,२	-१	१	२,१	१,२	१,२	-१
धा	किट	तक	गदि	गिन	धा	किट	तक	गदि	गिन

(१४) तोड़ा नाच दूसरे प्रकार का

सम	गध	मन	धम	गस	धन	धसं	गम	गस	नस
ताऽ	थेई	थेई	थेई	तत	ता	थेई	थेई	थेई	तत
१,२	१,२	१,२	२,१	१,२	१,२	१,२	१,२	२,१	१,२
किट	तक	तिर	किट	तक	तिर	किट	तक	तिर	किट
सं	धसं	गम	गस	नस	सं	धसं	गम	गस	नस
ता-	थेई	थेई	थेई	तत	ता	थेई	थेई	थेई	तत
१	१,२	१,२	२,१	१,२	१	१,२	१,२	२,१	१,२
धा	किट	तक	तिर	किट	धा	किट	तक	तिर	किट

१५—तोड़ा नाच दूसरा

ग	म	मध	-सं	-सं	संमं	गं	संन	संध	-न
ता	धा	टेता	-ता	-त	तेटे	धा	तेटे	टेता	-त
१	२	१,२	-१	-१	१,२	१	१,२	१,२	-१
तिन	धिन	गदि	-ना	-न	तेटे	धा	तेटे	गदि	-न
धम	मग	मस	-स	-सं	मस	-स	सं	मस	-स
तेटे	कत	टेता	-त	धा	टेता	-त	धा	टेता	-त
१,२	१,२	१,२	-१	१	१,२	-१	१	१,२	-१
तेटे	कत	गदि	-न	धा	गदि	-न	धा	गदि	-न
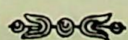
रुक्मिणी अरुण्डेल की नृत्यकला !

(लेखक—पं० निरंजन शर्मा "अजित")
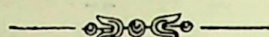
कुछ दिन से नृत्यकला की ओर कई प्रमुख गृहस्थ स्त्री-पुरुषों का ध्यान गया है। उन्होंने इसका उद्धार करके, इसकी मानमर्यादा को, तलातल से फिर धरातल ला धरा है। इनमें जिन गणनीय स्त्री-पुरुषों के नाम लिये जा सकते हैं, उनमें श्रीमती रुक्मिणीदेवी का नाम अपना विशेष स्थान रखता है। इन दिनों आप बम्बई आयी हैं और आपने युद्ध की सहायता तथा कला के उद्धार के लिये अपनी कला के जौहर दिखाये हैं। इसलिये इस अवसर पर उनका परिचय मनोरञ्जन रहित न होगा !

रुक्मिणीदेवी, का जन्म चित्रसनुलर में श्री० नीलकण्ठ शास्त्री के घर हुआ था। श्री नीलकण्ठ शास्त्री संस्कृत के पण्डित थे, पर आधुनिक ज्ञानार्चन पूर्वकः सरकारी नौकरी में आगये थे। वे एञ्जिनियर थे। श्रीमती रुक्मिणी के प्रपिता और भी अधिक विद्वान पण्डित थे।

रुक्मिणीदेवी की माता श्रीमती शेषाम्मल त्रिवपूर के एक विद्या व्यसन परायण परिवार की पुत्री थीं ! मद्रास में इस ग्राम का नाम विद्याग्राम और विद्वन ग्राम होने के लिये प्रख्यात है। इस प्रकार से रुक्मिणीदेवी साहित्यकला और संस्कृति के पालने में ही लालित-पालित हुई थी।

श्री नीलकण्ठ शास्त्री थियोसोफी मत की ओर झुकते चले गये। इसीलिये उनकी होनहार सुपुत्री रुक्मिणीदेवी भी। थियोसोफिकल सोसायटी के बड़े बड़े नेताओं के सम्पर्क में, बचपन से ही आगयी। लेडबीटर का प्रभाव बचपन से ही रुक्मिणी पर पड़ने लगा। लेडबीटर को अबतक आप अपना गुरु मानती हैं। उन्हींके सिद्धान्तों, और विश्वासों को रुक्मिणी ने अपने जीवन का आधार बना लिया।

भारतवर्ष में अडियार थियोसोफिस्तों का प्रधान पीठ स्थान है, श्री नीलकण्ठ शास्त्री अन्तिम दिनों में इसी स्थान पर घर बनाकर रहने लगे थे। अडियार में ही पहली बार मि० अरुण्डेल से रुक्मिणी का मिलना हुआ। बाद में यूरोपीय रहन-सहन की नकल ने इन दोनों को अधिक निकट लादिया। हुआ यह कि इन दिनों मिसेज़ बेसेण्ट भारतीय और यूरोपीयों के बीच विवाह बन्धन जारी कराने के प्रयत्नों में लगी हुई थीं। फलतः रुक्मिणी देवी सन् १९२० ई० में अरुण्डेल की अर्धाङ्गिनी बन गयीं।

सन् १९२४ ई० में श्रीमती रुक्मिणीदेवी अरुण्डेल यूरोप की यात्रा के लिये चली गयीं थीं। सन् १९२५ ई० में उन्हें अखिल विश्व युवक युवती थियोसोफिस्ट संघ के अध्यक्ष स्थान पर विराजमान होने का गौरव मिल गया। १९२६ ई० में वह आस्ट्रेलिया की यात्रा करने को चली गयीं। आस्ट्रेलिया में ही उन्हें सर्वप्रथम अना पवलोवा नामक सुप्रसिद्ध नृत्यनिष्णात यूरोपियन महिला से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आधुनिक काल में अनापवलोवा से बढ़कर इस समय विश्व भर में कोई दूसरी महिला यूरोपियन नृत्य के लिये प्रसिद्ध नहीं है। श्रीमती रुक्मिणी अरुण्डेल और अनापवलोवा की

पहली भेट ने ही, इन दोनों में मित्रता भी स्थापित करदी और रुकमणी के मन में एक सफल नर्तकी बनने की भावना भी जगा दी।

इस तरह रुक्मिणीदेवी के जीवन की धारा फिर घूम गयी। उन्हें खयाल हुआ कि हमें आधुनिक प्रवृतियों का ध्यान रखते हुए भारतीय नृत्य में नया जीवन डालना चाहिये। सन् १९२५ से लेकर १९३५ तक रुक्मिणी अरुण्डेल का सारा समय यूरोप, अमेरिका और आस्ट्रेलिया में ही व्यतीत हुआ, जहां जाते थे वहीं दोनों भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्म और भारतीय आदर्शों पर भाषण देते चले जाते हैं। इस तरह दोनों ने भारतीयता को प्रकाश में लाने वाले भाषणों की धूम सी मचा दी थी। इन्हीं महत्व मण्डित दिनों में रुक्मिणी ने अध्ययन और शिक्षा ग्रहण का क्रम भी निरन्तर जारी रखा है। विशेषज्ञों से उन्हें सीधी शिक्षा मिलती रही थी। धीरे २ उन्होंने नृत्य कलामें निपुणता प्राप्त करली थी। इस अभ्यास में भारत आनेपर और भी चार चांद लग गये।

सन् १९३५ ३६ ई० की बात है। वे लौटकर भारत आयी ही थीं। संयोगवश उन्हें मद्रास में भारत नाट्य-मण्डल का जलसा देखने को मिला। इस जलसे में पण्ड-नल्लूर के श्रीमीनाक्षी सुन्दरम की कलाने आपको हठात अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। देखते ही इन्होंने निश्चय करलिया कि हमें इनका शिष्यत्व स्वीकार करके भारतीय नृत्यकला सीखकर ही रहना है। ऐसा ही श्रीमती रुक्मिणी ने किया भी। मद्रास के सुप्रसिद्धतम सङ्गीत शास्त्र-सिद्ध ब्रह्मश्री पापनाशम शिवन को अपने साथ लेकर सङ्गीत और नृत्यकला को खूब चमकाया। इससे दोनों का नाम सर्वजन-विश्रुत और लोकप्रिय होगया।

जब अडियार में, सन् १९३६ ई० में थियोसोफिकल सोसायटी का जुबिली समारोह हुआ और इण्टर्नेशनल एकेडैमी आफ आर्ट् स की स्थापना हुई तो, इसी गुण-ग्रहण शीलता के प्रभाव स्वरूप श्रीमती रुक्मिणीदेवी को इसका अध्यक्षपद मिला बाद में इस एकेडैमी का नाम कलाक्षेत्रम् रख लिया गया है।

इस कला क्षेत्रम की स्थापना का श्रेय भी श्रीमती रुक्मिणीदेवी को ही है।

पहला सार्वजनिक नृत्योत्सव।

महत्व की दृष्टि से, यों कहना चाहिये कि श्रीमती रुक्मिणीदेवी सर्व प्रथम १९३६ ई० के मार्च मास में सार्वजनिक जलसे में नृत्य करती हुई आयीं थीं, उसी दिन से सार्वजनिक नृत्यों का क्रम शुरू हुआ है। सन् १९३९ ई० में पहली बार आपने विशदरूप में नृत्यों का कार्यक्रम लेकर दक्षिण भारत का भ्रमण किया। उसमें उन्हें भारी सफलता मिली।

नटराज के चरणों में।

सार्वजनिक रूप में नृत्यों का-क्रम स्वीकार करने के लिये श्रीमती रुक्मिणीदेवी ने पहले काफी तैयारी कर ली थी। उन्होंने चिदम्बरम में नटराज के मन्दिर में पहले श्रद्धापुष्पांजलि अर्पणात्मक नृत्य किया था जो उनकी धार्मिकताका प्रमाण देता है।

जनता नृत्य देखने को उमड़ पड़ी थी। यहांतक जनसमुदाय का प्रवाह था कि उसका प्रबन्ध भी मुश्किल था। लोग श्री नटराज के मन्दिर में बलपूर्वक प्रविष्ट होगये। इतना अधिक नृत्यदर्शनोत्साह था।

रुक्मिणी ने अपना आदर्श प्राचीन शास्त्रीय नृत्य ही रखा है, यद्यपि कुछ न कुछ नवीनता उसमें भी पैदा हो रही है।

अपने नृत्य के क्रम वह स्वयम् ही बनाती हैं। मीनाक्षी सुन्दरम पिल्ले गुरु रूपमें उनकी सहायता करते रहते हैं। आपने कलाक्षेत्रम् में अपनी जो शिष्याएँ तैयार की हैं उनमें श्रीमती राधा सर्वोपरि मानी जाती हैं।

रुक्मिणीदेवी के नृत्यों के आधारभूत गीत अधिकांशतः शृङ्गार और भक्तिरस परिपूर्ण होते हैं। भाव प्रवणता की क्षमता उनमें असाधारण है।

रुक्मिणी की कला।

यह शास्त्रीय नृत्य के लिये पर्याप्त ख्याति पा चुकी है। पर उनकी कलाकी विशेषता यह है कि वह अपने इस सुप्रभावपूर्ण नृत्य के द्वारा एक विशिष्ट सन्देश देती है। यह चीज उनकी मौलिक विद्या-बुद्धि की परिचायक हैं। वह अपनी कला की विशिष्टताओं को अध्यात्मिकता के आधारपर ले जाती हैं। इसका अर्थ यह है कि भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार नृत्य का भी मुख्य ध्येय ईश्वर का सान्निध्य ही उन्होंने माना है। नृत्यकला भी एक है, और मनोरंजन का मुख्य साधन है। पर वह उनकी दृष्टि में ईश्वराराधन का भी साधन है। उसी की प्रसन्नता प्राप्ति के गीत गाते हुए वास्तविक नृत्य होता है।

नृत्य की विशिष्टता।

वह परिष्कृत कलात्मिक भावना, और अत्यन्त लोचभरी गति की स्वामिनी हैं। क्षणक्षण में, मनोभावों की छाया मुखाकृतिपर दर्शाने की क्षमता रुक्मिणी में अनोखी है। नृत्य के समय सरल ठुमकों की गति भी बहुत ही मोहक रहती है। गोपालकृष्ण गुणकीर्तन, अरुणाचलकीर्तन, घनश्याम की कृति, आदि आदि भावों के अनुसार सङ्गीत सहित आपके नृत्य बड़े लोकप्रिय होगये हैं।

वह नृत्य में बातें करती हैं और आंखों ही आंखों में पूरा गीत गाजाती हैं। यही कारण है कि उनके नृत्य को जितना कलामर्मज्ञ मानते हैं, उतना ही साधारण आदमी भी चाहते हैं। (रङ्गमंच)

—*o*—

—४ स्वरों में—

नृत्य का १ लहरा

(स्वरलिपि०—श्री० नरेन्द्रसहाय, वर्मा बी० ए०, फ़ाइनल)
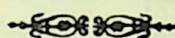
श्री वर्मा जी ने यह लहरा "निसरेग" केवल ४ स्वरों में तैयार करके भेजा है, जो कि बिलकुल नये ढंग का है। और नृत्य के लिये एक अनूठी चीज़ है। टुकड़े और तिहाई भी इसमें बहुत ही सुन्दर बैठाये गये हैं। आशा है पाठक आपके सफल प्रयत्न से लाभ उठायेंगे। आप सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री० बेनीप्रसाद जी (भाई) के प्रधान शिष्यों में से हैं।

—सम्पादक

राग बरवा पीलू-तीनताल, मात्रा १६

१—स्थायी

१				+				३				०			
स	न्	स	र	ग	–	र	ग	र	स	र	ग	र	स	–	र

२—टुकड़ा साथ

स	न्	स	र	ग	–	र	ग	र	स	र	ग	ग	रग	रस	ग
–	–र	सन्	सर	ग	–	र	ग	र	स	र	ग	र	स	–	र

३—टुकड़ा साथ

स	न्	स	र	ग	–	र	ग	र	स	र	ग	ग	रग	रस	ग
रस	–र	सन्	सर	ग	–	र	ग	र	स	र	ग	र	स	–	र

४—टुकड़ा साथ

स	न्	स	र	ग	रग	रस	रग	रस	–र	सन्	सर	ग	–र	सन्	सर
ग	–र	सन्	सर	ग	–	र	ग	र	स	र	ग	र	स	–	र

५—टुकड़ा साथ

स ऩ स र	ग - ग रग	रस रग रस -र	सऩ रस -र सऩ
रस -र सऩ सर	ग - र ग	र स र ग	र स - र

६—टुकड़ा साथ

स ऩ स र	ग र रग रस	-स -र -र सर	सऩ सर ग रग
रस -र सऩ सर	ग - र ग	र स र ग	र स - र

७—टुकड़ा साथ

स ऩ स र	ग रग -र गर	रग रस गर सर	रस रग सर गर
रग रस गर स	रस -र ग रग	रस गर स रस	-र ग रग रस
गर स रस -र	ग - र ग	र स र ग	र स - र

८—टुकड़ा साथ

स ऩ स र	ग र ग रग	-र गर -र गर	रग रस गर सर
गर सर रस रग	सर गर सर गर	रग रस गर सर	गर स रस -स
रस -र ग गर	सर गर स रस	-स रस -र ग	गर सर गर स
रस -स रस -र	ग - र ग	र स र ग	र स - र

९—टुकड़ा साथ

स ऩ स र	गर -ग ग रग	-ग रर -र गर	रर गस रग रस
गस रर गर सर	रर सग रस रग	सग रर सर गर	रर गस रग रस
गस र गर स	र सर रस -र	ग स र सर	रस -र ग स
र सर रस -र	ग - र ग	र स र ग	र स - र

—०—

नृत्य की पोशाक और मेक-अप

(लेखिका— श्री० पपीयादेवी)
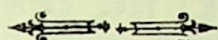
नृत्य में पोशाक का महत्व—

नृत्य में पोशाक आहार्य अभिनय की तरह एक प्रधान स्थान रखती है। पोशाक नृत्य के भाव और समय के अनुसार ही होनी चाहिये। वातावरण में विशेषता और भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति करने वाली पोशाक होनी चाहिये।

भारत में रंगों का प्रेम—

उष्ण प्रधान देश होने के कारण भारत रँगों का सादापन पसंद नहीं करता। यहाँ रङ्गबिरङ्गे वस्त्र ही सुहावने लगते हैं, जैसा कि हमने स्टेज पर देखा होगा। हालाँकि दार्शनिक दृष्टि से इतने रङ्गों की आवश्यकता नहीं है, जैसे कि टैगोर स्कूल के नृत्य, जो भावों की प्रधान दार्शनिकता पर निर्भर होते हैं, रँगों की भरमार स्वीकार नहीं करते। वस्त्र जो पहिने जाते हैं, भाव और रसों के अनुसार ही होते हैं। प्राचीन पुस्तकों में भी कितनी ही जगह ऐसे कितने ही भिन्न-भिन्न रँगों के नाम हैं, जो मुख्तलिफ भावों के प्रदर्शन में सहायक होते हैं। सादा रंग की पोशाक (साड़ी और धोती) नृत्य में सादगी और रँगों की न्यूनता के प्रदर्शन में आवश्यक हैं।

अब प्रश्न उठता है कि इसमें कौनसा उत्तम है? यह ध्यान रखना चाहिये कि अच्छी किस्म के सुन्दर कपड़े स्टेज की रोशनी में आंखों को प्रिय लगते हैं। एक मामूली कपड़े का टुकड़ा स्टेज की जोरदार रोशनी में नेत्रों को उतना सुन्दर नहीं दीख सकता, जितना कि सिल्क या साटन का टुकड़ा। जो कपड़ा शरीर से सटकर कसा हुआ बैठेगा वह सर्वोत्तम रहेगा। जारजट और क्रेप के रेशमी कपड़े सबसे अच्छे दीखते हैं, क्योंकि वे शरीर से खूब सटे हुये फ़िट बैठते हैं। इन कपड़ों को धारण करने वाला नृत्यकार बहुत सुन्दर दीखता है, क्योंकि उसके शरीर की प्रत्येक मांसपेशी और अङ्गों का सञ्चालन उनमें होकर साफ नज़र आता है।

पहनाने का ढंग—

वस्त्र और उनको पहिनने का ढंग ऐसा होना चाहिये, जिससे अश्लीलता प्रकट न हो। कामुकता प्रकट करने के लिये नाम-मात्र के कपड़े पहिने जाते हैं, ऐसे कामुक नृत्यों के प्रदर्शन जनता के विचार पतन एवं गिरी हुई मनोभावनाओं के प्रतीक हैं। इन्हें प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिये। ऐसे मनुष्यों की भी एक संख्या है, जो कुछ नर्तकों को केवल उनके वस्त्रों के कारण ही पसंद करते हैं, क्योंकि उनको देखने से ऐसे मनुष्यों को कामोद्रेक होता है। किन्तु ऐसे नृत्यों में कला का विशेष स्थान नहीं होता। यह उस अँग्रेजी नाच (Crlearet) की तरह है, जहां दर्शक केवल पीने और मौज़ उड़ाने के लिये आते हैं। हालाँकि वे यह दलील पेश करते हैं कि ऐसे नग्न अश्लील नृत्य कोई नई

बातें नहीं हैं, क्यों कि प्राचीन काल की पाषाण मूर्तियों और कला स्थानों में देवी-देवताओं तक के ऐसे चित्र और मूर्तियां हैं, जिनमें उनके बदन पर नाम-मात्र के वस्त्र हैं, और उनकी पारस्परिक अङ्ग आकृति भी अश्लीलता लिये हुये है। लेकिन यह दलीलें वास्तव में माननीय नहीं हैं। हिन्दू पुराणों में देवी व देवताओं के ध्यान एवं स्तोत्र पाठों में बड़े भाव-पूर्ण शब्दों में एक एक वस्त्र, आभूषण और श्रृंगारों का वर्णन किया है। इनमें कहीं भी अश्लीलता या उच्छृङ्खलता को स्थान नहीं है, और फिर नर्तक एक मनुष्य है, मूर्ति या पत्थर की शिला नहीं। मनुष्य में मनुष्यत्व और सभ्यता होनी ही चाहिये। यह सच है कि जनता कामोत्तेजक कार्यों में पैसा खर्च करती है, किन्तु इनसे कला या आदर्श की उन्नति नहीं हो सकती। यह अधःपतन की ओर ले जाती है।

अत्यधिक वस्त्र —

दूसरी ओर यह ध्यान भी रखना चाहिये कि नर्तक अधिक कपड़े न पहिने, बल्कि कपड़ों का चुनाव ऐसा हो, जो उसके स्वाभाविक शरीर सौन्दर्य और अङ्ग सञ्चालन को आजादी से प्रकट कर सकें। नर्तक की पसन्द विस्तृत होनी चाहिये, परन्तु उसको सही-सही चुनाव के लिये श्रृंगार करने वाले की राय भी लेलेनी चाहिये। सच्चे नृत्य का सम्बन्ध स्वस्थ व सुन्दर शरीर से है। इसके बिना वह नृत्य नहीं, उपहास है।

—वस्त्र—

संस्कृत के प्राचीन नृत्य और ड्रामा के ग्रन्थों में भाव के अनुसार प्रत्येक रंग की पोशाक लाज़मी स्वीकार की गई है, लेकिन उस जगह जहां कि एक ही नृत्य में कई भावों का प्रदर्शन करना पड़े एक समस्या खड़ी हो जाती है। क्या उस समय नर्तक एक-एक रस की अभिव्यक्ति करके बारबार पोशाक बदलने जाय? इस समस्या का हल यूं हो सकता है कि नर्तक प्रधान भाव के अनुसार उसी रंग की पोशाक पहिनले। यह कहदेना जरूरी है कि किसी साड़ी या रंग को जिसे पहिले किसी भाव की अभिव्यक्ति के लिये उचित समझा गया है, किसी समय देखने में बेमौजू मालूम देगा। पहिली बात, पोशाक पहिनने में यह ध्यान रखने की है कि चतुर दर्शक उसे कैसा अनुभव करेगा और उसे वह कैसी नज़र पड़ेगी। इस कार्य में दूरदर्शिता की जरूरत है। इसके विपरीत चलने वाले को, अगर वह उत्तम फल प्राप्त करने का इच्छुक है तो उसे मशविरा कर लेना चाहिये।

प्राचीन वर्णन के अनुसार पोशाक—

प्रत्येक देवी और देवता का ध्यान अलग-अलग होता है, जो उनकी पोशाकों का वर्णन करता है। कलाकारों को उन श्लोकों और स्तोत्रों को ज्यादा से ज्यादा याद रखना चाहिये। इसमें भी मूल भाव पर सदैव सतर्क रहना चाहिये। स्तोत्र में वर्णित स्वरूप की पोशाक पहिनने में नहीं आ सकती, लेकिन किसी देवता, देवी या आकृति का मूल भाव और स्वरूप अवश्य आना चाहिये। एक ही देवता या देवी के कितने ही भिन्न-भिन्न श्रृंगार वर्णन मिलते हैं, उनमें से कोई उत्तम और सुलभ चयन करना जरूरी है।

खास काम जो बाकी रहता है, वह है नर्तक की भूमिका के मुताबिक सही २ अनुकूल पोशाकों का फ़िट करना। स्त्री या पुरुष की भूमिका में सर्वोत्तम जचने वाली पोशाक चुनना आवश्यक है। नर्तक के शरीर की गठन और बनावट के मुताबिक रंगों का सामञ्जस्य रहना चाहिये।

अगर एक आदमी यूरोपियन पोशाक में सुन्दर लगता है तो यह ज़रूरी नहीं कि उसे यूरोपियन पोशाक पहिनकर ही नाचना चाहिये,

—पोशाक भूमिका के अनुसार—

सर्व प्रथम भाव है। पोशाक भाव के अनुसार होगी, फिर देश व समय का विचार और अन्त में रंग। रंग नर्तक के चेहरे, लावण्य और सौन्दर्य को सहायता देने वाला हो।

—चित्रकार सर्वोत्तम डिज़ायनर है।

एक नृत्य विशेषज्ञ को छोड़कर नर्तक के लिये पेन्टर ही सबसे अच्छा डिज़ायनर है पेन्टर अपनी चित्रकारी में चतुर होने के अलावा समयकालीन इतिहास और कला का मर्मज्ञ होना चाहिये। चतुर चित्रकार, नर्तक की कुल तस्वीर मय पोशाक के अपने दिमाग में खींच लेता है। और तब आवश्यक पोशाक, उनकी बनावट और पहिनने का ढंग, मय रंग, रत्न जड़न एवं नर्तक के शरीर के शृंगार सम्बन्धी बातों को विचार करके तय करता है। ऐसा वही है, जो नृत्य के भाव और भूमिका के अनुसार रंग और असर डाल देने वाली बारीक २ बातें सोचता है।

जब वस्त्रों की किस्म, रंग और उनकी बनावट तय हो जाती है तब बहुत होशियारी से अन्य सजावट का विचार किया जाता है। पोशाकों के बोर्डर और नक्काशी का काम चित्रकार को ही करना चाहिये। इसके बाद एक शृङ्गार विशेषज्ञ आभूषण, अँगूठी, मालाएं जंजीरें, भुजबन्ध, चूड़ी और केश विन्यास पर विचार करता है। लेकिन इस कार्य को करने के पहिले उसे भाव, कहानी तत्व और दूसरी हिदायतों को खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहिये।

—आभूषण—

भारतीय, आभूषणों के सदैव से प्रेमी रहे हैं। बहुत से राजे और महाराजे अब भी प्राचीन जवाहिरातों को पहनते हैं। सम्भवतयः इसका कारण उस समय की धनाड्यता थी। पहिनने वाले की भाव अभिव्यक्ति का साथ देते हुए आभूषण और केश विन्यास होना चाहिये।

—संगीत रत्नाकर में वर्णित आभूषण—

नीचे 'संगीत रत्नाकर' का उद्धरण देते हुए अच्छे मेकअप के बारे में उसकी सम्मति दी जाती है।

फालतू बिखरे हुए केशों को समेट कर बाँध लेना चाहिये, उनपर अधकिली पुष्प कलिकाओं को खोंस कर पीठ के पीछे या समयानुकूल सीधी, टेढ़ी चोटी लटका देनी चाहिये। बालों के ऊपर मोतियों की जाली पहिन लेनी चाहिये। कानों के ऊपर मगर की

आकृति की चूड़ी पहिन लेनी चाहिये। माथे पर सन्दल व केशर का लेप होना चाहिये आँखों को काजल से आँजकर, कलाइयों में जवाहरात की चूड़ियाँ पहिन लेनी चाहिये। दातों को सफेद रंग से पोतकर गर्दन व मुख को कस्तूरी की पत्तियाँ मिले पाउडर से सुन्दर बनाना चाहिए। सितारों की कटाव को नेकलस व मोतियों की माला वक्षःस्थल पर लटकती रहनी चाहिये। अँगुलियों में हीरे व कीमती नगों की जड़ी हुई अंगूठी पहिन लेनी चाहिये। बारीक कपड़े की बनी हलके रंग की या सफेद रंग की पोशाक इस तरह पहिननी चाहिये, जिससे अङ्गों का संचालन साफ २ दिखाई देता रहे साड़ी रेशमी पहिननी चाहिये। उसका रङ्ग ऐसा हो जो नर्तक के सौन्दर्य को दबा नसके। साड़ी देश के रीति रिवाज़के मुताबिक बाँधी जासकती है। सर्ग ७, १२५०-१२५७

'अभिनय दर्पण' में किंकणी घंटिकाओं का वर्णन भारत के प्राचीन कला विज्ञ और शृंगार आचार्यों की दक्षता का काफी परिचय देता है। अभिनय दर्पण में नृत्य बालिका के पैरों के घुंघरुओं का इस प्रकार वर्णन किया गया है:—

किंकणी घंटिकाओं का स्वर मधुर हो और वे कसकुट की बनी होनी चाहिये। उनकी बनावट सुन्दर कटी हुई एवं एक दूसरे में एक अंगुल का अन्तर रहना चाहिये। नीले धागों में हलकी गांठें लगाकर नृत्य बालिका को इन घंटिकाओं को प्रत्येक पैर में सौ-सौ अर्थात् कुल दो सौ क 'ख्या में बांधना चाहिये।

—केश विन्यास—

केशों की सजावट करना यह दूसरा मुख्य काम चित्रकार की कला पूर्ण कृति है। प्राचीन संस्कृति की कलापूर्ण कृतियाँ अगणित संख्या में भारतीय प्राचीन केश सौन्दर्य पटुता की प्रमाण हैं। प्राचीन समय में पुरुषों के बाल स्वयं ऐसे घुंघराले और लम्बे होते थे, जितने कि इस समय का पुरुष दवाओं और कृत्रिम उपायों से बढ़ा सकता है। भारत के कितने ही भागों में केश वृद्धि स्वभाविक प्रकृति से हो जाती है। मुख्यतः बंगाल और दक्षिण की नारियां इस प्राकृतिक सुविधा के कारण अपने केशों को बड़े सुन्दर ढङ्ग से सजाती हैं। भारतीय नारी के शृंगार में बालों को छांटना या पत्ते निकालना अब तक अधिक स्थान प्राप्त नहीं कर सका है। नृत्य में ऐसी नारी ग्राह्य नहीं होती, हालाँकि यह पश्चिम की रिवाज़ और फैशन हो सकती है।

—वर्तमान कलाकारों की पोशाक—

वर्तमान नर्तकों ने प्राचीन पद्धति के वस्त्र भुला दिये हैं। अब 'महादेव' जी स्टेज पर नेकर (जांघिया) पहिन कर आते हैं। हालांकि कसकुट की केवल एकही मूर्ति मदरास म्यूज़ियम में और दूसरी पत्थर की चिदाम्बरम में ऐसी हैं, जिनमें श्री भगवान ने कसे हुए जांघियां पहिन रक्खे हैं, लेकिन एक या दो प्रमाण इतने काफी नहीं हो सकते जो उनका अनुकरण कर लिया जाय। तामिल भाषा की भक्ति पूर्ण पुस्तक जो चिदाम्बरम में हैं भगवान शिव को चीते की छाल धोती की जगह बांधे लिखा है।

भगवान कृष्ण अचकन और शेरवानी व चूड़ीदार पायजामे में, और पार्वती जी लंहगा में, न तो वर्तमान पसंद की पोशाक हैं और न प्राचीन संस्कृत का अनुकरण है। हालाँकि ये पोशाकें राजपूत चित्रों की नकल हैं, लेकिन ये बतादेना आवश्यक है कि ये चित्र बाद के बने हैं और वे मूर्तियां तथा पेन्टिंग जो देवी व देवताओं की हैं और जिनको अबतक माना जाता है, राजपूतों के समय से ज्यादा अच्छे समय में निर्मित किये गये थे।

अब पोशाकों के विषय पर अधिक तर्क न करके, कुछ खास २ शिक्षा केन्द्रों में प्रयोग की जाने वाली मुख्य २ पोशाकों पर लिखा जाता है। कथकलि स्कूल की पोशाक आश्चर्य जनक है, आइये उसको देखें।

—भावाभिव्यक्ति में बाधा—

कथकलि में किसी समय घूंघट काढ़ा जाता है। ये नर्तक के मुख को ढककर उसकी आंखों व भाव अभिव्यक्ति को भी छिपा देता है। कथकलि नर्तक अपने आपको सफेद या पीले पेन्ट से सजाते हैं और मुखाकृति व अङ्ग अपने संचालन को चालू रखते हैं। मोटा पेन्ट करने के बाद मुख पर अच्छी तरह भाव प्रदर्शन नहीं होता।

—कथकलि में पोशाक—

कथकलि नृत्यों की पोशाक जितनी अद्भुत होती है, उतनी ही दिलचस्प भी होती है। नर्तक लम्बा चोगा पहिनता है, जो चौड़े घेर और फैली हुई बाहों का होता है जिसे 'कंचुक' कहते हैं। वे अपनी गर्दन के चारों ओर एक वस्त्र या चद्दर ओढ़ लेते हैं, जिसकी गांठों की एक कतार होती है। इनके अलावा ये वर्म, या शरीर रक्षा का कवच, कुण्डल (कानों की चूड़ी) मुकुट 'हस्तत्राण' (बाणों से हाथ की रक्षा करने वाला) और फूल माला भी धारण करते हैं। ये तमाम सजावट के सामान भूमिका और नर्तक के शरीर के मुताबिक रक्खे जाते हैं।

नर्तक भिन्न २ गुणों की परिभाषा समझ लेते हैं, और इसी के मुताबिक उनके चेहरे व शरीर गुण प्रभाव प्रकट करने के अनुसार पेन्ट किये जाते हैं। चार प्रकार के रस हैं। १—पूर्ण सत्त्व, २—सत्त्व और राजस, ३—राजस, ४—तामस।

इनके प्रभाव प्रकट करने वाले निम्न पेन्ट (रङ्ग) हैं, जो कि नर्तक को प्रयोग करने पड़ते हैं।

१—मिन्नक

पीला और लाल पाउडर चेहरे पर लगाकर सफेद बिन्दुओं से सजाया जाता है। फिर काला रङ्ग भौंहों पर, काजल आंखों की पलकों पर और होंठों पर सुर्खी लगाई जाती है। एक बीज के दाने से आँख की पुतली छू दी जाती है उससे पुतली सुर्ख और चमकदार दीखने लगती है। माथे पर ब्राह्मण, ऋषि, स्त्री, साधू या अन्य भूमिका के अनुसार तिलक लगाया जाता है।

२—पच्छ (हरा)

चेहरे पर हरा पेन्ट करके सफेद लाइनें ठोड़ी और जबड़े के बीच में पड़ी हुई डाली जाती हैं, जिससे पात्र का हृदय दयालू प्रतीत होता है, जैसे—इन्द्र, राम, कृष्ण, पाण्डव इत्यादि।

३—कत्ती (चाकू)

निडर और भयानक भूमिकाओं में जैसे, रावण, कीचक, हिरण्यकशिपु इत्यादि में, नाक लाल रंगी जाती है और नाक की सीध में माथे पर बिन्दुओंसे दो गोल गेंद सी बनाई जाती हैं।

४ – तारी

तारी की तीन किस्म हैं:—

(अ) सफेद—हनूमान या राम के सेवक बन्दरों को सफेद बाल, सफेद कपड़े और सफेद रुयेंदार वस्त्र पहिनाये जाते हैं।

(ब) लाल—नृत्य में पीड़ा सूचक भाव या द्वेष की मुद्रा में जैसे दुःशासन, बाली, कालकेय, सुग्रीव के प्रदर्शन में चेहरे, डाढ़ी और ऊपर की पोशाक लाल रंग की होती है। आंखों के पलकों को काला रँगा जाता है और कुछ कागज के टुकड़े रँगकर नाक व ठोड़ी पर चिपका लिये जाते हैं, जिससे उनका मुख और भी ज्यादा डरावना बन जाय।

(स) काला— काली, महादेव और किरात की भूमिका में कुरता व ऊपर की पोशाक काली होती है। किरात और महादेव दोनों की सम्मिलित भूमिका में केवल महादेव व किरात में यही अन्तर रहता है कि महादेव के मस्तक पर एक अर्ध-चन्द्र और लगा रहता है।

इनके अलावा कथकलि में और भी अगणित तरह के पेन्टों का अभ्यास करना पड़ता है। सर्प की आकृति बनाने के लिये, लाल, हरी और सफेद लाइनें बनानी पड़ती हैं। चिड़ियां, विदूषक या हास्य अभिनय की भूमिका का पेन्ट उसी तरह किया जाता है, जैसे कि भयानक या बेढङ्गी आकृति वाले पात्र का किया जाता है।

कथकलि में दो प्रकार के मुकट काम में आते हैं।

१— त्रिकोण आकृति का होता है, जिसका कुण्डल पीछे बँधा रहता है। कुंडलों की ऊँचाई अभिनेता के शरीर की ऊँचाई के अनुपात से रक्खी जाती है। उस दशा में जबकि कई एक पात्रों की पोशाक एकसी रक्खी जाती है, जैसे कि पाँचो पाँडवों की, तो केवल कुण्डलों को छोटा और बड़ा रखने से ही अन्तर प्रकट कर दिया जाता है।

२— दूसरा मुकट त्रिकोण तो होता है, परन्तु उसमें कुंडल नहीं होते, इसे मुती कहते हैं। इन चीजों की कमी-वेशी से पात्रों में अन्तर डाल दिया जाता है। बढ़े हुये बालों की जटा ऋषि या साधु का रूप प्रकट करती है और मोर-पंख भगवान कृष्ण का, इत्यादि। हनूमान जी के लिये चांदी की एक गोल ढपली पहिनाई जाती है।

इसके अलावा लकड़ी की चित्रित्र चूड़ियां, कान के झूमके, तारंक, केयूर, चांदी के नाखून, जञ्जीर, हार, नूपुर इत्यादि भी इस्तैमाल किये जाते हैं। सन के कृत्रिम बाल भी रँगकर बना लिये जाते हैं।

नृत्य में पोशाक—

उत्तरी भारत में नृत्य करने वाली स्त्री रेशम की या साटन की किनारीदार सुन्दर साड़ी पहिनती हैं, जो नीचे की ओर घेरे में लहरदार लटकती रहती हैं।

एक पूरा पोलका जो बाहों पर खुला हुआ और सुन्दर होता है, पहिनने से पहिले अपने वक्षस्थल पर चोली या कपड़ा बाँधकर, सुन्दर-सुन्दर गहने पहिनती हैं। प्रायः जेवर इतने अधिक होते हैं, कि नाचने वाली का तमाम शरीर ढक जाता है।

भरत नाट्य में पोशाक-

दक्षिणी नर्तकी साड़ी, चोली अपनी खास फैशन में पहिनती हैं। कमर में सोने की करधनी और शरीर पर आधी या चौथाई बाहों का पोलका ही काफी समझा जाता है। इसके अलावा और ज़ेवरों का उतना महत्व नहीं है। पोशाक शरीर के लिये आराम देने वाली होनी चाहिये।

अनुवादक—देवकीनन्दन 'बन्सल'

राग-जयजयवन्ती

❀ नृत्य के साथ गाने के लिये एक सुन्दर रचना ❀

स्वरकार—श्रीयुत तारापद बैनर्जी —————— आड़ा चौताला मात्रा १४

राग जयजयवन्ती, खमाज ठाठ से पैदा होता है, यह सम्पूर्ण जाति का राग है। इसका वादी स्वर रे तथा सम्वादी स्वर प है। इसमें दोनों गन्धार तथा दोनों निषाद का प्रयोग होता है। आरोह में ग, नी, शुद्ध तथा अवरोह में कोमल करके गाया जाता है। इस राग के स्वरविस्तार की गति मध्य व तार सप्तकों में अधिक है, गाने का समय रात्रि का दूसरा प्रहर है।

* आरोह स्वरूप *

स - र र - र ग र स - ऩ ध़ प़ - र - ग म प - न सं -

* अवरोह स्वरूप *

सं न ध प - ध म - र ग र स

—पकड़—

र ग र स - ऩ ध़ प़ - र - -

—गीत—

स्थाई—नाचत गति गिरधर गोपाल ॥

जोड़—छम छम छम छबि न्यारी ।

अन्तरा—चम चम चम छम छनन ऊपर, तन मन धन सब दीनन पर।

मुरली की लय तान लेत, जै जै जै मुरलीधारी ॥

—स्थाई—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
+		३		०		४		०		१		०	

र	ग_	र	स	र	ऩ	स	स	ऩ	स	स	ऩ_	ध़	ऩ_
ना	ऽ	च	त	ग	ति	गि	र	ध	र	गो	पा	ऽ	ल

-जोड़-

ग	म	ग	म	ग	म	र	ग	रग_	रग_	सर	गम	गर_	सऩ
क्ड़	म	क्ड़	म	क्ड़	म	क्ड़	बि	न्या	ऽ	ऽ	ऽ	री	ऽ

-अन्तरा-

ग	म	प	न	न	सं	न	सं	सं	सं	सं	न	सं	सं
च	म	च	म	च	म	क्ड़	म	क्ड़	न	न	ऊ	प	र
न	सं	रं	गं_	रं	रंगं_	रं	सं	रं	सं	रं	न_	ध	प
त	न	म	न	ध	न	स	ब	दी	ई	न	न	प	र
म	ग	र	ग_	र	स	म	ग	ग	-	म	प	-	म
मु	र	ली	ऽ	की	ऽ	ल	य	ता	ऽ	न	ले	ऽ	त
प	सं	न_	ध	प	मग	म	ग	रग_	रग_	सर	गम_	गर	सऩ_
ज	य	ज	य	ज	य	मु	र	ली	ऽ	धा	ऽ	री	ऽ

—*—

वैदिक नृत्यों की नामावली !

(लेखक— श्रीयुत राजाराम द्विवेदी "सुरङ्ग")

लक्षण-ताण्डव प्रकार

(१) महाशिव ताण्डव (२) त्र्यम्बक ताण्डव (३) अपराजित ताण्डव (४) अहि-वन्ध शिव ताण्डव (५) विश्वरूप ताण्डव (६) रैवत शिव ताण्डव (७) अजेकपाद शिव ताण्डव (८) पिनाकी शिव ताण्डव (९) वृष्टाकपि ताण्डव (१०) शम्भु ताण्डव (११) कपर्दि ताण्डव ।

उपासना ताण्डव प्रकार संक्षिप्त

(१) रावण का उपासना ताण्डव (२) कार्तिक का अम्बर ताण्डव (३) वीरभद्र का विप्लव ताण्डव (४) वाणासुर का कल्पताण्डव (५) भैरव का जम्य ताण्डव (६) हनूमान का घन ताण्डव (७) गणेश का मङ्गल ताण्डव (८) दुर्गा का रक्ताञ्जलि ताण्डव (९) मेघनाद का मृत्युञ्जय ताण्डव (१०) इन्द्र का शास्य ताण्डव (११) अर्जुन का धीर ताण्डव (१२) प्रजापति का प्रपात ताण्डव (१३) योगेन्द्र कृष्ण का निर्यात ताण्डव (१४) प्रादुर्भाव ताण्डव विश्नु (१५) साम्ब का धूम्रताण्डव (१६) पंच महा धारण ताण्डव (१७) पंच महा पालन ताण्डव (१८) पंच महा काल ताण्डव, इत्यादि ।

वृत्ति ताण्डव प्रकार

(१) शनि का सलिला ताण्डव (२) लक्ष्मी का विचित्र ताण्डव, इत्यादि ।

ये नृत्य बहुत ही उच्चकोटि के कला पूर्ण हैं, यहां मुख्य दो ही नाम दिये जाते हैं। देवियों को इन नृत्यों की शिक्षा लेकर नृत्य-कला की महत्ता को समझना चाहिये।

सप्त रास नृत्य

भारत से ऊपर युक्त सप्त रास मण्डल नृत्यों का महत्व मिट चुका है, केवल योग मण्डल रास (जो बृज मंडल रास आज होता है) यही बाकी है । परन्तु उद्देश्य अब मन माने हैं, अतः यह भी नियमित नहीं। ऊपर हमने संक्षिप्त परिचय दिया है, यदि भारतीय सप्त रास नृत्य की विशेषताएँ समझ कर इनका प्रचार फिल्मों द्वारा किया जावे तो भारत के नृत्यों की महानता संसार में व्यापक हो जावे और हमारी धारणाएँ जो नृत्य की कुत्सित भावनाएँ बन रही हैं वे पवित्र हो जावें ।

१- आकाश मंडल रास, २- रवि मंडल रास, ३- चन्द्र मंडल रास, ४- ध्रुव-मंडल रास, ५- दिग मंडल रास, ६-भू-मंडल रास, ७- योग मंडल रास ।

इन सप्त रासों की कलानिधि प्राप्त करो। नृत्य में नवयुग लाओ।

आरभटी प्रकार नृत्य

आरभव्य नृत, छन्द छद्म दीप्त रसान्यता। १०८

शारदा, सरस्वती के कलामान् व्यापक नृत्य

कलानृत्य, आश्रय नृत्य, ज्ञाननृत्य, प्रकाश नृत्य, व्यापक नृत्य, अलङ्कार नृत्य, वागेश्वरी, परमेश्वरी, शारदा।

आचार्य-कलामान् नृत्य प्रकार

(१) पञ्चतत्व नृत्य, (२) भूगर्भ नृत्य, (३) प्रादुर्भाव नृत्य(४) उत्पत्ति नृत्य (५) पालन नृत्य, (६) संहार नृत्य, (७) नीति नृत्य, (८) सिंधु नृत्य, (९) संचय नृत्य, (१०) दण्डनृत्य, (११) आर्णव नृत्य, (१२) हिमबिन्दु नृत्य, (१३) धराधर नृत्य, (१४) बुद्धिप्रदा नृत्य, (१५) शुश्रूषानृत्य, (१६) पुरोहित नृत्य, (१७) छायानृत्य, (१८) प्रयास नृत्य, (१९) ग्रास नृत्य, (२०) प्राणद नृत्य, (२१) बड़वानल नृत्य, (२२) गङ्गावतरण नृत्य, (२३) कामदहन नृत्य, (२४) उषाप्रभात नृत्य, (२५) शक्ति पूजा नृत्य, (२६) आनन्द भैरव नृत्य, (२७) आशुताङ्ग भैरवनृत्य, (२८) भैरव कपाली नृत्य, (२९) विकट भैरव नृत्य,

(असिताङ्गो विशालाक्षोमार्तण्डो मोहकप्रियः) इत्यादि नृत्य।

षोड़स संस्कार नृत्य-प्रकार

(१) गर्भाधान्, (२) सीमन्तो नयन, (३) जातिकर्म इत्यादि।

ये सम्पूर्ण नृत्य बड़े महत्वपूर्ण हैं इन सबकी कलाचार्य अप्सरायें हैं। यथा—

(१) घृताची, (२) मञ्जुकेशी, (३) सुभाला, (इत्यादि,) इनके यही नृत्य हैं, जो हिन्दू संस्कृति का पूर्ण परिचय देते हैं।

पञ्चतत्व नृत्य, (कलामान्)

(तत्वमयं नृत्यं) तत्वानि नित्यानि अतएव इदमपि अनादि नित्यंच)

स्थिर समगतिः करण-विभावः	चंचल गति, करण-विभावः	प्रवाह गति, करण विभावः	खण्डगति, करण विभावः	भ्रमर गति, करण विभावः
१—व्यापक	१—आंदोलित	१—उदधी	१—शिखणा	१—विस्तिरिणा
२—विस्तारी	२—स्पर्शिनी	२—लहरणी	२—ज्वाला	२--भ्रमणी
३—भानुकृति	३—भ्रमरो	३—तीव्रगतिनी	३—तापनी	३—शिखरणी
४—शशिकृति	४—प्रवाहिनी	४—वर्षक	४—परिपाकी	४—शान्ता
५—तारिका	५—धुर्मरी	५—निर्झर	५—ऊष्णा	५—सलिला
६—मेघछत्रा	६—ऊष्णा	६—शांत	६—नाशिनी	६—सजला
७—विद्युत्कांत	७—शीतला	७—पावन	७—व्यापनी	७—रत्ना
८—जल प्रपात	८—वृत्ताघात	८—अर्चनी	८—प्रकाशिनी	८—नाशिनी
९—आकर्षी	९—सुगन्धिनी	९—नाशिनी	९—कराली	९—गृहिणी
१०-शान्त	१०-प्राणद	१०-प्राणद	१०-दग्धनी	१०-पालनी

आकाशेतिभावः	वायुर्विभावः	जल विभावः	अग्नि विभावः	पृथ्वी विभावः
कलामान्	कलामान्	कलामान्	कलामान्	कलामान्
विष्णु भेष	इन्द्रभेष	वरुण भेष	अग्नि भेष	शेष भेष

मार्गी नृत्य लक्षण ।

आंगिकाभिनयैरेव भावानेव व्यनक्तियत् ।
तन्नृत्यं मार्गशब्देन प्रसिद्धं नृत्यवेदिनाम् ॥

अब मैं दो एक गत के बोल रस भावपूर्ण देता हूँ। जोकि नृत्य-संसार में एक नई लहर पैदा करदेंगे।

करुण रसभक्ति

+	२	०	३
तत् तत् तन सेऽ	मन सेऽ भज मन	शंऽ कर कोऽ तूऽ	निश दिन माला रटो
हर हर गिर जाऽ	कोऽ भज हिय सेऽ	हरि भज रेऽ 'हरि	भज रेऽ हरि भज

भयानक रस

गड़गड़ गड़गड़ धां धां	खंभा फारौ चरचर चरचर	धरणीऽहालीथरथर थरथर	धित्रॉ ऽधि त्राँऽ दिगदिग
दिगदिग हरि हिरना कुशको	धरकर दोनों जांघों बिचअर	धरकर फारौ हिया धरकर	फारौ हिया धरकर फारौ हिया

क्रिया विधि—

पहिले इन बोलों को ताल में बैठाकर पदा घात-लय के गुरु लघु पर क्रमशः देना चाहिये और चक्र भी लगना चाहिये।

* नायिका भेद *

अब मैं कुछ नायिका लक्षण भी पाठकों को सेवा में देना चाहता हूं। क्योंकि नृत्य का सम्बन्ध नायिका भेद से बहुत कुछ है।

१-स्वकीया-सती, पतिव्रता,

२-परकीया-पति होने पर भी परपति से प्रेम करनेवाली,

३-गणिका-धन के लिये प्रेम करने वाली,

इनके भावों को नियमित रूप में गायन, तथा नृत्य में दिखाना चाहिये। इसीलिये कृष्ण का रास छिपकर रात्रि में हुआ था। यही नीति है।

गीतों में नायिका लक्षण ।

१-परकीया गीत—घर बालम को छोड़आई रे मिजाजी तेरे लिये।
२-ऊढानायिक गीत—राम करें कहुँ नैना न उलझें।
३-स्वकीया गीत—आँखन बसे पिय जिय में बसेरी।
४-रतिप्रीता गीत—पिय जागरे अकेली डरलागे।
५-आनन्द संमोहा गीत—बांह गहत सुधबुध बिसरानी।

नायिका भेद और भाव, समझ कर नृत्य का विस्तार नियमित रूप में होना चाहिये। बिना नियम के सङ्गीत का कोई अङ्ग सुखद नहीं होसकता।

तुम मेरे मैं बनूं तुम्हारा !

(श्री० रमाशङ्कर शुक्ल "हृदय")

छन्दों की दुनियां में होगा, सखे! अन्त में एक सहारा।
हुआ 'अरुण' का अस्त समय है, मन्दस्मित सा चन्द्रोदय है॥
शोभा भी अति शोभामय है, कहीं न अब भय है विस्मय है।
संध्या के शीतल अचल में लिया चराचर ने आश्रय है,
यह चंचल क्षण होता लय है। आओ इस बेला में जीवन—

होजाए अभिसार हमारा !
तुम मेरे मैं बनूं तुम्हारा !!

विलसित रूपराशि रस सागर, मन उन्मद होता है जिसपर,
मुझे देखलेने दो क्षणभर, वह छवि ओ छाया नटनागर।
क्या डर है ? इस रूप दीप पर, होजाऊँगा मैं न्यौछावर॥
मैं तो लघु सिकता-कण-सा चुप, चुप ताकूं हूं एक किनारा।

तुम मेरे मैं बनूं तुम्हारा॥

क्या देखूं यह जादू भारी, एक झलक में हुआ भिखारी।
लघु लालसा आह बेचारी, किधर लुटगई कहां सिधारी ?
अब पागल हो मैं फिरता हूँ, नाम सुमिरता याद तुम्हारी,
देख न सका देखकर प्रिय अब तुम्हें सोचने से भी हारा।

तुम मेरे मैं बनूं तुम्हारा॥

पंजाबी डान्स

शाला जवानियां माणें ········!

स्वरलिपिकार—श्री मदनलाल जी वायोलिन मास्टर

(ताल कहरवा)

शाला जवानियां माणें, आंखां ना मोड़ी पीलै-पीलै ॥
अखियां बिच अखियां पाके, तोवानुं फाई लाके ।
पिघली हुई जन्नत पीलै, कलियां दी अज़मत पीलै ॥
पीलै दोचार देहाड़े जीलै-जीलै, शाला जवानियां माणें ॥
पिछ हुई ज़ोर जवानी, मुड़ मुड़ कर हथ नहीं आवणी ।
साक़ी तू भर पैमाना, पीलै सर मस्त ज़माना ॥
पीलै दो चार देहाड़े, जीलै-जीलै । शाला जवानियां······॥

	+				+			
स्थाई☞	*	स	ग	गम	पध	नसं	नध	धप
	*	शा	ला	जऽ	वाऽ	ऽनि	यांऽ	ऽऽ

+	+		
गमप प – पध मांऽऽ गों ऽ आँऽ	गम पम मग गरस खां नाऽ मोऽ ड़ीऽऽ	सरग ग – पध पीऽऽ लै ऽ आँऽ	गप पम मग गरस खांऽ नाऽ मोऽ ड़ीऽऽ
सरग गर गम प पीऽऽ लैऽ पीऽ ले	– स ग गम ऽ शा ला जऽ		
अन्तरा☞		* संसं सं सं * अंखि यां विच	नसं नरं संन ध अंखि यांऽ पाऽ के
– धन॒ धप पम ऽ तोऽ वाऽ नुऽ	मप धन॒ धप प फाऽ ईऽ लाऽ के	– संसं सं सं ऽ पिघ ली हुई	नसं नरं संन ध जन् नत पीऽ लै
– धन॒ धप पम ऽ कलि यांऽ दीऽ	मप धन॒ धप प अज मत पीऽ लै	– धध ध ध ऽ पीऽ लै दो	पन॒ धप मग रस चाऽ रद हाऽ ड़ेऽ
सरग मगर गम प जीऽऽ लैऽऽ जीऽ लै	– स ग गम ऽ शा ला जऽ		

नोट—दूसरा अन्तरा भी इसी प्रकार बजेगा।
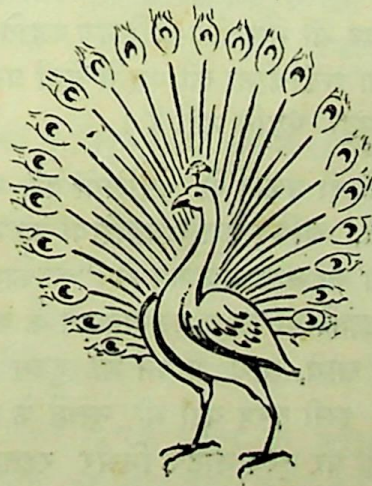
बाली द्वीप के नृत्य नाटक

(लेखिका— श्रीमती पार्वती गुप्त)

इस लेख की लेखिका श्रीमती पार्वती गुप्त हमारे मित्र, गुप्ता सङ्गीतालय के संचालक तथा सुयोग्य लेखक श्री० विश्वनाथ गुप्त की विदुषी पत्नी हैं। आप लेखिका होने के साथ-साथ एक सुयोग्य नर्तकी भी हैं। गुप्ता सङ्गीतालय कलकत्ता की बालिका विभाग की आप शिक्षयित्री हैं। इस लेख में उन्होंने बाली-द्वीप, यवद्वीप और जावा द्वीपों में होने वाले नृत्यों में भारतीयता की छाप कहां तक है, यही प्रमाणित किया है, संगीत और नृत्य प्रेमियों के अध्ययन की चीज़ है।

—सम्पादक

हम भारतवर्ष वालों में यह विश्वास घर कर गया है कि 'बाली-द्वीप' और 'यव-द्वीप' वालों के नृत्य नाटकों में भारतीय भावना का साम्राज्य है, और यह बात किसी हद तक ठीक भी है। उनके नाटक का आदर्श प्राचीन भारतीय नाटकीय आदर्श के साथ मेल खाता है, इसे स्वीकार करना ही होगा, हमारे महाभारत और रामायण को उस देश के ताल और छन्दों में नृत्य रूप दिया गया है। हम लोग प्राचीन नृत्याभिनय से जो कुछ अन्दाजा लगाते हैं, वहां का नृत्याभिनय आजकल उसी पद्धति पर चल रहा है। भारतीय रामायण और महाभारत ने उस देश की आबहवा के साथ अच्छा मेल खाया है, साथ ही उन्होंने कुछ पात्रों की सृष्टि इस प्रकार की है, कुछ घटनाओं का समावेश इस प्रकार किया है, कि जिन्हें हम अपने ग्रन्थों में भी नहीं पाते, किन्तु महाभारत के ऊपर निर्भर करके वहां के अनेक नृत्य नाटकों की रचना हुई है। महाभारत का अर्जुन वहां का एक विशेष पात्र है, हमारे देश में वैष्णवों ने श्रीकृष्ण को जिस रूप में ग्रहण किया है, अर्जुन का स्थान उस देश में प्रायः उसी कोटि का है। 'अर्जुन' को छोड़कर वहां कोई विरला ही नृत्य नाटक होगा।

आदर्श का मेल होने पर भी भारतीय अभिनय पद्धति से उनका कोई मेल नहीं है, ऐसा लगता है जैसे स्याम या इन्डोचीना की पद्धति वहाँ प्रचलित है, प्राचीन भारतीय मुद्रा पद्धति की तरह वहाँ मुद्रा पद्धति नहीं है।

वहाँ के नृत्याभिनयों में दो प्रकार से उङ्गलियों का सञ्चालन होता है, वह भी किसी खास अभिप्राय से नहीं, अपितु केवल उङ्गलियों की भंगि के लिये, किन्तु हमारे शास्त्रों में इन दो भाव-भंगियों का नाम यथाक्रम से "कटकामुख" और "मुष्टि" रक्खा गया है, हां वहां के नृत्यों में उङ्गलियों से घूंघट पकड़ने के कई कायदे हैं, प्राचीन भारतीय गीति-नाट्यों में नृत्य के साथ-साथ गायन भी हुआ करते थे। गाने वालों का अलग ही एक दल होता था। इसी तरह यहां भी नृत्यों के साथ-साथ गायकों का दल अलग से रहता है, और उन्हीं पर नृत्य नाटक निर्भर रहता है।

भारतीय प्राचीन नाटकों में, नाटकों से हमारा तात्पर्य केवल नृत्य-नाटकों से है। अभिनेताओं को नृत्य के साथ संवाद कहने का अधिकार नहीं है, किन्तु कुछ एक नृत्य ऐसे भी हैं, जिनमें सम्वाद और गायन भी हो सकते हैं। 'जावा' में भी इसी प्रकार की प्रथा वर्तमान है, किन्तु 'यव-द्वीप' में नृत्य के साथ साथ अभिनेता संवाद बोलते हैं और गाना गाते हैं, लेकिन अभिनय के अनुसार मुख पर किसी प्रकार की भावना को प्रकट करने का किसी को अधिकार नहीं। कमर पर पड़ी हुई चादर को नाना प्रकार से नचाना इन लोगों में नृत्य का विशेष अंश माना जाता है, यहां के नृत्यों में लहरों की तरह लटकन और लता की तरह भंगि एकदम ही नहीं है, इनके नाच की गति खूब धीमी रहती है- केवल युद्ध-नृत्यों में ही लय के साथ नृत्य की गति तीव्र हो जाती है।

वहां पण्डितों और ऐतिहासिकों का विश्वास है कि यहां के नृत्य-नाटकों का प्रचलन प्राचीन गुड़ियों के खेल से आरम्भ हुआ है। युद्ध विषयक नाच यहां सब से ज्यादा प्रचलित हैं। मृत्यु का अभिनय यहां वर्जित समझा जाता है, किन्तु युद्ध का अभिनय बड़े मज़े का होता है। दोनों पक्ष एक दूसरे को देखेंगे, हाथ पैर नचायेंगे, चारों तरफ घूमेंगे, इसके बाद कुछ देर विश्राम करेंगे और तब एक दूसरे का आक्रमण शुरू होगा। एक-एक करके दोनों को हारना पड़ेगा, पराजित पक्ष एक बार जब हार कर बैठ जायेगा, बस विजित पक्ष फिर उस पर आक्रमण नहीं करेगा, सिर्फ एक जगह खड़े-खड़े उसे गालियां सुनायेगा। इनके नाचों में सभी जगह एक ही पद्धति है, हरएक युद्ध एक ही तरह के ताल-लय के साथ चलता है, राम-रावण का युद्ध, बाली सुग्रीव का युद्ध, कौरव-पांडवों का युद्ध जरा-जरा से अन्तर के साथ एक ही तरह से चलते हैं, इनके नृत्य-नाटकों का जो कमजोर पक्ष है वह हमेशा बांई तरफ खड़ा रहेगा और बांई तरफ से ही प्रस्थान भी करेगा।

बाईं तरफ से प्रस्थान करने वाले पक्ष को ही दर्शक वृन्द हारा हुआ पक्ष समझ लेंगे और किसी पक्ष की मृत्यु होगी तो गायक उसकी सूचना देगा, यदि भागेगा तो भी गायक के मुख से ही उसका पता लगेगा।

यहाँ नर्तक या नर्तकी जितनी बार भी आयेगा, प्रत्येक बार दर्शकों की ओर मुख करके नमस्कार करेगा या करेगी। और ठीक इसी प्रकार जाते वक्त भी नमस्कार किया जायेगा।

बाली द्वीप के नृत्य नाटकों में विदूषक का स्थान सबसे ऊँचा है। नृत्य नाटक में यदि विदूषक नहीं तो वह नृत्यनाट्य सम्पूर्ण नहीं होगा। इनके नृत्य नाटकों में कुल चार पात्र रहेंगे। ये चारों आपस में एक जैसे न होंगे। विदूषकों की दैहिक क्रिया स्वभावतः ही हास्योत्पादक होती है! इनका अभिनय किसी खास नियम का न होगा, मौका देखकर ये लोग काम करेंगे। नृत्य नाटक की गम्भीर हवा को ये ही पात्र चञ्चल किये रहते हैं, इसीलिये इनका स्थान बड़ा प्रिय है।

जावा में इन विदूषकों के बारे में एक प्रकार की कहानी है कि ये शिवजी के चारण होते हैं। इसीलिए विदूषकों का यहां बड़ा सम्मान है।

इन देशों में 'गैमेलिन' संगीत गीत नृत्य का प्राण है। उनका ख्याल है यदि इस सङ्गीत को इसमें न बिठाया गया होता तो सभी कुछ व्यर्थ हो जाता। इस 'गैमेलिन' संगीत के साथ नृत्य का मिलन अत्यन्त मुग्ध कर होता है।

प्राचीन नृत्य-नाट्यों को ये लोग बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। जावा के रहने वाले सभी हैं तो धर्म से मुसलमान, किन्तु आचार-विचार से सभी हिन्दू जैसे हैं नृत्य को भी इन्होंने अभीतक नहीं छोड़ा है। उन लोगों के यहाँ रामायण महाभारत के भी जो नृत्य नाटक लिखे हुए हैं उन्होंने इसी तरह संभाल कर उन्हें रखा हुआ है जैसे धर्म ग्रन्थों को रखा जाता है।

यव द्वीप में नृत्य नाटकों की भाषा का नाम 'कवि' रखा हुआ है। उस भाषा का वहाँ की आधुनिक भाषा से बड़ा ही अन्तर है। उस भाषा में दस प्रतिशत संस्कृत के शब्द हैं।

इन दोनों देशों के नृत्यों में अच्छे बुरे दोनों प्रकार के नृत्य हैं किन्तु वे मन को आनन्द पहुँचाने वाले ही हैं। खास बात यह है कि यहाँ वाले नृत्य से धन उपार्जन की कामना नहीं रखते, हरेक नर-नारी नृत्य के शौकीन होते हैं और नृत्य जानते हैं।

ये पुस्तकें पौने मूल्य में !

(लेना चाहें तो इस पृष्ठ के पीछे १ कूपन है, उसे भरकर भेजिये)

१—सङ्गीत सागर-सङ्गीत का विशाल ग्रन्थ, दूसरी बार छप कर तैयार हुआ है, जिसका विज्ञापन आपने इसी पत्र में कईबार देखा होगा। मूल्य ४)

२—फिल्म सङ्गीत (प्रथम भाग)-७० फिल्मी गानों की स्वरलिपियां। मूल्य २)

३—फिल्म सङ्गीत (दूसरा भाग)-इस में ७२ फिल्मी गीतों की स्वरलिपियां हैं। मू० २)

४—रागदर्शन-६ तिरंगे चित्रों सहित राग भैरव और उसके परिवार की स्वरलिपियां। मू० ३)

५—म्यूज़िक मास्टर-बिना मास्टर के हारमोनियम, तबला और बांसुरी सिखाने वाली पुस्तक, जिसके ८ संस्करण होचुके हैं। मूल्य १)

६—गवैयों का मेला—तरह-तरह के चुने हुये ५०० गायनों का संग्रह। मूल्य १।)

७—गवैयों का जहाज-इसमें भी तबियत खुश करदेने वाले ४०० गाने हैं। मूल्य १)

८—पुष्प वाटिका-भजन, गज़ल, प्रार्थना, आरती, फिल्म गीत इत्यादि ४०४ मूल्य १)

९—महिला हारमोनियम गाइड-स्त्री व कन्याओं के लिये मनोहर गीतों सहित बाजा बजाना बताया गया है। मू० ।॥)

१०-रुक्मणि मङ्गल-राधेश्यामी तर्ज में समस्त रुक्मणि मङ्गल की कथा। मू० ॥)

११-गीता गायन-राधेश्यामी तर्ज में गीता की सरल कथा। मू० ॥)

१२-सङ्गीत सौरभ-(लेखक 'नीलूबाबू') ३२ प्रकार की राग-रागनियों का नोटेशन ताल तथा सरगमों सहित बड़े सुन्दर ढङ्ग से दिया है। मू० २)

१३-मृदङ्ग सागर-मृदङ्ग की बहुत सी परन और रेले चित्रों सहित दिये हैं। मू० ४)

१४-इङ्गलिश टीचर-प्रत्येक हिन्दी पढ़ा लिखा व्यक्ति इसके द्वारा बड़ी आसानी से अंग्रेजी का अभ्यास कर सकता है। मू० १)

१५-हुनर संग्रह-तेल, साबुन, एसेन्स, स्याही, वार्निश, दियासलाई, रंग-रोगन इत्यादि बहुत-सी आवश्यक चीजों के बनाने की विधि इस पुस्तक में दीगई है, इससे आप घर बैठे रोज़गार कर सकते हैं। मू० ।॥)

१६-मङ्गलामुखी-घोड़ी, बन्ना, सोहर, ज्यौनार, गाली, जनेऊ, भात, मांडवा, कङ्गन, मेंहदी, जच्चा इत्यादि अनेक उत्सवों पर गाने योग्य स्त्री गीतों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है, यह दो भागों में छपी हैं, दोनों भागों का मू० ।॥)

१७-केसर की क्यारी-(सम्पादक 'बिस्मिल' इलाहाबादी) उर्दू शायरी का आनन्द हिन्दी में लेना हो तो इससे अच्छी पुस्तक आपको कोई न मिलेगी। मू० ५)

पता—गर्ग एण्ड कम्पनी, (सङ्गीत-शाला) हाथरस यू० पी०।

कूपन

पौने मूल्य में पुस्तकें

मँगाने का सरल साधन

आप इस कूपन पर पुस्तकों के नाम लिखकर भेजदें। सावधान! इस कूपन के बिना भेजे पुस्तकें पौने मूल्य में नहीं भेजी जांयगी और यह कूपन केवल इसी अङ्क में लगाया गया है ताकि 'सङ्गीत' के ग्राहक ही इससे लाभ उठा सकें।

मैनेजर—गर्ग एण्ड कम्पनी (सङ्गीत शाला) हाथरस-यू० पी०

कृपया नीचे लिखी पुस्तकें पौने मूल्य में वी० पी० द्वारा भेज दीजिये। वी० पी० आते ही छुड़ाली जायगी।

पुस्तक का नाम	तादाद	पूरा मूल्य	पौन मूल्य
केसर की क्यारी	१	५)	३।॥)
जोड़	१	५)	३।॥)

मँगाने वाले का नाम और पूरा पता — ~~पुस्~~ कुलाध्यक्ष जी. गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार (यू. पी.)

नोट—इस कूपन के द्वारा पुस्तकें ही पौने मूल्य में मिल सकेंगी, संगीत की फाइलें या बांसुरी इत्यादि नहीं।

*

नोट कर लीजिये

सङ्गीत के इस विशेषांक में जनवरी और फरवरी के दोनों अङ्क शामिल हैं, अब आगामी अङ्क (मार्च का सङ्गीत) मार्च के प्रथम सप्ताह में प्रकाशित होगा। ग्राहक गण नोट करलें।

—सम्पादक
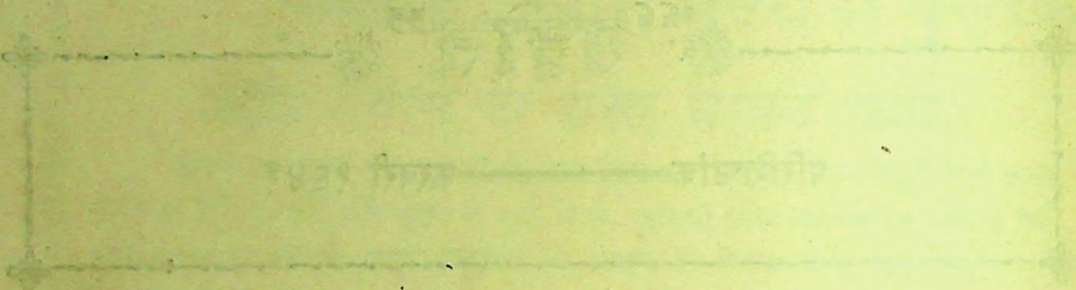
"गर्वा नृत्य" गुजराती देवियों का ख़ास नृत्य है, इसे रास नृत्य भी कहते हैं। इस नृत्य में शामिल होने वाली देवियाँ एक घेरा सा बनाकर नाचती हैं और ताल देती जाती हैं। बीच में १ स्त्री खड़ी हो जाती है। कहीं कहीं पर ऐसा भी होता है कि कुछ कलशे (घड़े) बीच में रख लिये जाते हैं और उनके चारों तरफ गोलाकार घेरा बनाकर नृत्य होता है। इसमें ताल हिंच का प्रयोग होता है जो कि ८ मात्रा की ताल है, यह कोई शास्त्रोक्त ताल नहीं, हिंच ताल के बोलों के लिये भिन्न भिन्न प्रथा है, कहरवा की ताल में कुछ उलट फेर करके खाली और भरी का ध्यान रखकर भी काम चलाया जा सकता है।

राग मिश्र मांढ ◎ ताल हिंच और तिताला

(स्वरलिपिकार— मास्टर धीरजलाल के० जोशी०)

—:—

❋ गीत ❋

चन्द्रनो प्रकाश म्हारा आंगणा दिपावतो।
सजनी संगाथ रुड़ो, रास रंग जामतो॥
चांदनी रुपेड़ी रुड़ी, शोभति शी चोक मां।
रास रंग रेलती, साहेली सर्व साथमां॥ चन्द्रनो०............॥
चालती संगाथ पड़े ताली केरो ताल बेन घुंघरीनां सुरसंग बागता,
उरमां आनन्द सखी ना समाय ने गवाय सुमधुर सुर साथ गूंजता।
अनिल मन्द-मन्द सखी, ठंडी लहर अर्पतो॥ सजनी संगाथ......॥
नभमां रुड़ो चन्द्रमा, तारलिया संगाथ।
शोभे रजनी शी रुड़ी आनन्द उर न समाय॥
ईशनी कृती अपार अजब शक्ति प गणाय।
उर हर्ष थी भराय, प्रेम थी नमूं—नमूं॥ चन्द्रनो०............॥

(उपरोक्त गीत का भाव—)

मेरे आंगन में चन्द्रमा का प्रकाश दीपायमान हो रहा है, साथ में सहेलियां हैं, और सुन्दर मनहर रास-रंग जमा हुआ है।

रुपहली चांदनी मेरे चौक में शोभा को प्राप्त हो रही है; सब सहेलियां साथ-साथ रास-रंग मना रही हैं। साथ-साथ ताल-बद्ध गति से चलती हुई तालियां देती जाती हैं, साथ ही उनके पैरों के घूंघरू भी मीठे स्वरों में बोल रहे हैं। हे सखी! इस छोटे से हृदय में यह अपार आनन्द समाता भी नहीं, उन स्वरों की गुञ्जार बड़ी प्यारी मालुम देती है।

शीतल वायु ठंडी लहरों से टकराती हुई आरही है, आकाश में सुन्दर चन्द्रमा तारागणों के साथ रजनी की शोभा बढ़ा रहे हैं। हे सखी! यह अपार आनन्द हृदय में नहीं समाता।

ईश्वर की माया अपार है, उसकी अनुपम शक्ति से ही यह सब कुछ हो रहा है। प्रफुल्लित हृदय के साथ प्रेम-पूर्वक मैं उसे नमस्कार करती हूं।

+				०				+				०			
सं	सं	सं	सं	सं	न	सं	न	ध	प	ग	प	म	ग	र	स
च	ऽ	न्द्र	नो	प्र	का	ऽ	श	म्हा	रा	आं	ऽ	ग	णां	ऽ	दि
र	ग	स	स	गम	पध	नरं	सं-	सं	सं	सं	सं	सं	न	सं	न
पा.	ऽ	व	तो	*	*	*	*	च	ऽ	न्द्र	नो	प्र	का	ऽ	श
ध	प	ग	प	म	ग	र	स	र	ग	स	स	ध़	ध़	स-	सर
म्हा	रा	आं	ऽ	ग	णा	ऽ	दि	पा	ऽ	व	तो	स	ज	नीऽ	संऽ
ग	म	पध	-	धरं	सं	नध'	प	ध	न	प	-	गम	पध	न॒ध	प-
गा	थ	रुड़ो	ऽ	राऽ	स	रंऽ	ग	जा	म	तो	ऽ	*	*	*	*
ध	-	ध	प	म	ग	प	म	ग	र	-	स	र	स	गप	म
चां	ऽ	द	नी	रु	पे	ऽ	री	रु	ड़ी	ऽ	शो	ऽ	भ	ती	शी

ग	र	ग	स	ध़ऩ	सर	गप	म-	ध़	स	स	ग	-	म	प	प
चौ	ऽ	क	मा	*	*	*	*	रा	ऽ	स	रं	ऽ	ग	खे	ल
ध	-	ध	-	प	ध	प	ध	रं	सं	न	ध	न	प	-	-
ती	ऽ	सा	ऽ	हे	ऽ	लो	ऽ	स	र्व	सा	ऽ	थ	मां	ऽ	ऽ

त्रिताल द्रुतलय (मात्रा १३ वीं से शुरू करना)

३				+				२				०			
स	स	स	र	ग	म	प	ध	प	प	ध	प	ग	र	प	प
चा	ल	ती	सं	गा	थ	प	ड़े	ता	ली	के	रो	ता	ल	बे	न
ग	म	ग	र	र	र	र	स	र	-	ग	स	र	-	ग	स
घूं	घ	री	ना	सु	र	सं	ग	वा	ऽ	ग	ता	*	*	*	*
स	स	स	र	ग	म	प	ध	प	प	ध	प	ग	र	प	प
उ	र	मां	आ	नं	द	स	खी	ना	स	मा	य	ने	ग	वा	य
प	म	ग	र	र	र	स	स	र	-	ग	स	र	-	ग	स
सु	म	धु	र	सु	र	सा	थ	गूं	ऽ	ज	ता	*	*	*	*

सर गम पध नसं * * * *	इस प्रकार सम पर आकर असली ठेके में मिल जाइये।

ताल–कहरवा या हिंच—

+				०				+				०			
सं	सं	सं	सं	-	सं	नसं	न	ध	प	ध	ग	प	म	गर	स
अ	नि	ल	मं	ऽ	द	मंऽ	द	स	खी	ऽ	ठं	ऽ	डी	ल्हे	र

र ग स -	
अं ऽ तो	सजनी संगाथ........।

साखी— इसमें ताल नहीं लगेगी सिर्फ खूबसूरती के लिये बोल हैं।

धृ	स	ग	म	प	-	ध	-	न	-	न	न	धप	ग	म	ग	रस
न	भ	मां	ऽ	रू	ऽ	ड़ो	ऽ	च	ऽ	न्द्र	मा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

स	-	ग	म	प	ध	रं	सं	सं	प	ध	-	-	म	प	-	-	ग	म	ग	र	स
ता	ऽ	र	लि	या	सं	ऽ	गा	थ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

स	-	ग	म	प	प	ध	-	-	-	न	-	न	न	धप	-	-	ग	म	ग	र	स
शो	ऽ	भे	ऽ	र	ज	नी	ऽ	ऽ	ऽ	शी	ऽ	रु	डी	आ	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

स	-	ग	म	प	ध	न	रं	सं	-	सं	गम	पध	नसं	धन	सं	-	-	-
आ	ऽ	नं	द	उ	र	न	स	मा	ऽ	य	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

—ताल हिंच—

+				०				+				०			
स	स	ग	म	प	ध	ध	-	ध	प	ध	प	नध	प	ग	म
ई	श	नी	कृ	ती	अ	पा	ऽ	र	अ	ज	ब	शऽ	क्ति	प	ऽ
र	ग	म	ध	सं	-	सं	ध	-	प	ग	-	म	र	-	र
ग	णा	ऽ	य	उ	ऽ	र	ह	ऽ	र्ष	थी	ऽ	भ	रा	ऽ	य
प	-	म	ग	स	र	धृ	स								
प्रे	ऽ	म	थी	न	मूं	न	मूं	चन्द्र नो..............							

—०—

भारतीय नृत्य में 'बैले' या नाट्य और भावाभिव्यक्ति

(लेखिका—श्री० पपीयादेवी, अनुवादक श्री० "रुद्र")

'बैले' की परिभाषा ।

तदनुरूप सङ्गीत अथवा गीत द्वारा पौराणिक तथा साहित्यिक कथाएं और भावों के मूल अभिनय को 'बैले' कहते हैं। 'बैले' की रचनायें एक दृश्य में हों या अनेकों में, ऐसे हों जिससे पूरी कथा का समावेश होजाय। कहानी का वर्णन करने के लिये गीतों को या तो एक व्यक्ति गाता है या ध्रुवक (कोरस) में गाया जाता है यदि आरकेस्ट्रल सङ्गीत (Orchestral music) द्वारा यह गाये जाँय तो सङ्गीत को नृत्य का ही भाव प्रभाव, और उमङ्ग उत्पन्न करनी चाहिये। 'अर्नाल्ड हैसकल्' अपनी संग्रह 'बैले' में इसकी परिभाषा करने में सफलीभूत नहीं हुये। एक भारतीय, जिसके लिये यह शब्द विदेशी है, इसका वास्तविक महत्व समझने में पूर्ण असमर्थ है। इसके मध्य में रहते हुये भी वह सदा अन्धकार में टटोलता ही रहता है।

इसका जन्म स्थान ।

'बैले' रूप के नृत्य का जन्म स्थान निर्भयता पूर्वक मध्य एशिया निर्दिष्ट किया जा सकता है। 'बैले' एशिया की वस्तु है और अपनी उत्पत्ति के लिये (Kiev) 'कीव' के नृत्यों का आभारी है। इन नृत्यों पर बाद के धार्मिक नृत्यों की गहरी छाप पड़ी है। मध्य एशिया प्राचीन, बौद्धिक संस्कृति का क्षेत्र था और 'स्वर्ण समुदायी' मङ्गोलों ने कलात्मक और सांस्कृतिक ज्ञान प्राप्त किया था।

हमें नृत्य के इस रूप के विकास और इतिहास पर विस्तार पूर्वक विवाद करने की आवश्यकता नहीं, और न तो यही देखना है कि पश्चिम में इसका उत्थान कैसे हुआ। क्योंकि यह प्रस्तुत प्रसङ्ग की परिधि के परे है, फिर भी प्रसङ्ग वश, निपुण नर्तकों द्वारा जो इस विभाग में दैवीगुण रखते थे, लाये हुये वृहत् परिवर्तनों का निरीक्षण करना ही चाहिये। इससे एक लाभ है। हमें अपने देश में प्रचलित स्वदेशीय 'बैले' के रूप को समझने में सुगमता मिलेगी।

'बैले' का इतिहास ।

इतिहास के सर्व प्रथम आधुनिक 'बैले' का प्रदर्शन 'टारटोना' में बार ग्रोन्ज़ओंड़े बोट्टा' ने 'मिलन' के ड्यूक के विवाहोत्सव में सन् १४८६ ई० में किया। नृत्य के अन्य रूपों की भाँति 'बैले' का भी परिपूरण और परिशिष्टन फ्रांस ही में हुआ। इसका, नृत्य मंच के इतिहास से घनिष्ट सम्बन्ध है, परन्तु इङ्गलैंड में इसका आगमन नृत्य-मंच के आने के बहुत दिन बाद हुआ, क्योंकि इसका प्रचार वहां अठारहवीं शताब्दी तक न हुआ था।

सर्व प्रथम् 'बैले' शब्द का अंग्रेजी भाषा में प्रयोग 'ड्राइडन' ने १६६७ में किया और 'तैवर्न बिल्कर्स' लन्दन का प्रथम वर्णनात्मक 'बैले' है जिसका अभिनय 'ड्र्यूरी लेन' में सन् १७०२ में हुआ।

केवल रूस में ही (विशेष कर सेराट पीट्सबर्ग और मास्को के राजसी नृत्य-शालाओं में) इस प्राचीन कला की महान् परम्परा का संरक्षण सावधानी से किया गया है।

इज़ाडोरा डंकन।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भकाल में 'इज़ाडोरा डङ्कन' नाम की अमरीकन ने अमरीका में कला और साहित्य के पुनुरुत्थान का एक महानयुग उपस्थित कर दिया। उसने एक क्रान्ति मचादी। वह जो अपना प्रेषण और कोष-राशि संसार के लिये छोड़ गई है, उसके लिये सभी प्राणी उसका नाम सदैव स्मरण करेंगे। फिर भी 'आरनॉल्ड हैस्कल' ने उसके साथ पक्षपात पूर्ण व्यवहार किया और उसको उचित और आदरणीय स्थान नहीं दिया। 'इज़ाडोरा डङ्कन' के 'बैले' के नूतन आकृति में, कवच, गद्दीदार जूते और भड़कोले लहँगों का स्थान नग्न-पद, और कलापूर्ण महीन झल्लरदार ढीले चोंगों ने ले लिया। उसमें नृत्य नहीं होता था, वरन् 'चॉपिन', 'ग्लक' और समान प्रसिद्ध वाले आचार्यों की रचनाओं में से सावधानी पूर्वक चुने हुये सङ्गीतों के साथ एक ग्रीकमुद्रा से दूसरी ग्रीक मुद्रा का राजसी गति से अभिनय होता था। इनमें शान्ति और स्वाभाविकता का बातावरण छाया रहता। कुमारी डङ्कन का गठन कलात्मक, कोमल, अनुनेय और सुनम्य था। उनको, अनुपात, समतुलन, और छन्द का ज्ञान था, इसीसे उनको प्रथम श्रेणी की नर्तकियों की प्रसिद्धि प्राप्त होगई। उन्होंने एक विस्तृत पर्यटन किया और अपने भाई की सहायता से ग्रीक और रोम की मूर्तियों का विवेचनात्मक दृष्टि से पूर्ण विशिष्ट निरीक्षण किया।

भारत में।

नृत्य के इस रूप का विकास भारत में अज्ञानता ही में हुआ। इसका उत्थान पश्चिमीय नमूने की प्रणाली और बनावट से कुछ अन्शों में भिन्न था। हम लोगों के आदिकालीन कथकलि, मनीपूरी और चाऊ में 'बैले' हैं। न जाने कब से ये स्वदेशीय नमूने रामायण, महाभारत और पुराणों की कथाओं के अभिनय का अभ्यास करते आये हैं। भिन्न भिन्न स्कूलों की विशेषतायें, व्यवहार और नियम अपने अपने हैं।

भारत के 'बैले' का प्रदर्शन पश्चिम में प्रथम महाद्वीपीय नर्तकी 'रुथ सेन्ट डेनिस' ने किया। इसका अनुकरण 'अनापावलोवा' ने किया। इसने 'शङ्कर' के संसर्ग से राधा और कृष्ण के मूक अभिनय में भारतीय 'बैले' की प्रख्याति संसार की दृष्टि में अमर करदी।

पूर्वीय और पश्चिमीय अन्तर।

पूर्वीय और पश्चिमीय ढङ्ग के 'बैले' में एक मुख्य अन्तर यह है कि पूर्वोक्त का कथानक पुराणों से लिया जाता है, किन्तु पश्चिमीय प्रणाली में हमें बहुधा एवं साधारणतया बाइबिल की कथाएँ नहीं मिलतीं। 'कथकलि' रामायण, महाभारत और पुराणों

की कथाओं पर ध्यान देती है और इन्हीं महाकाव्यों के पात्रों का अभिनय करती हैं। इसके विपरीत, हम सामन्यता पश्चिमीय नाट्यों में 'महात्मा ईसा' या 'कुमारी मैरियम' का चरित्र चित्रण नहीं पाते। कभी कभी 'जॉब' इत्यादि पात्रों का अभिनय होजाता है।

आधुनिक नर्तकों के हाथ में 'बैले'

आधुनिक भारतीय नर्तकों ने प्राचीन भारतीय 'बैले' का विकास पश्चिमीय प्रकाश में किया। विशेष करके उदयशंकर ने 'शंकरी' मुद्राओं से महान् 'डंकन' की भांति नाट्य संस्कृति में एक नई लहर उठा दी। इनके 'बैले' पौराणिक तथा साहित्यिक हैं। यही दशा दूसरे नर्तकों की है। टैगोर पाठशाला वाले अधिकतर 'चेकमेट' जैसे साहित्यक 'बैले' का प्रयत्न करते हैं। अन्य आधुनिक नर्तक इस्लामीय कथाओं के अभिनय की चेष्टा करते हैं।

'गिज़ले'

श्रीमती 'साधना बोस' का 'उमर खय्याम' पश्चिमीय 'गिज़ले' के टक्कर का है। 'गिज़ले' का विषय प्रसंग यों है—युवतियाँ जो विवाह के पहले मर जाती हैं और जो रात्रि में कब्रों से निकल कर वैवाहिक परिधान धारण किये प्रातःकाल के पूर्व तक नृत्य करती हैं। यदि कोई मनुष्य इन युवतियों के नाचते समय जंगल में पकड़ा जाता है तो उसे निरन्तर नृत्य करने के लिये बाध्य किया जाता है। तदन्तर उसे नाचते नाचते श्रान्त होकर शारीरान्त कर देना पड़ता है। 'हेन' की 'डेलॉ एलीमैगने' का पुनरव लोकन करते समय 'थियोफाइल गॉशियर' युवतियों की इस अपूर्व कथा पर मुग्ध हो गया। उसको 'बैले' के लिये यह कथानक अनूप प्रतीत हुआ। सुन्दर कुमारियों का शृंगारी विषय—श्वेत रेशमी परिधान—जर्मनी की ज्योत्सना सभी अनुपम और अद्भुत थे।

नवीन भारतीय 'बैले'

थोड़े ही दिन हुए शंकर ने राजनैतिक विषय पर नाट्य-सृजन से हलचल सी मचादी है। ये रचनायें भारतीय 'बैले' के इतिहास में बिलकुल नई हैं। उनका नूतन निर्माण 'रिद्म आफ लाइफ़' (जीवन के छंद) भारतीय राजनैतिक विधान की समस्या का परिणाम है। इसका वर्णन बड़ी सावधानी और कूटनीति से किया गया है। यह केवल भिन्न भिन्न सम्प्रदाय और समुदायों की स्थिति, अवस्था और दशा काही प्रदर्शन नहीं करता-वरन् इसमें एक आदर्श छिपा रहता है जिससे इसकी गणना विश्व की अत्युत्तम नाट्य रचनाओं में होती है।

इसका कथानक बड़ा रोचक है। एक युवक नागरिक जीवन का पर्याप्त अनुभव प्राप्त करने के उपरान्त अपने गाँव को लौटता है। वह ग्राम के निष्कपट निवासियों की तुलना नगर में छाई हुई अधमता से करता है और व्यथित हो उठता है। वह स्वप्न में शंकर, अप्सरायें, पवित्र सैनिक, एक युवती और संसार की सब दुष्ट शक्तियों को देखता है। ये शक्तियां उसे सान्त्वना देती हैं और बहकाती हैं। इसके उपरान्त

वह किसानों के साथ नृत्य करता है और सत्व एवं देश के लिये अपने प्राण तक देदेने को प्रस्तुत हो जाता है। तब वह महान्-आत्मा के सम्मुख आता है। वह महान्-आत्मा कृषकों के कष्टों को कम करने की प्रतिज्ञा करती है वह राजनैतिक संग्राम में नारियों की जागृति उनके साहस और त्याग का अवलोकन करता है, साथ ही साथ इसके विपरीति अन्य जनों में ढोंग पाखण्ड, अस्वाभाविक सर्व प्रियता और असत्यता का भी अनुभव करता है। किन्तु उसको विश्वास है कि देश की रक्षा के लिये देश-भक्त आरहे हैं। यद्यपि अन्त में चारों ओर गोलमाल और गड़बड़ी छा जाती है फिर भी आशा की एक रेखा शेष रहजाती है। और सामने सारी समस्या बिना सुलझी पड़ी रहती है।

ग्रीन टेबुल

यह 'बैले' कुछ अंशों में राजनैतिक 'बैले' 'ग्रीनटेबुल' के ढंग की है, जो रूसी परम्परा से परे एक महान् कृति है, क्योंकि यह प्रमुख उत्कृष्टता की रचना है। यह 'लीग आफ़ नेशन्स' की असफलता का भारी कलङ्क है। अन्तर राष्ट्रीय सम्मेलन होता है और परदा उठता है। सठियाने सेनेट के सदस्य बकझक करते हैं, लड़ते हैं, झग-ड़ते हैं, एक दूसरे पर गोलियाँ चलाते हैं। इसके बाद मौत के आ धमकने पर क्या होता है दिखलाया जाता है। प्रथम अङ्क, अनर्थक बातचीत, वाद विवाद और गोलियाँ चलने की पुनुरुक्ति होकर यवनिका गिरती है, अपने रचना काल ही से 'ग्रीन टेबुल' दिन पर दिन अधिक प्रसंग का विषय होगया है।

श्रम और कल-यंत्र पर 'बैले'

हम लोग शीघ्र ही, शंकर द्वारा 'श्रम और कल-यंत्र' पर नव-सृजित 'बैले' के देखने की प्रसन्नता प्राप्त करने वाले हैं। यह रचना भारतीय नाट्य की नूतनता के उत्थान की एक दूसरी सीढ़ी है। यद्यपि यह आचार्यों की कृतियाँ हैं, फिर भी इनमें पश्चिमीय रंग और भाव विद्यमान हैं। किन्तु यदि इस अभ्यास का क्रम लगा रहेगा तो हम निश्चय पश्चिम की नाट्य रचनाओं से होड़ लेने लगेंगे, और यह असम्भव नहीं कि भविष्य में भारतीय 'बैले' सौन्दर्य भाव और नवीनता में और भी अधिक कलापूर्ण और उत्कृष्ट हो जायें।

—*—

*	ग	स	स	*	सं	ध	ध	*	सं	ध	ध	*	सं	ध	सं
*	मा	ऽ	या	*	*	*	*	*	दे	ऽ	खे	*	*	*	*
*	प	म	म	म	प	प	म	ध	म	म	म	म	ध	ध	-
*	मा	ऽ	या	ने	ऽ	है	ऽ	रुवां	ऽ	ग	ब	ना	ऽ	या	ऽ
रं	गं	रं	मं	गं	-	सं	-	सं	ध	ध	-	म	-	ध	-
अ	ज	ब	खि	ला	ऽ	ड़ी	ऽ	है	ऽ	ये	ऽ	मा	ऽ	या	ऽ
सं	सं	सं	सं	सं	रं	सं	सं	सं	-	ध	ध	म	-	ध	-
जि	स	ने	ये	अ	द	भु	त	खे	ऽ	ल	र	चा	ऽ	या	ऽ
ग	म	प	ध	न	सं	न	सं								
त	न	न	न	न	न	न	न	नाच रही है.............।							

—o—

उत्साह-नृत्य

(लेखक—श्री० प्रजेश बनर्जी)

(अनुवादक श्री० 'रुद्र')

> इस लेख में 'ओरियन्टल' ढङ्ग की एक पूरी नृत्य रचना दी गई है, विद्वान लेखक ने बड़े परिश्रम से ओरियन्टल डान्स का पूरा 'टेकनीक' इसमें भरदिया है। —सम्पादक

यह नृत्य रचना 'आनन्द' के उद्गारों का अभिनय करती है। किन्तु यह 'आनंद' सांसारिक सुखों और इच्छाओं की तृप्ति द्वारा उमड़ते हुये तुच्छ मनोवेगों से कहीं ऊपर है। यह शरीर की निकृष्ट उमङ्गों का हाव भाव नहीं करती वरन् उस सर्वोच्च हुलास विलास का चित्रण करती है जिसके बिना स्वर्गीय कला का मुख्य अङ्ग अधूरा ही रहजाता है। यह विषय, संसार में रहते हुये भी संसार से बहुत आगे सबसे बड़ा ध्येय आत्म-ज्ञान के खोज लेने वाली मानव की अमर अभिलाषा का प्रदर्शन करता है, और इस ध्येय की प्राप्ति ईश्वरीय आनन्द के पथ को पार कर लेने पर होजाती है।

यह लड़कियों का नृत्य है पाँव का सञ्चालन 'कहरवा' में होना चाहिये और सङ्गीत 'मिश्र भैरवी' है। संचालन बायें पाँव से प्रारम्भ होता है।

अपना पाँव पृथ्वी पर ठोंको। यह १, २, ३, ४, ५–६– में होना चाहिये। दो पड़ी लकीरें एक ५ के बाद दूसरी ६ के बाद। इससे आठों मात्रा पूरी होजाती हैं। कहरवा में ८ मात्रा होती हैं। आठों 'मात्रा' की पूर्ति के लिये ५ और ६ पर एक-एक मात्रा का विश्राम लेना पड़ेगा। संचालन यों हो:—

बांया, दांया, बांया, दांया, दांया, दांया। दाहिने पांव की दो अन्तिम ठुमकी अङ्क ५ पर होंगी, दाहिने पाँव को आगे बढ़ाइये और बांई एड़ी को ठुमुकिये और ६ पर पांव को बांये पैर के पीछे ठीक उसी पथ से लौटाकर अंगूठे से ठोंक मारिए।

स्वरों की पहली लाइन का नोटेशन निम्नलिखित है:—

स	–	प	प	प	–	प	म	प	सं	न	ध	प	म	ध	प
ग	स	–	ग	म	प	ध	प	म	ग	प	म		र		न

अब स्टेज पर बाईं ओर से आइये। मोह द्वारा लुभाने के लिये घुसते समय मंच पर चार चक्कर करने होंगे। यदि मात्राओं को गिनिये तो मालूम होगा कि पहली

लचक में ३२ मात्राएं हैं और यदि उनको चार भागों में बांट दीजिये तो हर एक में आठ मात्रायें होंगी। अतः ८ मात्रा में या १, २, ३, ४, ५–, ६–, में एक पूरा चक्कर लगाना होगा। अब लहर मार कर एक चक्कर कीजिये, और अपने पाँव को पूर्वोक्त गत के साथ ठोंकिये और ठुमुकिये। १, २, ३, ४ में या, बायें दायें बायें, दायें, में, एक चक्कर लगाइये और जब दर्शकों के सामने आइये तो ५–, ६– पर आना होगा।

चेहरे का भाव प्रसन्नमय होगा। ध्यान देकर हाथ और बदन के संचालन को देखिये। पहले दाहिनी ओर हथेलियाँ और उङ्गलियां सटाकर दोनों हाथ फैलाइये, आपके हाथ दाहिनी ओर लहराते हुए जायँ, कंधे और अंगुलियों की छोर तक के अङ्ग के प्रत्येक अवयव में से लहरें उठती रहें। पूर्वीय नृत्य में गति के प्रत्येक परिवर्तन के साथ यह लहराती चाल होगी। दाहिनी ओर से हाथों को नीचे की ओर से एक अर्द्ध वृताकार बनाते हुए उठाइये और तब उनको बाईं ओर ऊपर ले जाइये। इसके बाद दोनों हाथ भी सिरके ऊपर ले जाइये। देह आप से आप कमर की ओर से झुकते हुए आगे की ओर झुक जाय, और सर को आगे घुमा दीजिये। यह सब चार मात्रा अर्थात् १, २, ३, ४, में हो जाय और तब शेष चार मात्राओं में यानी ५–, ६–, में शरीर की स्थिति एक दम सीधी होगी। दोनों हाथ ऊपर होंगे हथेलियाँ सर के ऊपर मुरकती हुई कलाइयों के साथ होंगी, बाईं हथेली बाईं ओर मुरकी होगी और दाहिनी, दाहिनी ओर। अंगूठे फैले हुए होंगे। (देखिये चित्र नं० १)

इसी तरह से बाईं ओर को बढ़ते हुए इसको तीन बार और करना होगा जिससे संगीत की प्रथम गति और ३२ मात्रा पूरी उतर जायें।

सङ्गीत की प्रथम गति फिर बजाई जायगी और संचालन ऐसे होगा। पाख का सामना करते हुये बाईं ओर को नाचिये ताकि दर्शकों को अर्द्धमुख दृष्टिगोचर हो।

पांव का संचालन पहले की तरह रहेगा और इसे आद्योपान्त जारी रखिये। दोनों हाथ नीचे को ओर सामने लहराते हुये लेआइये। यह प्रथम चार मात्राओं में होना चाहिये, शेष दो में दाहिनी ओर दोनों हाथों को फैलाइये, दाहिनी बाहु पृथ्वी के समान अन्तर हो और हथेली कलाई से नीचे की ओर झुकती हुई हो, बांया हाथ कन्धे से कुहनी तक नीचे की ओर नोंकदार झुका हो; और कुहनी से कलाई तक (बांया हाथ) दाहिनी ओर मुड़ा हो, (लेकिन सीने से दूर उसको बिना छुए हुए) हथेली कलाई से मुड़ती हुई ऊपर की ओर हो, अङ्गुलियां सटी हुई ऊपर की ओर नोंक बनाये हों।

सिर को दाहिनी ओर झुकाओ और चेहरे को भी दाहिनी ओर झुकाओ और देह अर्द्ध-चन्द्रकार की तरह झुकती हुई हो, चित्र नं० २ में दिखाया गया है यदि यह बांये पाख से देखा जाय (आडोटोरियम से नहीं) तो दर्शकों को पार्श्व दृश्य मिलेगा।

इसके उपरांत उत्तरगामी आठ मात्राओं में बांई ओर की अवस्था से घूम जाइये। और दाहिने पार्श्व की ओर उसी पाख को देखते हुये, दर्शकों की ओर अर्द्धमुखी मुद्रा से चले आइये। संचालन पहिली तरह हो। अब दर्शकों को उलटी मुद्रा दिखाई पड़ेगी, लेकिन वास्तव में मुद्रा वही है। यह पहले बांई पाख की ओर किया जाता था लेकिन अब दाहिनी ही ओर होता है। शेष १६ मात्राओं की पूर्त्ति के लिये आपको कुल दोहरा देना पड़ेगा।

उत्साह नृत्य
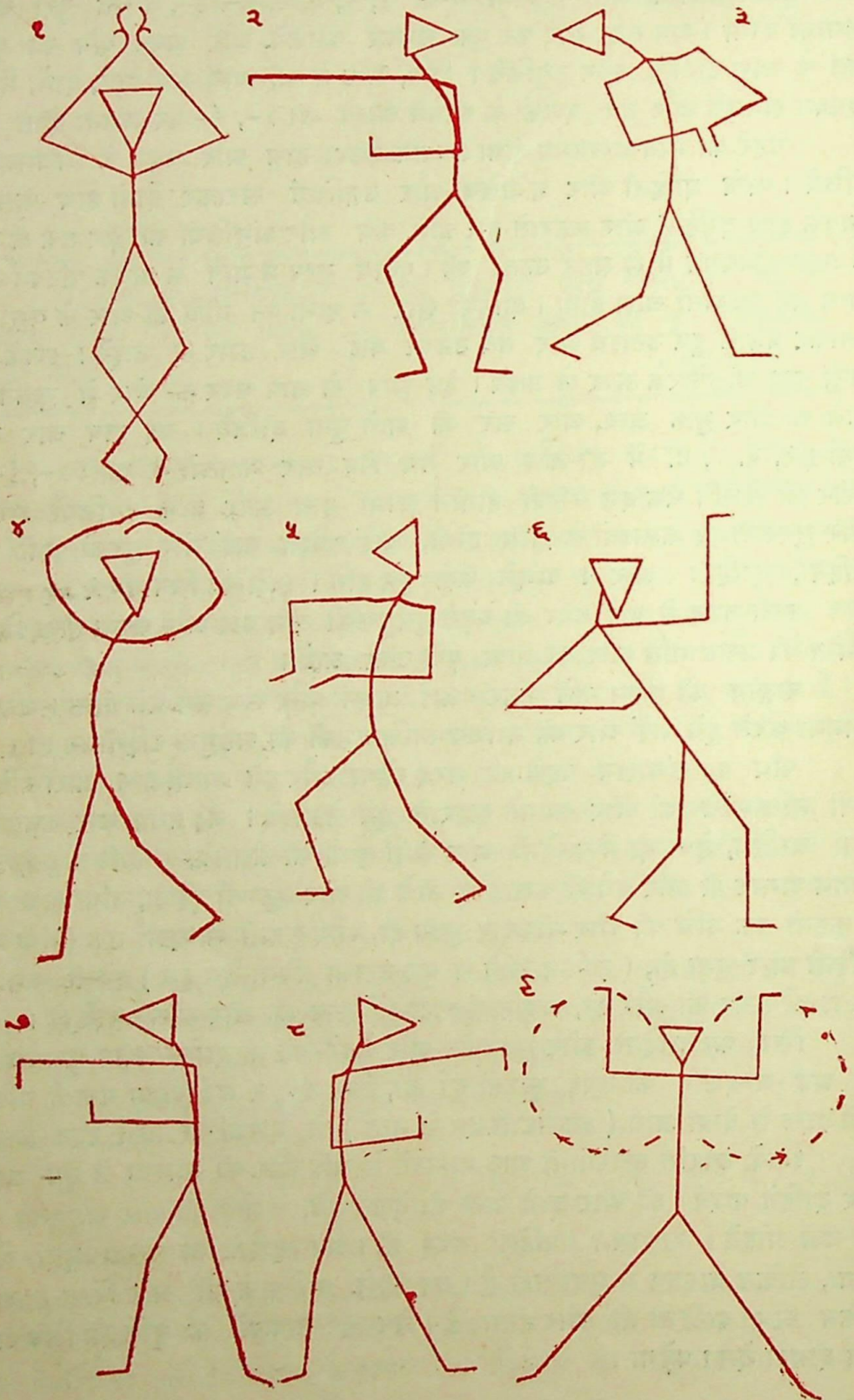
कृपया उत्तरगामी संगीत पर ध्यान दीजिये।

स	-	सं	-	-	-	-	-	ध़	प	म	ग़	र	स	ऩ	स
स	-	प	-	-	-	-	-	ध़	प	म	ग़	र	स	ऩ	स

इस गत के सा और पा निकालने के लिये जो कि ६-६ मात्राओं में हैं संगीत को आगे न बढ़ाइये, वरन् तारों को तानियें और यकायक छोड़ दीजिये। तबले की सहायता से ६ मात्रा पूरी कर लीजिये और आरकेस्ट्रा शुरू करादीजिये।

अब ऊपर दिये हुए ६ मात्राओं के साथ 'सां' पर आने के लिये निम्नलिखित मुद्रा से अकस्मात् रुक जाइये, और जब तक ६ मात्रा पूरी न हो जाय चुप चाप रुके रहिये। यहां अपने पावों को न ठुमकिये। चित्र नं० ३ में मुद्रा दिखाई गई है। यह केवल रेखा चित्र है और 'आडीटोरियम' से पार्श्व-दृश्य मिलता है। दाहिनो ओर को थोड़ा मुड़ते हुए, और दाहिने पांव को दाहिनी ओर बढ़ाते हुए, पेड़ी उठाइये दाहिने पांव पर सारे शरीर का भार रखकर अपने शरीर को अर्ध चन्द्राकार बनाइये। मुँह दाहिनी ओर झुका रहना चाहिये।

बायें हाथ को कंधे से कुहनी तक बाईं ओर घुमाओ, पृथ्वी के समानान्तर रक्खो और बाईं बांह को कुहनी से कलाई तक थोड़ा नीचे की ओर झुकाओ, लेकिन यह झुकाव देह की ओर हो। हाथ की उंगलियां फैली हों और उनकी नोक पृथ्वी की ओर हो, हथेली का सन्मुख भाग देह की ओर हो। दाहिना हाथ यों होना चाहियेः-कंधे से कुहनी तक का भाग पृथ्वी के समानान्तर हो और कुहनी से कलाई तक वाला भाग बाईं ओर होना चाहिये, लेकिन शरीर को छूता न रहे, दाहिनी हथेली भी बाईं के बिल्कुल पास रहे, परन्तु छूती न रहे। दाहिनी हथेली बाईं के आमने सामने हो, उंगलियां सटी हुई नीचे की ओर झुकी हों। इतना आठ मात्रा के अन्दर होना चाहिये।

अब दूसरी आठ मात्राओं के साथ गति का अवलोकन कीजिये। यहां पावों को वैसेही ठुमकिये जैसे पहले करते आयेंहैं। उस मुद्रा से दोनों हाथ बाहर निकालिये, हाथों को लहराते हुए ऊपर फैलाइये, तब दोनों हाथों को चेहरे के सामने से नीचे ले जाइये, फिर दाहिना हाथ दाहिनी ओर बायां हाथ बाईं ओर ले जाकर दोनों हाथों को चौड़ाई में फैलाइये, तब फिर नीचे और सर के ऊपर ले जाइये।

अन्य आठ मात्राओं के साथ एकाएक 'पा' पर रुक जाइये, जिस पर ६ मात्रा के निशान हैं। इस समय की मुद्रा को चित्र नं० ४ में देखिये, चित्र का वर्णन नीचे दिया जाता है:—

यहां पायों को ठुमकिये। दर्शकों की ओर देखना बन्द कर दीजिये। अपने दोनों अंगूठों पर बाईं ओर जितना झुकते बने झुकते जाइये, दाहिना पांव पीछे होना चाहिये। मुँह को सामने रखिये। हाथ सिर के ऊपर हों, लेकिन सिर से अलग हों और छूते न रहें और दोनों हथेलियां एक दूसरे को छूती रहें। उंगलियां बाहर को फैली हों, और एक

हाथ की उंगलियां दूसरी पर पड़ी हों। दाहिनी हथेली का सन्मुख भाग ऊपर की ओर हो और बाईं हथेली का नीचे की ओर।

शेष संगीत से (अर्थात् वही संगीत दो बार और गाया जायगा और 'सा' और 'पा' के साथ आठ मात्राएं पूरी की जायंगी) आपको रुकना पड़ेगा और नीचे दिये हुए मुद्रा में, दूसरी आठ मात्राओं के साथ उसी संचालन का अभिनय होगा जैसा ऊपर वर्णन किया गया है वह मुद्रा चित्र नं० ५ में दिखाई गई है जो निम्नलिखित है।

बाईं ओर देखिये। शरीर बाईं ओर झुका हो। बायें पैर पर शरीर का भार हो और बाईं एड़ी पर खड़े होइये। दायां पांव दाहिनी ओर बढ़ा हो और घुटनों से झुका हुआ हो। कांख से कुहनों तक दाहिना हाथ पृथ्वी के समानान्तर दाहिनी ओर फैला हो। कुहनों से कलाई तक का भाग पृथ्वी के समानान्तर हो। हथेली पृथ्वी को देख रही हो, उंगलियां सटी हों और दाहिनी ओर फैली हों। कांख से कुहनों तक का बायां हाथ पृथ्वी के समानान्तर, कुहनों से कलाई तक, पृथ्वी के समानान्तर शरीर से अलग दाईं ओर होना चाहिये। बाईं हथेली का सामना बाहर की ओर उंगलियां एक दूसरे से मिली हुई नीचे को झुकी हों।

तब फिर वही संचालन और 'सा' 'पा' पर क्रमशः (दो और छः मात्राओं के निशान के साथ) विराम आता है। इसकी मुद्रा का नमूना चित्र नं० ६ में दिखाया गया है इसका वर्णन नीचे दिया जाता है।

यह शक्ल अर्द्धमुखी है और इसका पार्श्व-दृश्य जनता की ओर है। चेहरा सामने, देह पीछे को झुकी हुई, बायां पांव आगे बढ़ा हुआ और घुटने के पास मुड़ा हुआ। दायाँ पांव बायें पांव के पीछे हो, शरीर का भार दायें पांव पर रखते हुए दाहिने अंगूठे से खड़े होना चाहिये। कांख से कुहनी तक का दायां हाथ पृथ्वी से तिरछे ढंग से समानान्तर हो और शरीर की पीठ पर रक्खा हो। कुहनी से कलाई तक के भाग को देह की ओर खींचिये और पृथ्वी के समानान्तर रखिये। दाहिनी हथेली-पृथ्वी की ओर हो और उंगलियां शरीर की ओर सटी हुई फैली हों। चेहरे का रुख ऊपर की ओर हो। कांख से कुहनी तक का बांया हाथ पृथ्वी के बिल्कुल समानान्तर नहीं है, बल्कि कुछ ऊपर उठा हुआ और सामने को फैला हुआ हो कुहनी से कलाई तक का भाग बायें हाथ पर लम्ब हो। बाईं हथेली का अग्रभाग ऊपर की ओर हो उंगलियां एक दूसरे से सटी हुई और फैलती हुई अपनी नोक सामने की ओर किये हों। जैसा चित्र नं० ६ में दिखाया गया है।

शेष सङ्गीत और पावों की ठुमुक के साथ ऊपर कही गति के साथ बायें पाख के निकट आइये।

याद दिलाने के लिये गति फिर से नीचे लिखी जाती है। एकबार अपना शरीर दाहिनी ओर झुकाइये फिर बांई ओर, इसके साथ सङ्गीत और हाथ के हाव भाव भी होते रहे। हाथ का संचालन—चेहरे के सामने से लाते हुये दोनों हाथ पहले ऊपर फिर नीचे लहर की तरह हिलाइये।

हथेलियाँ हमेशा खुली हुई हों और उंगलियाँ सटी हुई हों। तब इनको अगल बगल घुमाइये, दाहिना हाथ दाहिनी ओर और बाँया हाथ बांई ओर। उन्हीं गतों को दोहराइये।

सङ्गीत की गत पहली लाइन फिर से बजाई जायगी और आपको तब आगे स्टेज तक जाना है और पहिली ही लय के अन्दर बायें पाख को लौट आना है संचालन ऊपर लिखे हुये ढङ्ग से होगा।

सङ्गीत की इस गत को बजवाइये।

स	-	सं	-	-	-	-	-	गं	रं	सं	न	ध	प	म	ग
र	स	र	ध	प	-	-	-	ग	स	-	ग	म	प	ध	प
म	ग	प	म	ग	र	स	ऩ	(दोबार)							

कुल दोबार बजाया जायगा और आपको पांव पहले की तरह ठुमुकना होगा, जैसे, १, २, ३, ४, ५, –६- 'सां' पर (६ मात्रा का ठहराव है देखिये) आपको रुकना होगा और पांव का ठुमुकना भी बन्द करदेना होगा। सङ्गीत आगे बढ़ता जायगा और यहां अकस्मात बन्द नहीं होगा जैसा कि पहले होता था।

'सां' पर (जोकि छः मात्रा में है) मुद्रा का ढङ्ग यों होगाः-शरीर दाहिनी ओर थोड़ा सा झुका हुआ, चेहरा दाहिनी ओर मुड़ा हुआ और थोड़ा सा उसी ओर झुका हुआ भी। पांव हमेशा की तरह। दाहिना हाथ दाहिनी ओर ठीक कन्धे से सीधा झुका हुआ और पृथ्वी के समानान्तर हो। हथेली भीतर को खुली हुई हों और कलाई के निकट बल खाती हों। उंगलियां साथ सटी हुई पृथ्वी की ओर नोंक किये हों। कांख से कुहुनी तक का बायां हाथ नीचे की ओर पृथ्वी के समानांतर हो कुहुनी से कलाई तक वाला भाग पृथ्वी के समानांतर, दाहिनी ओर फैली हुई हो। और बांई हथेली बाहर को खुली हों। उंगलियां साथ सटी हुई और ऊपर की ओर नुकीली हो। यह चित्र नं० ७ में दिखाया गया है।

दूसरी १२ मात्राओं के साथ पैरों का ठुमुकना होना चाहिये और मंच के लगभग नृत्य होता रहे। संचालन वैसे ही होगा जैसा पहले बताया गया है, और 'पा' पर (जो कि ४ मात्रा का है) आपको रुकना होगा, और 'सा' पर (६ मात्रा का) दिखायी गयीमुद्रा से ठीक उल्टी मुद्रा का अभिनय करना होगा। हमको इस मुद्रा के वर्णन की आवश्यकता नहीं क्योंकि चित्र नं० ३ से आसानी से समझा जा सकता है।

यह लाइन फिर से बजाई जायगी और आपको उन्हीं मुद्राओं और संचालनों को दुहराना होगा।

आपको याद रखना चाहिये कि इस लाइन के अन्त के साथ ही साथ आप स्टेज के बांये पाख के निकट आजाना चाहिये।

इस अवसर पर सङ्गीत की पहली लय फिर बजाई जायगी और प्रत्येक ८ मात्रा के साथ आपको चक्कर लगाना होगा। फिर चार चक्कर के बाद अर्थात् सङ्गीत की प्रथम लय के बाद आपको दाहिने पाख से छोड़ देना होगा। यहीं नृत्य ख़तम होजायगा।

१, २, ३, ४, के साथ आपको चक्कर लगाना होगा, ५-६-पांव से दर्शकों के सामने ठुमुके जायेंगे। चक्कर लगाते समय दोनों हाथों की अवस्था यों होगी, दोनों हाथ कन्धे से कुहुनी तक पृथ्वी के समानांतर होंगे, और उनको बाहर फैलाते हुये, बांया हाथ बांई ओर और दांया हाथ दाहिनी ओर होगा। कुहुनी से कलाई तक दोनों हाथ हाथों पर लम्ब होंगे, हथेलियां ऊपर को अग्रभाग किये होंगी। दांये हाथ की उंगलियां दांई ओर और बांये हाथ की उंगलियां बांई ओर होंगी। वे सब एक दूसरे में मिली होंगी। जैसा कि चित्र ६ में दिखाया गया है।

५-६-पर दर्शकों के सामने ठुमुकते समय दोनों हाथ अपने चेहरे और सीने से नीचे की ओर खींचिये और तब पहली मुद्रा बनाने के लिये ऊपर ले जाइये। वही संचालन प्रत्येक चक्कर में दिखाया जायगा जैसा कि चित्र नं० ६ में ऊपर बिन्दु रेखाओं से बताया गया है। इस प्रकार नृत्य समाप्त होजाता है, और इन्हीं चक्करों का प्रदर्शन करते हुये मञ्च छोड़ दिया जाता है।

मेरी प्रारम्भिक तालीम के कुछ बोल

(श्री 'महाराज' शम्भूनाथ जी)

आप विश्वविख्यात नटराज महाराज बिन्दादीन के सुयोग्य भतीजे हैं। तथा प्राचीन भारतीय नृत्यकला के स्तम्भ हैं। आपकी मनोमुग्ध गतों को देखकर एक बार फिर व्रिन्दावन के गोपीकृष्ण की याद आजाती है। —सम्पादक

१—सङ्गीत का टुकड़ा

×	२	०	३	×
तत् तत् था तुक	दन दन झिट किट	थो थुड़ं ऽग तक	थुं तक ददि गिन	थेई

२—नटवरी का टुकड़ा

तिगदा ऽतिग दाऽ थेई	तिगदा ऽतिग दाऽ थेई	तिगदा दिगदिग तिगदा दिगदिग	तत् तत् तत् तत्	थेई

३—परन पखावज—☞ किड़ धित् धा घिघि

तिट कता ऽन नग	तिट तक धागि तिट	तक धकि ट,धा ऽन	धा धकि ट,धा ऽन
धा ऽधा ऽन धा	तकि टता धा गिन	धा धागि तिट तक	किड़ धित् धित् कड़धा
तिट धाऽ नधा ऽन	धा कड़धा तिट धाऽ	नधा ऽन धा कड़धा	तिट धाऽ नधा ऽन

४—परन मींडदार (पखावज) 'बढ़ैया' ख़ानदान

	-कड़	धा ऽन धा ऽन	धगि ऽऽ ऽना ऽड़
धा किट तक धुम	किट तक घेघे धित	तां ऽड़ घेघे धित्	तां ऽड़ घेघे धित्
ता ऽड़ धा ऽ	तां ऽड़ धा ऽ	तऽकि ऽटऽ धा ऽ	ता ऽ धा ऽ
घेऽघे ऽतिऽ टऽघे ऽघेऽ	दी ऽ दी ऽ,क्ड़	ना ऽन ता ऽन	ता ऽ ऽ कड़
धा ऽन धा ऽन	धा ऽक्ड़ धा ऽन	धा ऽन धा ऽक्ड़	धा ऽन धा ऽन

कथक नृत्य के आचार्य—

श्री बिन्दादीन जी महाराज

(ले० श्री० अविनाशचन्द्र पाण्डेय 'चातक' बी० ए०)

नटराज श्री महाराज बिन्दादीन जी का प्रादुर्भाव संगीत संसार और विशेषकर शास्त्रीय नृत्यकला में एक चमत्कार मानना चाहिये। यद्यपि इस नर्तन पद्धति का जन्म जिसे पीछे 'कथिक नृत्य' का नाम दिया गया, इनकी पांचवीं पीढ़ी में ही हो चुका था तथापि इस विद्या का इतना मनोहारी सुसंस्कृत और समुन्नतरूप हमें श्री बिन्दा महाराज के ही अथक परिश्रम और लगन के फलस्वरूप देखने को मिलता है।

महाराज बिन्दादीन के पूर्वज इलाहाबाद ज़िले में हंड़िया ग्राम के निवासी थे, और उच्च कथिक ब्राह्मण कुल में जन्मे थे। कोई कोई इनका निवास स्थान हंड़िया न मानकर चिलाबिला ग्राम (जिला इलाहाबाद) मानते हैं। जो हो, चिलाबिला भी हंड़िया के समीप ही है। अतएव हमारे दोनों में से किसी एक को ठीक मानलेने से कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता, किन्तु बहुमत होने से हंड़िया ही मानना अधिक उपयुक्त होगा इनके वंशजों और शिष्यों में एक परम्परा अथवा किम्वदन्ती चली आती है। इन महानुभाव को स्वप्न में श्रीकृष्ण जी का आदेश हुआ था कि तुमको मैं भारतीय नृत्य कला का दान देता हूं और उसके प्रचार और समुन्नत बनाने का भार भी तुम्हारे ऊपर है। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा आदेश और प्रोत्साहन पाकर उन्होंने तुरन्त ही इस विद्या का अध्ययन करके प्रचार करना शुरू कर दिया। इस कथन में सत्यता का अंश कितना है यह नहीं कहा जा सकता, किन्तु इसके आधार पर यह तो मानना ही पड़ेगा कि उनमें कृष्ण की भक्ति का वह अंकुर अवश्य था जिसे हम बिन्दादीन जी में प्रचुर मात्रा में पाते थे। भागवत के नाम से उन्होंने एक ग्रन्थ भी लिखा था जिसका आधार सामवेद बताया जाता है। इसमें इन्होंने कुछ नई बातों की खोज भी की और संगीत के टुकड़े, पिरमिलू के टुकड़े, नटवरी के टुकड़े और लास्य के टुकड़ों का विस्तृत वर्णन दिया है। ये टुकड़े घुँघरू के बोल के हैं, जो एक चतुर नृत्यकार के घुँघरू से निकलने चाहिये! इनकी मृत्यु के पीछे उनके पोते, (बिन्दा महाराज के चाचा) श्री ठाकुरप्रसाद जी इस अमूल्य ग्रन्थ के अधिकारी हुए।

ठाकुरप्रसाद जी वाजिदअलीशाह से पहिले वाले नवाब के अन्तिम दिनो में इलाहाबाद से लखनऊ आये थे और अपनी योग्यता तथा नवाब वाजिदअलीशाह की नृत्यप्रियता के कारण दरबार में बड़ा सम्मान प्राप्त किया था। नवाब के बराबर ही इन्हें आसन मिलता था। नवाब साहब नृत्यकला के तो प्रकाण्ड पण्डित थे ही साथ ही उन्होंने ठाकुरप्रसाद को अपना पूज्य बनाकर अपने विस्तृत ज्ञान में वृद्धि भी की और अपनी सारग्राहिता का परिचय दिया। नवाब साहब ने ठाकुरप्रसाद जी के तीनों पुत्र महाराज बिन्दादीन, भैरँवप्रसाद और कालिकाप्रसाद को उसी समय से वेतन देना प्रारम्भ कर दिया था, जबसे तीनों क्रमशः गर्भ में आते गये। ठाकुरप्रसाद जी ने भी एक नृत्यग्रन्थ लिखा किन्तु दुर्भाग्यवश ये दोनों ग्रन्थ घर में आग लगने से

जल गये और यदि ठाकुरप्रसाद जी ने उन्हें कण्ठस्थ न कर लिया होता और उसमें दिये गये 'काम' को न सीख लिया होता तो एक प्रकार से भारत इस विद्या से शून्य ही होगया होता।

शम्भू जी महाराज के कहे अनुसार सन् १८५७ में इनकी अवस्था १२ वर्ष की थी और उसके बल पर उनका जन्म सन् १८४५ होता है किन्तु नीपू बाबू का कथन है कि इनकी मृत्यु सन् १९१८ में हुई थी और उस समय इनकी अवस्था ८० वर्ष की थी। इस मत को लेते हुए इनकी जन्म-तिथि १८३८ में निर्धारित होती है। ठाकुरप्रसाद जी को सारी शिक्षा दीक्षा श्री बिन्दादीन को मिली। नौ वर्ष की अवस्था से लेकर १२ वर्ष की अवस्था तक ये केवल चार बोलों अर्थात् 'तिग दा दिग दिग' ही का अभ्यास कर सके थे, किन्तु इन्हीं चार बोलों की 'तैयारी' प्रशंसनीय है, जिसका वर्णन हम आगे करेंगे। कहते हैं कि १२वें वर्ष में इन्होंने २४-२४ घन्टे का निरंतर अभ्यास किया था। और उस अभ्यास के समय इन्हें इतना पसीना निकलता था कि इनके शरीर पर मिट्टी लगा देने से वह स्वयं ही धुलकर साफ हो जाता था। १२ वर्ष की ही अवस्था में इन्होंने भारत के प्रसिद्ध पखावजी श्री कोदऊसिंह जी से 'दून' फेकने में मुकाबला वाजिदअली शाह के दरबार में किया था। इसमें कोदऊसिंह पखावज से केवल, 'धुम किट तक' इतना ही 'दून' फेंक सके थे जब कि बिन्दीन जी ने 'धुम किट तक तक, के बोल दून में अपने घुंघरुओं से निकालकर दिखाये थे। कहने का तात्पर्य यह है कि द्रुत लय पर जितने समय में कोदऊसिंह 'धुम किट तक' ये तीन बोल बजाते थे उतने ही समय में बिन्दादीन 'धुम किट तक तक' चार बोल निकालते थे इसलिये बिन्दादीन की लय गति कोदऊसिंह से अधिक मानी गयी और इस मुकाबले में उन्हीं की विजय हुई। कोदऊसिंह भी साधारण कलाकार न थे, कहते हैं इनकी पखावज काफी भारी होते हुये भी बजाते समय हाथों की तीव्रता के कारण पृथ्वी से कई इंच ऊपर उठ जाया करती थी। यह पखावज वही पखावज थी जिसे साधारण एक दो व्यक्ति मिलकर उठा भी नहीं सकते थे। इस कथन से इतना सार तो अवश्य निकलता है कि कोदऊसिंह काफी बलिष्ठ थे और इनकी वादनगति काफी द्रुत थी। इसके कुछ ही मास पश्चात् ग़दर हो जाने पर ठाकुरप्रसाद जी अपने बच्चों और परिवार को लेकर किसी गांव में भाग गये थे। शान्ति होने पर जब ये अपने घर आये तो उस घर में जिसमें ६ पीनस रुपये और अशर्फियां तथा कई भारी भारी हण्डे अमूल्य जवाहिरातों से भरे हुए विद्यमान थे, उन्हें एक तिनका भी न मिला। भूपाल राज्य के नबाब साहब एकबार लखनऊ पधारे थे और इनके गुणों पर रीझ कर वे अपने राज में ले गये थे। कहते हैं वहां से इन्हें क़रीब दस लाख रुपया पुरुस्कार मिला था। महाराज श्रीमान् मैला साहब के यहां से भी इन्हें पांच लाख रुपया और सवालाख रुपये का एक हार पुरुस्कार स्वरूप मिला था। श्रीमान् मैला साहब नैपाल के राजा थे। नैपाल से लौटकर वे अपनी गद्दी में बैठे रहते थे और यदि कोई राजा महाराजा बुलाता तभी कहीं आते जाते थे। इतना मान और धन प्राप्त करके भी इनका जीवन बहुत ही साधारण था। दुपलिया टोपी, अचकन के अतिरिक्त इन्होंने और कुछ नहीं पहिना। इनका रहन सहन ठेठ हिन्दुओं का था, यद्यपि मुसलमान

दरबार में रहने के कारण इन्हें मुसलमानी भाषा और मुसलमानी दरबार नियमों का पालन करना ही पड़ता था। बिन्दा महाराज श्रीकृष्ण के परम भक्त थे और कई घन्टा पूजापाठ में बिताते थे। इसीलिये इन्होंने अपने नृत्यों और ठुमरियों को केवल कृष्ण सम्बन्धी ही रक्खा है। कलकत्ते की गौहर पटने की जोहरा जैसी प्रवीण और प्रसिद्ध गायिका इनकी शिष्या थीं वे इनकी देवतुल्य आराधना करती थीं। इनके घरके पास दूर दूर से आकर गायिकायें शिक्षाप्राप्ति के लिए किराये के मकानों में रहती थीं और केवल इतना भर कहलाने के लिये कि अमुक गायिका या नर्तकी विंदा महाराज की शिष्या है एक ही दिन शिक्षा प्राप्त करके और कईसौ रुपये उनकी भेंट चढ़ाकर अपने जीवन को धन्य समझती थीं। इतने प्रलोभनों में रहकर भी सच्चरित्रता के महान् आदर्श से कभी अपने को उन्होंने च्युत नहीं होने दिया। गुप्त रूप से दान देना उनकी एक प्रकार से प्रकृति सी होगई थी वे वाणी के बहुत मधुर किन्तु दृढ़ थे।

'ओरियन्टल डान्स' के मतावलम्बियों का कथन है कि कथिक नृत्यताल प्रधान है और पैरों के अभ्यास से ही अधिक सम्बन्ध रखता है। उसमें भाव प्रदर्शन की उतनी परिष्कृत मात्रा नहीं रहती जितनी 'ओरियन्टल डान्स' में। किन्तु जिन लोगों ने बिंदादीन जी का नृत्य देखा है, वह इस सम्मति को कभी नहीं मान सकते। वास्तव में 'कथिक नृत्य' ताल और घुंघरुओं का अभ्यास तो है ही, साथ ही भाव प्रदर्शन भी उसमें बहुत ही व्यक्त रूप से आजाता है। भाव-प्रदर्शन में बिन्दादीन जी महाराज किसी भी 'ओरियन्टल डान्स' से ऊँचे ही रहे होंगे। सखियां यशोदा जी के पास कृष्ण का उलहना लेकर आती हैं तो पृथक-पृथक भावों की सर्वांगिनी अभिव्यक्ति अकेले बिन्दादीन ही जितने स्वाभाविक रूप से कर सकते थे वह अन्यत्र दुर्लभ है। इतने कारणों के साथ-साथ यदि इस वंश में कहीं गलेबाजी और सौंदर्य का सम्मिश्रण होता तो यह एक अकथनीय आनन्द का स्रोत ही हो जाता। अपने भाई भैरवप्रसाद की स्मृति में उन्होंने भैरव जी का मेला जिसे 'बड़ा इतवार' भी कहते हैं चलाया था, जो अब भी प्रचलित है। जन्मष्टमी के समय में इनके यहां दो-तीन दिन का उत्सव मनाया जाता था, जिसमें हिन्दू व मुसलमान गायक व नर्तकीगण एकत्रित होती थीं और 'मुजरा' करती थीं।

बिन्दादीन और कालिकाप्रसाद की शिक्षा अच्छन (जगन्नाथ) के पास गई और उन्होंने दोनों भाइयों लुच्चू (बैजनाथ) शम्भूनाथ को शिक्षा दी। अच्छन, लुच्चू और शम्भूनाथ कालिकाप्रसाद के पुत्र थे। जब शम्भू महाराज ८ वर्ष के थे तो बिन्दादीन ने उन्हें अपना शिष्य बनाया और १४ से १८ वर्ष की आयु तक शम्भू महाराज ने उन्हीं से नृत्य सीखा, पीछे जब अच्छनजी नबाव रामपुर के यहां नौकर हो गये तो लुच्चू और शम्भूनाथ महाराज ने वहीं जाकर पखावज के बोलों, गतों के निकासों, और गत भाव के भावों की शिक्षा पाई।

इस प्रकार जो शिक्षा बिन्दा महाराज ने अपने पूर्वजों से पाई थी उसे अपने बच्चों को सिखलाकर उनके लिये आगे का मार्ग उद्घाटित किया। सन् १९१८ में ८० वर्ष की आयु प्राप्त करके बहुमूत्र रोग से पीड़ित श्री बिन्दादीन जी महाराज इस असार

संसार को त्याग, नृत्य कला प्रेमियों के लिये एक अमूल्य निधि सौंप और अपने पीछे अगराय शिष्य शिष्याएँ भक्त और एक वृद्ध पत्नी को बिलखते छोड़कर परलोक सिधारे।

असीम भगवत् भक्ति, सच्चरित्रता, मिष्टवादिता, दृढ़वादिता, असीम सम्पत्ति-विभूति, अपने विस्तृत गुरुत्व, निपुण भावप्रदर्शन और घुँघरू के कलात्मक 'काम'—इन्हीं सब कारणों से इन्होंने सम्पूर्ण भारत में वह ख्याति प्राप्त की जो दूसरों को दुर्लभ है। इसका एक महान् कारण उस समय का संगीतपूर्ण वातावरण और तत्कालीन नवाबों और राजाओं की संगीतप्रियता भी है। उन्होंने जो नृत्यकला की वृद्धि और प्रचार किया है, उनके वंशजों का कर्तव्य है कि उतने ही संलग्नता और सच्चरित्रता के साथ उसको जारी रक्खें।　　(नाद)

संगीत प्रचारिणी सभा, पटना सिटी

इस सभा का मुख्य उद्देश्य है एक अखिल भारतीय सङ्गीत संस्था की स्थापना करना। प्रति वर्ष एक विशाल सङ्गीत सम्मेलन कर, उसमें भारत के कोने कोने से चुने चुने सङ्गीतज्ञों को निमन्त्रित करना और उन्हीं के द्वारा सर्व साधारण में सङ्गीत का प्रचार करना।

इस संस्था पर जिन महानुभावों ने सहानुभूति दिखाई है, उनमें से उल्लेखनीय नाम ये हैं:—

श्रीमान् राजाभैय्या पूछ वाले प्रि० माधव सङ्गीत विद्यालय, ग्वालियर।

श्रीमान् पं० बी० एन० पटवर्धन प्रि० गन्धर्व महाविद्यालय, पूना।

श्रीमान् पं० नारायण राव व्यास गायनाचार्य, बम्बई।

सङ्गीत के इन तीन महारथियों ने कृपा पूर्वक इस संस्था के संरक्षक होना स्वीकार करलिया है इसके सभापति हैं श्री० एस० एन० हैदर सिटी मैजिस्ट्रेट पटना।

स्थानीय सङ्गीत प्रचार के लिये संस्था ने पटना शहर के चौक पर एक सङ्गीत विद्यालय भी खोल दिया है। जिसका कार्य है अपने यहां शिक्षा देना, दूसरे स्थानों पर मास्टर भेजना, तथा आग्रह पर दूसरे स्थान के विद्यार्थियों की निगरानी करना। इसके प्रिन्सिपल हैं गायनाचार्य श्रीमान् पं० मुकुटलाल मिश्र (रङ्ग कवि)।

प्रधानमन्त्री—

प्रो० लल्लूलाल गन्धर्व

म्यूज़िक रिसर्चस्कालर।

रामलीला और स्वांग नाटकों के लिये

❀ शृङ्गार और बाल सामान ❀
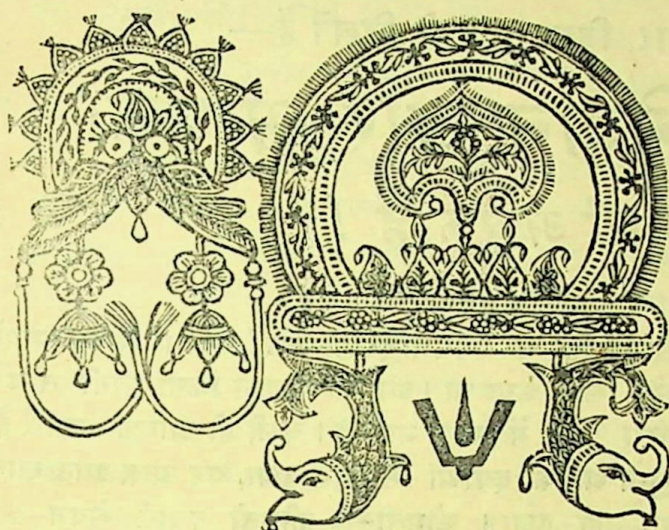
रामलीला का शृङ्गार

एक सैट में यह सामान रहता है।

२ किरीट, २ मुकुट, २ जोड़ी कुण्डल, २ तिलक, २ तेजकिरण १ नथ यानी बेसर, १ चन्द्रिका १ जोड़ी झूमका, ३ बुलाक, ३ फूल माला।

कीमतें इस प्रकार हैं।

नं० १—१२), यही सच्चे काम का ४०) नं० २—१५), यही सच्चे काम का ५०) नं० ३-२०), यही सच्चे काम का ६०) रु०, नं० ४-२०), यही सच्चे काम का ३५) रु० नं० ५ सस्ता सैट जो मामूली मखमल या साटिन के ऊपर बना हुआ होता है और जिसमें तेज किरण फूलमाला बुलाक और तिलक के सिवा बाकी सब चीजें रहती हैं। कीमत ७) रु०

मूंछ नं० ८
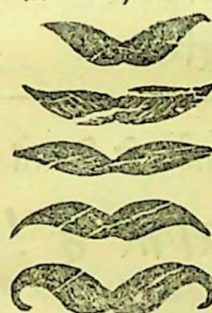
काली, लाल, सफेद, चाहे जिस रङ्गकी और चाहे जिस फैशनकी लीजिये, दाम फी मूंछ =) सस्ती चमरके बाल की -) आना यही बढ़िया कपड़े पर सिली हुई ।=)

गलगुच्छा नम्बर ८

यह गलगुच्छे चित्र के समान बने हुए हैं

दाम काले ।-)

दाम सफेद ।-)

दाम लाल ।-)

जटा नं० २०
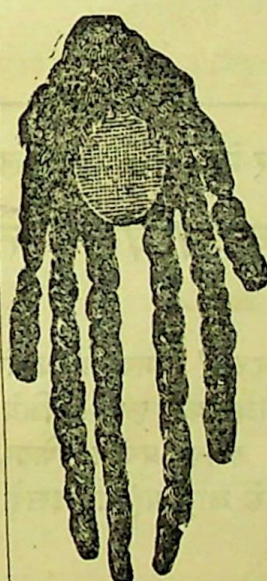
यह जटा मामूली बालों की बनी हुई हैं। शिवजी, मुनी, महात्मा आदि के पार्ट में काम आती हैं।

दाम काली १) रु०

दाम सफेद १) रु०

दाम लाल १) रु०

पूरा हाल जानने के लिये शृङ्गार का सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये।

मिलने का पता—सुख संचारक कम्पनी लिमिटेड, मथुरा।

रूप-बिलास कम्पनी कानपुर की मशहूर दवायें !

भारत सरकार से रजिस्टर्ड

लक्ष्मण धारा

बड़ी मशहूर दवा है, जिसने अपनी खूबी का नक्कारा चारों तरफ बजा रक्खा है। इसे महल से लेकर झोंपड़ी तक में रखना आवश्यकीय है। इसके सेवन से पेट का दर्द, जी-मिचलाना, कफ, खांसी, हैजा, प्लेग, अतीसार, संग्रहणी, सर्व ज्वर, शूल, बदहजमी, चोट, मोच, सूजन, बच्चों के हरे पीले दस्त, बर्र, बिच्छू आदि के डङ्क, कहां तक लिखें, किसी में खाने और किसी में लगाने से स्त्री, पुरुष व बालकों के समस्त रोगों पर तुरन्त असर करने वाली दवा है। कीमत प्रति शीशी ॥), तीन का १।=), ६ का २॥), डाक खर्च अलग। दर्जन का दाम ४॥) डाक खर्च माफ, मनीआर्डर =)

बालको

यदि आप अपने बच्चों को निरोग्य और स्वास्थ्य युक्त देखना चाहते हैं तो बालकों को अवश्य पिलाइये। इसके पीने से बच्चों के हरे पीले दस्त, खाँसी, पसली चलना, खाना हजम न होना, दुबला पन, चूतड़ और जंघों पर सिकुड़न, आंख मोंचना, सर्दी रहना, अधिक रोना, सूखा वायु, ज्वर तथा भीतरी हरारत रहना आदि रोग दूर होकर बच्चा प्रसन्न चित्त हो रात भर सुख की नींद सोता है। दुबले पतले कमज़ोर बच्चों को ताकतवर बनाने की मीठी दवा है, मीठी होने के कारण बच्चा खुशी के साथ चाव से पीता है। की० फी शी० ॥।) डाक खर्च ॥=), तीन का २) डा० ख० अलग।

हर जगह एजेन्टों की जरूरत है।

मँगाने का पता—रूप बिलास कम्पनी नं० ४१२ कानपुर।

सफेद बाल काला !

खिज़ाब से नहीं, हमारे आयुर्वेदिक-केस संजीवनी (सुगन्धित) तैल के सेवन से बालों का पकना रुककर सफेद बाल जड़ से काला हो जाता है जिन्हें विश्वास न हो वे दूना मूल्य वापिस की शर्त लिखालें। मूल्य २) बाल अधिक पक गया हो तो ४) का तैल मंगावें। "कामकला" एक घण्टा पहले एक गोली खालें, घण्टों रुकावट करके अत्यन्त आनन्द देती है। यह शीघ्रपतन, स्वप्नदोष आदि को भी नाश करता है। मू० १६ गोली १)।

पता—संजीवन औषधालय
नं० ६ पो० कतरीसराय (गया)

महात्मा जी का दान अपने जीवन की प्रेमवटी !

मेरे गांव से एक मील दूर ईंट खेड़े पर काठियाबाड़ के एक महात्मा पधारे थे। उनके मुखपर ऐसा तेज था ऐसी शान्ति विराज रही थी कि मेरा हृदय आनन्द से भर आया सर नीचा किये दोनों हाथ जोड़ मैं अपराधी की भांति कोने में खड़ा होगया। मेरा मुँह पीला पड़गया था कुसङ्ग के कारण उत्पन्न हुये प्रमेह और जरियान के रोग ने शरीर को घुन की तरह घोट लिया था, सर उठाने का साहस न होता था प्रारम्भ में सैकड़ों बड़े बड़े डाक्टरों और हकीमों की दवायें की थीं रुपया पानी की तरह बहाया था किन्तु फायदे के नामपर मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा होतीगई वाली कहावत चरितार्थ होती थी मैं अपने किये पर रोता था हाथ मलता था अपनी नादानी के कारण मुझे अपने ऊपर घृणा होती थी। बेटा तुम्हारे दुखी और चिन्तित होने का कारण? बाबा जी के शान्ति एवं गम्भीर स्वरों ने मेरे भावों को ठेस दी। आंखों से आंसुओं की अटूट धारा फूट निकली मानों वर्षों का दुख एकत्र होकर हृदय के किसी कोने में बैठ रहा हो और आज रास्ता पाकर बह निकला हो मेरी यह दशा देखकर महात्मा जी अपने अमृत तुल्य बचनों से मुझे आश्वासन देने लगे और बोले बेटा मनुष्य संसार में दूसरों की भलाई करने के लिये पैदा हुआ है। मुझे बताओ मैं भरसक कुछ उठा न रक्खूंगा, मैंने आवेश में उनके चरण पकड़ लिये टूटे फूटे शब्दों में कहा स्वामिन ! क्या आप से भी कुछ छिपाहुआ है ? इस पर वे मुस्कराये और मुझे एक प्रयोग बतलाने की कृपा की जिसके सेवन से मैं बीस दिन में ही प्रमेह जरियान जैसे भयानक रोग से बिलकुल मुक्त होगया। उस समय से आज तक मैं बिलकुल निरोग्य हूं और परमात्मा की असीम अनुकम्पा से मेरे तीन बच्चे खेलते खाते एवं अत्यन्त हृष्ट पुष्ट हैं प्यारे पाठको ! महात्मा जी के आदेश से अपने बच्चों के हित के लिये अपना कर्तव्य समझ कर जन सर्वहित के नाते से मैं वह प्रयोग ज्यों का त्यों नीचे देता हूं।

त्रिफला का चूर्ण ५ तोला, त्रिकुटा का चूर्ण ५ तोला, सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, बङ्ग भस्म ६ माशा, असली केसर ३ माशा, अकरकरा ६ माशा, नैपाली कस्तूरी ६ रत्ती, इन सब औषधियों को कूट छानकर खरल में डालकर ऊपर से शीतल चीनी का तेल बीस बूंद, और चन्दन का तेल बीस बूंद मिलावे। इसके बाद ताजी ब्राह्मी बूटी के अर्क में बारह घन्टा घोंट कर झरबेरी के बेर के बराबर गोलियां बनाकर छाया में सुखाले बस औषधि तैयार हो गई।
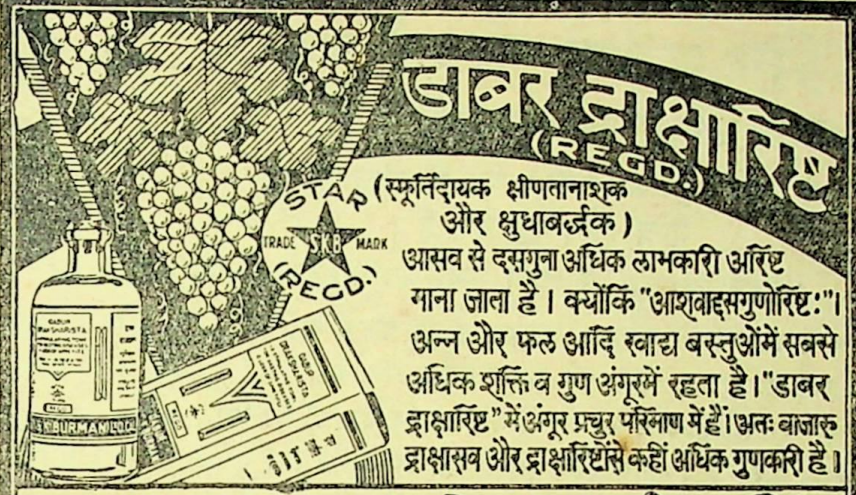
सेवनविधि—एक गोली प्रातः एक गोली सायंकाल गाय के पावभर दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें।

हमने अपने उन बन्धुओं को जिन्हें असली चीजें नहीं मिलतीं अथवा इसे स्वयं बनाने में किसी भी प्रकार असमर्थ हैं अपने आप तैयार करके दाम के दाम में बेचने की व्यवस्था की है यह औषधि वीर्य का पतलापन बीसों प्रकार के प्रमेह पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्यका जाना पाखानेके समय धातु का जाना स्वप्नदोष सुजाक सुस्ती कमजोरी नामर्दी जवानी में बुढ़ापे को सी हालत होजाना असली ताकत की कमी स्मरणशक्ति में कमजोरी पड़जाना वगैरह दूर करके अत्यन्त ताकत देती है। ४० गोली के पैकट का २ रु० आठ आना ८० गोली पूरी खुराक का ३॥) तीन पैकट का ६)छः डा० ३ पैकट तक ॥=)

मँगाने का पताः—बाबू श्यामलाल जी रईस प्रेमवटी आफिस नं० ४१२ कानपुर।